Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

C.NO
3020

0152mN
G0.27

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

0152mN 8398
G0.27
Brahmadeo Shastri
Brahma sarvasya

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

0152mN
G0.27
3617
8398

SHRI JAGADGURU VISHWARADHYA JNANAMANDIR
(LIBRARY)
JANGAMAWADIMATH, VARANASI

Please return this volume on or before the date last stamped
Overdue volume will be charged 1/- per day.

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

306
106
31-6

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

पुराणांक— सम्पादक पं० कन्हैयालाल मिश्र 'प्रभाकर'।

पुराणांक

REGISTEERD NO. A 242

भाग २७] जून, जौलाय, १९३० [संख्या ६-७

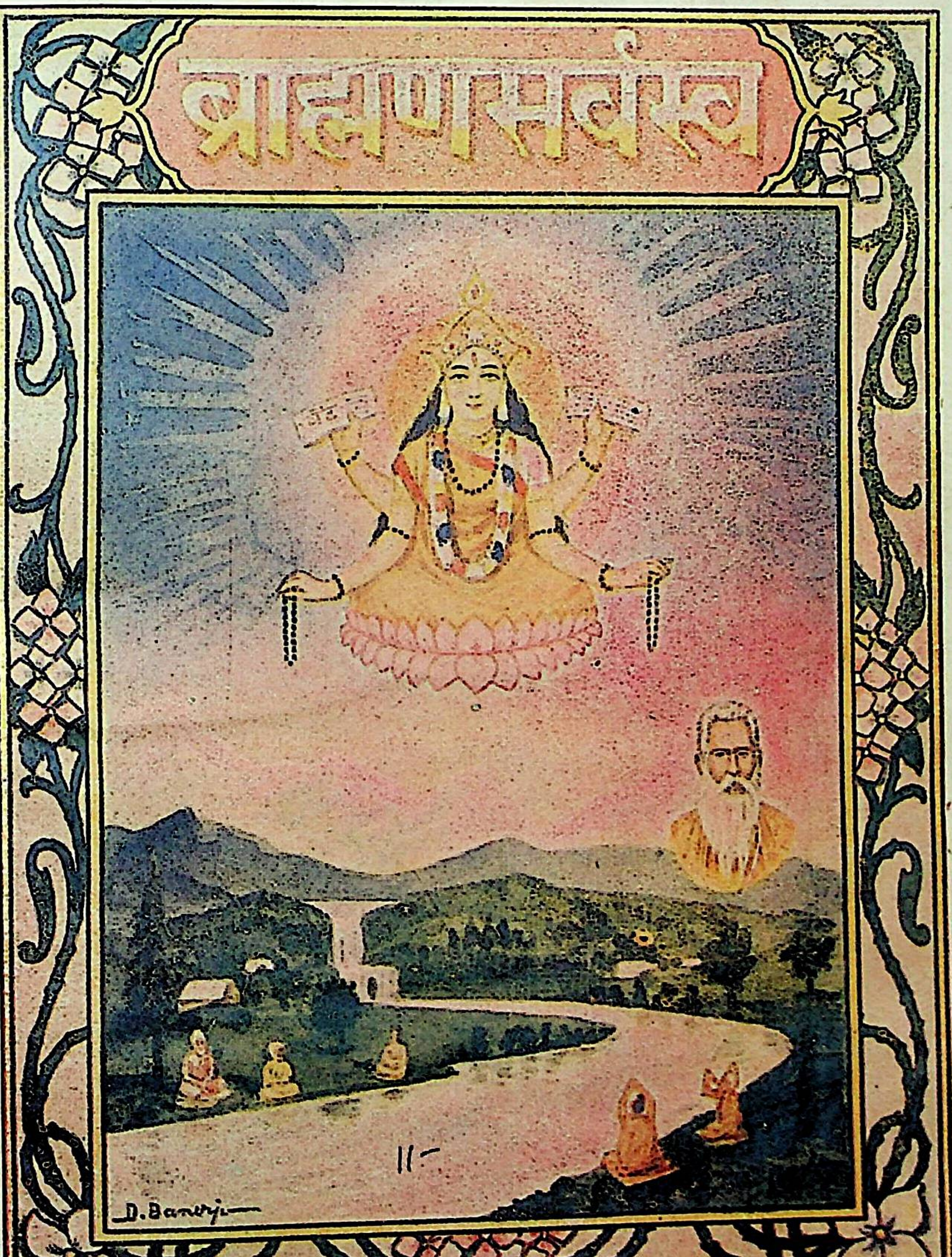

वार्षिक मूल्य ३)

नमूना मुफ़्त

सम्पादक—
श्री ब्रह्मदेव शास्त्री, काव्यतीर्थ।

ब्रह्मप्रेस इटावा से छपकर प्रकाशित।

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

0159 m
0152 m N
G 0.27

SRI JAGADGURU VISHWARADHYA
JNANA SIMHASAN JNANAMANDIR
LIBRARY.
Jangamwadi Math, VARANASI
Acc No 8398

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

विषय-सूची ।

१—श्री व्यासस्तुतिः २२१
२—पुराणों की संख्या और क्रम (श्री म० म० पं० गिरिधर शर्मा चतुर्वेदी) २२२
३—वेदव्यास के प्रति (श्री हरिशरण श्री वात्सल्य मराल) २२७
४—पुराणों की मौलिकता और उनका विकास (श्री पं० माधवाचार्य शास्त्री) ... २२८
५—पुराणों का प्रचार कैसे हो (श्री जहूरबख्श हिन्दी कोविद) २३३
६—भारतप्राण पुराण (श्री पं० हनुमान शर्मा) २४३
७—पुराणों की उपयोगिता (श्री प्रोफेसर रामदास जी गौड़ एम० ए०) २५१
८—पुराणों में सूर्य चन्द्र वंश (पं० रामगोविन्द त्रिवेदी वेदान्त शास्त्री) २५६
९—पुराण और इतिहास (प्रो० श्री लौटूसिंह जी गौतम एम० ए० एल० टी०) ... २७१
१०—पुराणों की गाथा (श्री अवन्तविहारी माथुर "अवन्त") २७४
११—पुराण ही भारतीय इतिहास है (पं० मायादत्त पाण्डेय शास्त्री) २७५
१२—पुराणों का सार मर्म और समन्वय (श्री पं० नन्दकिशोर शुक्ल वाणीभूषण) ... २७६
१३—स्कन्द पुराण का पुरुषोत्तम क्षेत्र (श्री बा० कामताप्रसाद जैन एम० ए०) ... २८३
१४—पुराणों की उपादेयता (श्री पं० रघुवर मिट्ठूलाल श्री वात्सल्य शास्त्री एम० ए० एम० ओ० एल०) २८४
१५—पुराण-महत्व-विवेचन (श्री पं० रामनिवास शर्मा स० सौरभ) २९०
१६—पुराणों की भविष्योक्तियां (श्री पं० नरदेव शास्त्री वेदतीर्थ) २९४
१७—क्या पुराण वेदमूलक नहीं है (श्री पं० रामदत्त जी ज्योतिर्विद्) २९६
१८—पुराणों की पूर्णता (श्री पं० प्रभुदत्त जी ब्रह्मचारी) २९८
१९—शतौदना गौ (श्री पं० गङ्गाप्रसाद अग्निहोत्री) ३०५
२०—पुराणों की विशेषता (श्री पं० बल्देवप्रसाद जी मिश्र बी० ए० एल० एल० बी०) ३०८
२१—पुराणों पर एक दृष्टि (श्री पं० विश्वेश्वर नाथ जी रेऊ साहित्याचार्य) ३१२
२२—श्री गणपति वन्दन (श्री पं० ब्रह्मदत्त शर्मा "शिशु") ३१६
२३—सुनहले स्वप्न (श्री प्रोफेसर रामकुमार जी वर्मा कुमार) ३१६
२४—पग स्पर्श (श्री रामानुजदयालु जी बी० ए० एल० एल० बी०) ३१७
२५—विजय पथ (श्री पं० ब्रह्मदत्त जी शर्मा 'शिशु') ३१७
२६—स्वर्ण संकलन
१—अग्निपुराण में अलङ्कार शास्त्र (श्री पं० बटुकनाथ शर्मा) ३२५
२—पुराण माहात्म्य (आचार्य श्री पं० महावीर प्रसाद जी द्विवेदी) ३३२
२७—पुराण और ब्राह्मण ग्रन्थ (श्री स्वामी नारायणानन्द जी सरस्वती) ३३६
२८—दुलारे दोहावली (श्री पं० दुलारेलाल जी भार्गव) ३४१
२९—विश्वास (श्री पं० पद्मकान्त मालवीय) ३४१
३०—कृष्ण की याद में (श्री गुलाम अनवर साबरी) ३४२
३१—परमलोकोपकारी श्री भगवान् व्यासदेव (श्री पं० भगवत्प्रसाद शुक्ल "सनातन") ३४३
३२—विजय की रात (श्री पं० केदारनाथ मिश्र 'प्रभात' बी० ए०) ३४४
३३—सम्पादकीय ३४५
३४—साहित्य चर्चा ३५५

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

कौन ऐसा है जिसे फायदा नहीं हुआ।

तत्काल गुण दिखाने वाली ४० वर्ष की परीक्षित दवाइयां।

सुधासिंधु

कफ, खांसी, हैजा, दमा, शूल, संग्रहणी, अतिसार, पेट दर्द, कै, दस्त, जाड़े का बुखार (इन्फ्लूएंज़ा) बालकों के हरे पीले दस्त और ऐसे ही पाकाशय की गड़बड़ से उत्पन्न होने वाले रोगों की एकमात्र दवा, इसके सेवन में किसी अनुपान की जरूरत न होने से मुसाफिरी में लोग इसे ही साथ रखते हैं कीमत ॥) आना सब दवा बेचने वालों के पास मिलता है।

बालसुधा

बच्चों को बलवान्, सुन्दर और सुखी बनाने के लिये सुख संचारक कम्पनी मथुरा का मीठा "बालसुधा" पिलाइये यह सब दुकानदारों के पास मिलता है। की० ॥|)

दद्रुगजकेशरी

यदि संसार में बिना जलन और तकलीफ के दाद को खोने वाली कोई दवा है तो यह है। दाद चाहे पुराना हो या नया मामूली हो या पकने वाला इसके लगाने से अच्छा होता है कीमत फी शीशी ।) आना।

द्राक्षासव

शरीर में तत्काल बल बढ़ाने वाला कब्ज, बदहजमी, कमजोरी, खांसी और नींद न आना दूर करता है बुढ़ापे के कारण होने वाले सभी कष्टों से बचाता है पीने में मीठा स्वादिष्ट है कीमत तीन पाव की बोतल २) छोटी १) डाकखर्च जुदा।

मंगाने का पता-"सुखसंचारक" कम्पनी मथुरा।

पं० चन्द्रशेखर वैद्यशास्त्री की बनाई

चन्द्र चटनी

चाखते ही तबियत खुश करने वाली निहायत जायकेदार, भूख बढ़ाने में आसानी, बुखार वगैरः चले जाने के बाद हाज़मा दुरुस्त करने में रामबाण, वैसे ही दिन में कभी २ चाटा कीजिये तबियत खुश रहेगी, दस्त साफ होगा मू० २॥)सेर आध सेर का १।)पावभर का॥≈) छोटे डिब्बे का दाम ।)डा०म० अलग।

मुफ्त सूरत देखते ही चोर ठग नेक बद की पहिचान, कराने वाली 'मनुष्य को पहिचान' नामकी अद्भुत किताब १५आदमियों के पूरे पते आने पर मुफ्त मिलेगी। पते न भेज सकें वे ।-) के टिकिट भेजें

ब्राह्मी औषधालय अलीगढ़

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

॥ श्रीगणेशाय नमः ॥

ब्राह्मणसर्वस्व.

पुराणांक।

सनातनं वेदपथं सुमण्डय—द्वौकनं तद्विमुखञ्च खण्डयत्।
विद्वेषिणो दस्युतरांश्च भर्षयत्—समुद्धयतात्पत्रमिदं प्रगर्जयत्॥

उत्तिष्ठत जाग्रत प्राप्यवरान्निबोधत।

भाग २७	जून, जुलाई सन् १९३० ई०	अङ्क ६-७

व्यास-स्तुतिः।

व्यासं वसिष्ठनप्तारं शक्तेः पौत्रमकल्मषम्।
पराशरात्मजं वन्दे शुकतातं तपोनिधिम्॥

मुने पुराणानि दशाष्टसाद्धांच्छ्रुत्यर्थगर्भाणि सुदुष्कराणि।
कृतानि पद्यद्वयमत्र कर्तुं को नाम शक्नोति सुसङ्गतार्थम्॥

वेदार्णवं व्यातियुतं व्यदधाश्चतुर्धा शाखाप्रभेदनवशादपितान्विभक्तान्।
मंदाः कलौ क्षितिसुरा जनितार एते वेदान् ग्रहीतुमलसा इति चिन्तयित्वा॥

एष्यद्विजानासि भवन्तमर्थं गतं च सर्वं न न वेत्सियत्तत्।
नोचेत्कथं भूतभवद्भविष्यत्कथाप्रबन्धान् रचयेरजानन्॥

आभासयन्नन्तरमङ्गमाध्यं स्थूलं च सूक्ष्मं बहिरन्तरं च।
अपानुदन्भारतशीतरश्मि-रभूदपूर्वो भगवत्पयोधेः॥

वेदाः षडंगा निखिलं च शास्त्रं महान्महाभारतवारिराशिः।
त्वत्तः पुराणानि च संबभूवुः सर्वं त्वदीयं खलु वाङ्मयाख्यम्॥

(शङ्कर दिग्विजय)

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

पुराणों की संख्या और क्रम।

(ले०—म० म० पं० गिरिधरशर्मा चतुर्वेदी जयपुर)

पुराण समस्त विद्याओं के भण्डार हैं। ऐसा कोई विषय नहीं, जिसका विवेचन किसी न किसी रूपमें पुराणोंमें न मिलता हो। वेदका भी रहस्य यदि हमें आज अवगत होसकता है, तो विना पुराणों की सहायताके नहीं होसकता। सनातनधर्मावलम्बियों में आज भी पुराणों का आदर यथेष्ट हैं, किन्तु गुरु परम्परानुसार पुराणों की अध्ययनाध्यापन शैली के चिरकाल से लुप्त होजाने के कारण पुराणों के यथार्थ मर्मवेत्ता आजकल दुर्लभ हैं। केवल व्याकरण के बल पर पुराणों का शब्दार्थ आज लगाया जाता है, फिर पुराणों के कथावाचक तो इतनो भी आवश्यकता नहीं समझते, भाषाटीकाओं के अनुसार कहीं कहीं श्लोकार्थ सुना देना और अधिकांश सुनी सुनाई कथाएं किसी रूप में कहते रहना ही उनकी कर्तव्यता की सीमा है। विद्वान् लोग पुराणों पर कभी विचार ही नहीं करते। पुराणों की यह दुरवस्था अत्यन्त शोकास्पद है, और सनातन धर्म के लिये घातक है। यदि धर्मरक्षा अभीष्ट हो तो पुराणों के मर्मज्ञान के लिये विशेष रूप से आयोजन होना चाहिये। अस्तु इस ओर विद्वद्वर्ग की दृष्टि आकृष्ट करने के लिये ब्राह्मण सर्वस्व का जो विशेषाङ्क 'पुराणाङ्क' के नाम से निकाला जा रहा है उसमें आज हम पुराणों की संख्या और क्रम पर कुछ थोड़ा विचार विद्वान् पाठकों की सेवा में उपस्थित करते हैं।

पुराण अष्टादश हैं। इस अष्टादश संख्या के साथ भगवान् वेदव्यास को कुछ विशेष प्रेम है, ऐसा प्रतीत होता है। देखिये तो ? पुराण अष्टादश, उपपुराण अष्टादश, महाभारत के पर्व अष्टादश, सर्व शास्त्र सारभूत श्री भगवद्गीता के अध्याय अष्टादश, सर्व मौलिभूत श्रीभागवतपुराण की संख्या भी अष्टादश सहस्र—हरएक जगह अष्टादश ही अष्टादश संख्याका साम्राज्य दिखाई देता है। विचारशील पाठक स्वयं अनुमान कर सकेंगे कि ऐसी स्थिति में इस अष्टादश संख्या को यदृच्छा प्राप्त (आकस्मिक) नहीं कहा जा सकता। अवश्य ही इसमें कुछ रहस्य है। साथ ही पुराणों का क्रम भी एक नियत है, जहां कहीं पुराणों का नाम लिया जाता है, उस ही क्रम से लिया जाता है; कभी इधर उधर नहीं होता। इतना ही नहीं, उस क्रम की संख्या के अनुसार पुराणों का नाम प्रसिद्ध है। जैसा कि पञ्चम पुराण कहनेसे भागवत का ही बोध होगा त्रयोदश पुराण स्कन्दपुराण ही कहा जायगा—इत्यादि। दूसरे पुराण इन संख्याओंसे कभी नहीं कहे जाते। इससे यह भी प्रतीत होता है कि इस क्रम का भी कोई कारण अवश्य है। बस, वही संख्या और क्रम का कारण संक्षेपमें यहां लिखा जायगा। प्रथमतः हम वैदिक और दार्शनिक दो प्रक्रियाओं से संख्या का रहस्य संक्षेप में बताते

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

हैं। इनमें यद्यपि वैदिक प्रक्रिया ही प्रधान है, क्योंकि पुराणों का मुख्य सम्बन्ध वेद से ही है, वा यों कहो कि वैदिक सिद्धान्त ही भाषान्तर द्वारा पुराणों में समझाये गये हैं। किन्तु वैदिक प्रक्रिया हम लोगों से इतनी परोक्ष होगई है कि उसका समझना समझाना अत्यन्त कठिन है। वैदिक प्रक्रिया की इन बातों को यदि स्पष्ट करने का प्रयत्न किया जाय तो इतना विस्तार होजाय कि उसके लिये किसी सामयिक पत्र में स्थान मिलना असम्भव हो पड़े। इसलिये यहां इस छोटे से लेखमें हम संकेत मात्र लिखेंगे। इन बातों का विस्तार जानने की जिन्हें रुचि हो वे गुरुवर श्री ६ श्री मधुसूदनजी ओझा का 'ब्रह्मविज्ञान' पढ़ें, वहां उनकी अभिलाषा पूर्ति हो सकती है। अस्तु—

यहां प्रथमतः यह भी जान लेना चाहिये कि पुराणों में यद्यपि पांच विद्याएं प्रधान हैं जैसा कि पुराणों में ही लिखा मिलता है कि—

'सर्गश्च' प्रतिसर्गश्च वंशो मन्वन्तराणि तथा ।
वंशानुचरितं चैव पुराणं पञ्चलक्षणम् ॥

अर्थात् सर्ग (सृष्टि) प्रतिसर्ग (प्रलय) वंश, वंश्यानुचरित और मन्वन्तर ये पांच विद्याएं जहां हों, उसका नाम पुराण है किन्तु इनमें सर्ग अर्थात् सृष्टि ही प्रधान लक्षण है, और चारों सृष्टि के ज्ञान के उपकरणमात्र हैं। इसलिये सृष्टि के अनुसार ही संख्या और क्रम की भी उपपत्ति लिखी जायगी।

(१) शतपथ ब्राह्मण के अष्टम काण्ड में सृष्टि नाम की इष्टकाओं के उपधान की जहां विधि है वहां सत्रह इष्टकाओं के उपधान की उपपत्ति बताते हुए सृष्टि के सत्रह भेद निरूपित हुए हैं। और उन सत्रहों का समन्वय एक मुख्य प्रजापति में बताया गया है यों सृष्टि के अठारह भेद वेद सिद्ध होजाते हैं। उन अठारह भेदों का पूरा विवरण करना और पुराणों से उनका सम्बन्ध स्पष्ट करना एक विस्तृत ग्रन्थ का विषय होगा किन्तु इतना अवश्य कहा जा सकता है कि सृष्टि के अष्टादश भेदों पर दृष्टि रखने के लिये सृष्टि प्रतिपादक ग्रन्थ के अष्टादश भेद होना अत्यावश्यक समझा गया है।

(२) वेद में छन्द से सब सृष्टि मानी गई है। * छन्द यद्यपि गायत्री से लेकर जगती तक सात हैं, किन्तु गायत्री और विराट् ये दो छन्द इस सृष्टि विद्या में प्रधान माने गये हैं, इनही दो में सब सृष्टि का सार निहित है। इनमें गायत्री अष्टाक्षरपादका छन्द है,और विराट् दशाक्षर पाद का। आठ और दश अठारह। यों छन्दः सृष्टि वाद की ओर दृष्टि आकृष्ट करने के लिये भी सृष्टि ग्रन्थों का अष्टादश से सम्बन्ध रखना आवश्यक है।

(३) गायत्री अग्निका छन्द है, और विराट् आदित्यका। ये ही दोनों (अग्नि और आदित्य) सृष्टि के मुख्य कारण हैं। इनसे सृष्टि का सम्बंध बताने के लिये इनके छन्दों से सम्बन्ध रखना चाहिये, और इन छन्दों के ८+१०=१८ अक्षर होते हैं, इस लिये भी सृष्टिप्रतिपादक पुराण अठारह बनाये गये हैं।

* इसका रहस्य गुरुवर श्री ६ मधुसूदन जी ओझा की छन्दः समीक्षा और ब्रह्मविज्ञान के आवरणवाद में देखो।

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

(४) अनन्त आकाश जिसमें कि अनन्त कोटि ब्रह्माण्ड अन्तर्गत हैं, उसे वैदिक परिभाषा में परमाकाश या परम व्योम कहते हैं। एक सूर्य का प्रकाश जितने आकाश में परिव्याप्त रहता है, उस ब्रह्माण्ड परिच्छिन्न आकाश को पुराणाकाश कहा जाता है, और अध्यात्म में प्रत्येक प्राणी के हृदयाकाश को दहराकाश कहते हैं। इन आकाश के तीन भेदों में पुराणाकाश का ही पुराण से सम्बन्ध है यह कहने की आवश्यकता नहीं। पुराणाकाश (ब्रह्माण्ड परिच्छिन्न आकाश) ३६० विभागों (अंशों) में बांटा जाता है यह ज्योतिष शास्त्र के ज्ञाता अच्छी तरह जानते हैं। इनमें दृश्य आकाश में १८० अंश और अदृश्य आकाश में १८० अंश होते हैं। सृष्टि का सम्बन्ध विशेष कर दृश्य आकाश से ही है, उसके १८० अंश हैं दश दश का एक विराट् होता है इस नियम से १८० अंश के पुराणाकाश में १८ ही विराट् हैं। बस पुराणाकाश से संबन्ध बताने के लिये भी पुराणों का १८ होना आवश्यक है।

दार्शनिक प्रक्रिया के अनुसार।

(५) आदि विद्वान् भगवान् कपिल का सांख्य दर्शन सबसे प्राचीन दर्शन है, और पुराणों में सांख्य की प्रक्रिया ही सृष्टि निरूपण में बहुत अंशों में आदृत हुई है यह पुराणों से छिपा नहीं है। सांख्य में २५ तत्त्व माने जाते हैं। मूल प्रकृति १, प्रकृति विकृति ७, (महान्, अहङ्कार, और पांच तन्मात्रायें) केवल विकृति १६ (एकादश इन्द्रिय, पञ्च महाभूत) और प्रकृति भाव से अतीत पुरुष १ यही पच्चीस की गणना है। इन में मूल प्रकृति और पुरुषकी सृष्टि नहीं होती ये दोनों अनादि अनन्त तत्त्व हैं शेष २३ में पञ्च तन्मात्रा का और पञ्चमहाभूतों में पौराणिक प्रक्रिया में प्रायः भेद नहीं माना गया, पञ्च तन्मात्राओं की ही स्थूल अवस्था पञ्च महाभूत हैं। यों इन दोनों को एक कर लेने पर सृज्यमान (जिनकी सृष्टि होती है) तत्त्व १८ ही रह जाते हैं तब सृष्टिप्रतिपादक ग्रन्थोंका अष्टादश संख्या से सम्बन्ध होना तत्त्व संख्या की दृष्टि से उपयुक्त प्रतीत होता है।

(६ अध्यात्म दृष्टिसे सूक्ष्म शरीर ही व्यावहारिक जीव है इसमें कोई सन्देह नहीं। इस ही में पुण्य पाप का संस्कार रहता है, और इसकी ही लोक, परलोक गति होती है। सूक्ष्म शरीर में १७ तत्त्व सांख्य दर्शन में बताये गये हैं दश इन्द्रियां, मन, पञ्चभूतों के सूक्ष्मांश और बुद्धि। यह संसरण काल के सूक्ष्म शरीर का निरूपण है, उस समय अहंभाव अभिव्यक्त नहीं होता, इस लिये अहंकार की गणना इसमें नहीं हुई है। यदि अहंकार वा अहङ्कारास्पद चिदाभास (जीव) की गणना इसमें और कर ली जाय तो सूक्ष्म शरीर के तत्त्व भी अठारह होते हैं। इन अठारह से पाप होना संभव है इसलिये उन सब की निवृत्ति के लिये उत्तम विद्याके ग्रन्थ अठारह बनाये गये हैं ऐसी भी उपपत्ति कई विद्वान् कहा करते हैं।

और भी अष्टादश संख्या के कारण हो सकते हैं किन्तु विस्तार भयसे इस प्रसङ्ग को अब यहीं समाप्त कर पुराणों के क्रम पर विचार करते हैं।

पुराणों का क्रम यह है—१ ब्रह्मपुराण, २ पद्मपु० ३ विष्णुपु० ४ शिव (वायु) पु० ५ भागवतपु० ६ नारदपु० ७ मार्कण्डेयपु० ८ अग्नि पु०

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

६ भविष्यपु० १० ब्रह्मवैवर्त ११ लिङ्गपु० १२ वाराहपु० १३ स्कन्दपु० १४ वामनपु० १५ कूर्मपु० १६ मत्स्यपु० १७ गरुड़ पु० १८ ब्रह्माण्डपुराण। श्री मद्भागवत द्वादश स्कन्ध के तेरहवें अध्याय में यही क्रम वर्णित है, अन्यान्य पुराणों में भी सर्वत्र पुराणों का यही क्रम रक्खा गया है।

इसमें सब से प्रथम इस बात पर दृष्टिपात करना चाहिये कि सब से प्रारम्भ में ब्रह्मपुराण है, मध्य में ब्रह्मवैवर्त्त, और अन्त में ब्रह्माण्ड। यों आदि मध्य अन्त में तीनों जगह ब्रह्म के कीर्तन से जहां परम मंगल संपादित किया है, वहां यह भी स्पष्ट कर दिया है कि ब्रह्म से ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति दिखा देना ही पुराणों का उद्देश्य है मध्य में ब्रह्मवैवर्त रखकर यह स्पष्ट कर दिया कि यह ब्रह्माण्ड ब्रह्म का विवर्त मात्र है मुख्य तत्त्व ब्रह्मही है इसे न भूलना। अस्तु अब सब पुराणों के पूरे क्रम पर विचार कीजिये।

पुराणों में सृष्टि का क्रम यों बताया है कि क्षीर समुद्र में भगवान् विष्णु शयन कर रहे हैं, नारद ऋषि उनके पास खड़े स्तुति पढ़ रहे हैं, उनकी नाभि से एक पद्म निकला है उस पद्म से प्रकट होकर ब्रह्मा जी सब सृष्टि बनाते हैं।

इस प्रक्रिया को पुराण ने आरोह क्रम से लिया है। अर्थात् इस दृश्य सृष्टि के कर्ता ब्रह्मा हैं। इस तत्त्व को प्रथम ब्रह्म पुराण द्वारा प्रकट किया। अब जिज्ञासा होगी कि ब्रह्मा कहांसे प्रकट होते हैं। इस जिज्ञासा को निवृत्त करने के लिये दूसरा 'पद्मपुराण' उपस्थित है कि 'ब्रह्मा पद्म (कमल) से प्रादुर्भूत हैं। पद्म कहां से निकला; इसका समाधान तीसरा विष्णु पुराण करता है विष्णु भगवान् जिस आधार पर उपस्थित हैं। उस तत्व का (शेष शय्या का) निरूपण चौथा वायुपुराण करता है, इसे 'शिवपुराण' भी कहते हैं, किन्तु 'शिवपुराण' नाम का एक उपपुराण भी है, इसलिये भ्रान्ति निवारणार्थ महापुराणों में "वायु पुराण" ही नाम मुख्य रक्खा गया है शेष भगवान्-क्षीर समुद्र में है उस क्षीर समुद्र का तत्त्व बतलाने को पांचवां श्री भागवत उपस्थित होता है। समुद्र का नाम सरस्वान् है, सरस्वान्-विषय जहां प्रधान हो-वह सारस्वत। अतएव श्री भागवत को सारस्वत कल्परूप से आचार्यों ने स्वीकार किया है। अस्तु-क्षीर समुद्र में भगवान् की शय्या के समीप स्थित भगवान् नारद का निरूपण छठे नारद पुराण में किया गया है या ये छह पुराण क्रम से स्थूल से सूक्ष्म की ओर ले जाते हैं, और सृष्टि चित्र के सब तत्त्वों को खोलकर जिज्ञासु जनों को समझा देते हैं। वैज्ञानिक (साइण्टिफिक) प्रक्रिया में 'नारद' से लेकर ब्रह्मा तक सृष्टि का यही क्रम है, किन्तु उसका विस्पष्ट और विस्तृत विवरण छोटे से लेख में हो नहीं सकता। अस्तु सृष्टि के अन्तर्गत (१) साकार पदार्थों का जन्यजनकभाव यहां तक निरूपित हुआ। किन्तु इस सब सृष्टि और इन सब साकार ईश्वरों का मूल तत्व क्या है, जिसकी प्रेरणा वा आज्ञा से ये सब इस चक्र को चला रहे हैं। यह जिज्ञासा अभी निवृत्त नहीं हुई। इस लिये आगे पुराण उस मूल तत्त्व के सम्बन्ध में विवेचक ऋषियों की विप्रतिपत्ति का दिग्दर्शन कराता है। प्रकृति ही मूल तत्त्व है

१-इस क्रम में जो विष्णु, शिव, आदि आये हैं, वे सृष्टि प्रक्रियाके चलाने वाले ईश्वर रूप हैं। परमेश्वर परमतत्त्व, महाविष्णु वा परम शिव का इस प्रक्रिया में अन्तर्भाव नहीं है।

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

ऐसा एक मत है, इसके निदर्शनार्थ सातवां मार्कण्डेय पुराण उपस्थित है, प्राण रूप अग्नि सब का मूल तत्व है। ऐसी दूसरी विप्रतिपत्ति है, इसे स्पष्ट समझाने को आठवां अग्निपुराण है। अग्नि का भी उत्पादक सूर्य है इस लिये सूर्य वा आदित्य मूलतत्व है यह तीसरी विप्रतिपत्ति है इसके निरूपणार्थ नवम भविष्य पुराण है। भविष्यपुराण में सूर्यको ही प्रधान परतत्त्व कहा गया है। यों मूलतत्व के सम्बन्धमें कई विप्रतिपत्तियां दिखाकर पुराण अपनी ओर से (ब्रह्म) का मूल तत्व बताता हुआ "ब्रह्मवैवर्त" दशमपुराण के द्वारा सिद्धान्त को स्पष्ट कर देता है। यों दश पुराण तक के क्रम से सृष्टि का पूर्ण विकास और जगत् का मूलतत्व बता दिया गया है। अब वह मूल तत्व 'ब्रह्म' किस प्रकार पहचाना जाय? वह किन किन रूपों से किस प्रकार सृष्टि का निर्वाह करता है? जीव अपने कल्याण के लिये कैसे उसकी उपासना करे इत्यादि, जिज्ञासायें उपस्थित होती हैं। उन्हें निवृत्त करने का आगे के छह पुराणों में उस परमेश्वर परब्रह्म के अवतारों का निरूपण है। ग्यारहवां लिङ्गपुराण और तेरहवां स्कन्दपुराण भगवान् परमशिव के अवतारों का दिग्दर्शन कराते हैं और १२ वाराह १४ वामन १५ कूर्म और १६ मात्स्य ये चारों भगवान् महाविष्णु के अवतारों का विवरण करते हैं। यद्यपि भगवान् विष्णु के अनन्त अवतारों में चौबीस प्रधान माने गये हैं। उनमें भी दशावतार विशेष रूप से आराध्य हैं, किन्तु सृष्टि प्रक्रिया में इन चार की विशेष रूप से प्रधानता है यह सृष्टि विज्ञान का मनन करने पर ठीक समझ में आ सकता है। अस्तु. अब आगे कर्म, उपासनादि के सम्बन्ध से जीव की विविध गति बताने को सत्रहवां गरुड़ पुराण और उन सब गतियों का आयतन (आधार) बताने को अठारहवां ब्रह्माण्ड पुराण उपस्थित होता है। यों सपरिकर प्रधान विद्या का निरूपण अठारह पुराणों द्वारा हो जाता है—और आगे कोई ज्ञातव्य विषय शेष नहीं रहता। नाम और क्रम के द्वारा जो विषय प्रस्फुट होता है। वह उस उस पुराण का मुख्य प्रतिपाद्य है—और प्रसङ्गागत सब ही विषय तत्तत् पुराण में आते हैं। यदि क्रमके जीवातु भूत इस मुख्यांश पर दृष्टि रखकर पुराणों का मनन किया जाय तो आशा है कि विद्वानों को बहुत लाभ हो।

आज संक्षेप में पुराणों के इस गम्भीर तत्व की ओर विद्वानोंकी दृष्टि आकृष्ट करने का अल्प प्रयत्न किया गया है, आगे कभी अवसर होने पर पौराणिक विज्ञान् के सम्बन्धमें भी कुछ कहने का साहस किया जायगा।

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

वेदव्यास के प्रति !

(लेखक—श्री हरिशरण श्री वात्सल्य 'मराल' वकील, मेरठ)

[१]

समय-स्रोत को बहते बहते,
लेते तेरा नाम अजस्र।
वृद्ध--तपस्वी ! बीत चुके हैं,
यद्पि वर्ष अब पांच सहस्र॥
तदपिं न अब तक शिथिल हुआ है,
तेरा अद्भुत सफल प्रयास।
भारतीय-गौरव की गाथा,
जीवित जगमें 'जय' इतिहास॥

[२]

सुभग शूरता की प्रतिमायें,
वर्चस्वी वलवीर महान।
आँखों के आगे फिरते हैं,
पूर्व पुरुष वह ज्योति निधान॥
उस अतीत के अस्फुट-युग में,
देख अनोखा पुण्य-प्रकाश।
विजित-देश का वन्दीगृह में,
विकसित होता हृदयाकाश॥

[३]

महामुने ! तेरी प्रतिभा का,
पाते पावन सभी प्रसाद।
सुरा-विमुख पी वह मधु-प्याला,
उठता उन्नायक-उन्माद॥
प्रजा प्रजागर हो जाती है,
सिन्धु-ज्वर सम भावावेश।
देने सरस सु-जीवन फिर से,
मन-मानस में करें प्रवेश॥

[४]

महा-समर पश्चात् देखकर,
आर्य्य-जातिको वस म्रियमाण।
दिया वीर-गाथा को तू ने,
अमर-काव्य में अक्षय-त्राण॥
छीन झपट, कुछ जोड़ तोड़ फिर,
बने एक से विविध पुराण।
क्षत विक्षत हो आघातों से,
सिसक रहे जिन में तब प्राण॥

[५]

विजय दुन्दुभी समराङ्गण की,
आहत का अकरुण-आह्वान।
आत्म-निरूपण का दर्पण वह,
गीता का गुण—मय गुरु ज्ञान॥
विश्व-मञ्च पर जग मग करते,
सब तेरे अङ्कित आदर्श।
मरे हुवों की जीवित भाषा,
बोल रही, पा पुण्यस्पर्श॥

[६]

लुप्त चेतना कर सम्प्रति की,
खुलते अन्तर्पट के द्वार।
डूब डूब कर उतराते हैं,
समय-सिन्धु में बारम्बार॥
प्राणी सारे देख देख तव,
रचना-कौशल और विन्यास।
संतत जग में सजग रहेगा,
नाम तुम्हारा, वेद-व्यास॥

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

पुराणों की मौलिकता और उनका विकास ।

(ले० अफ्रीका प्रवासी पं० माधवाचार्य शास्त्री हिन्दी प्रभाकर साहित्य मार्तण्ड कथाभास्कर)

वे (द) आस्तिक हिन्दू जनता का विश्वास है कि-वेद अनादि और नित्य हैं प्रलय के अनन्तर जब २ आदि सृष्टि का पुनर्विकास होता है तब तब वेदों का भी, वेद परमात्मा के स्वाभाविक निश्वासोच्छ्वास रूप हैं।

पूर्वाचार्यों ने स्थान २ पर इस बात का वर्णन किया है। सृष्टि के आदि में ब्रह्मा जी महाराज की सर्व प्रथम उत्पत्ति होती है। जैसा कि अथर्व वेद १६-२२-२१ में कहा है।

भूतानां ब्रह्मा प्रथमोत जज्ञे ।

(अर्थ) (भूतानां) सर्वप्राणियों में (ब्रह्मा) ब्रह्मा जी महाराज (प्रथमः) पहले वा मुख्य (जज्ञे) उत्पन्न हुये।

मुण्डक उपनिषद्व में भी यही बात प्रकट की गई है (यथा)

ब्रह्मा देवानां प्रथमः सम्बभूव ।
विश्वस्य कर्ता भुवनस्य गोप्ता ॥

(अर्थात्) विश्व के रचयिता और भुवन के रक्षक ब्रह्मा जी समस्त देवताओं में प्रथम उत्पन्न हुये।

उन ब्रह्मा जी के चार मुख थे ऋग्वेद (१० ८१-३) में कहा है कि—

विश्वतश्चक्षुरुत विश्वतोमुखः ॥

अर्थात्-ब्रह्मा जी के चारों ओर नेत्र थे और चारों ओर मुख थे।

उन्हीं चारों मुखों से ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, और अथर्ववेद उत्पन्न हुये।

वेद कर्म उपासना और ज्ञान रूप तीन काण्डों में विभक्त हैं। अनादि कालसे गुरु परम्परा द्वारा वे उपदेश रूपेण शिष्य प्रशिष्यों को सुनाये या पढ़ाये गये।

यास्काचार्य्य कहते हैं—

साक्षात्कृतधर्माण ऋषयो बभूवुस्तेऽवरेभ्योऽसाक्षात्कृतधर्मभ्य उपदेशेन मंत्रान्सम्प्रादुः उपदेशेनग्लायन्तोऽवरे ॥ निरुक्त १-२०-२

अर्थात्—

पहिले ऋषि मंत्र द्रष्टा होते थे। इस लिये उन्होंने धर्म का साक्षात्कार किया था अनन्तर इतनी शक्ति न रखने वाले अगले ऋषियों को उन्होंने उपदेश द्वारा मंत्रोपदेश किया। आगे चलकर उपदेश ग्रहण करने की शक्ति भी प्रायः क्षीण हो चली तब वेदाङ्ग निरुक्तादि अन्यान्य शास्त्रों की रचना हुई।

उपर्युक्त निरुक्त प्रमाण से वेदार्थ प्रतिपादक अन्यान्य शास्त्रों की उपयोगिता भलीप्रकार स्पष्ट होजाती है! अब विचारणीय यह है कि "वेदों के साथ पुराणों का क्या सम्बन्ध है इस बात को समझने के लिए निम्न बातें ध्यान में रखनी चाहिये।

प्रत्येक वेदमंत्र का आर्ष ग्रन्थों में विनियोग विहित है। जिसमें, चार बातें बताई जाती हैं

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

पं० रामसेवक त्रिपाठी सम्पादक "माधुरी"

व्याख्यान वाचस्पति, विद्यानिधि,
श्री पं० गणेशदत्त शास्त्री महोपदेशक

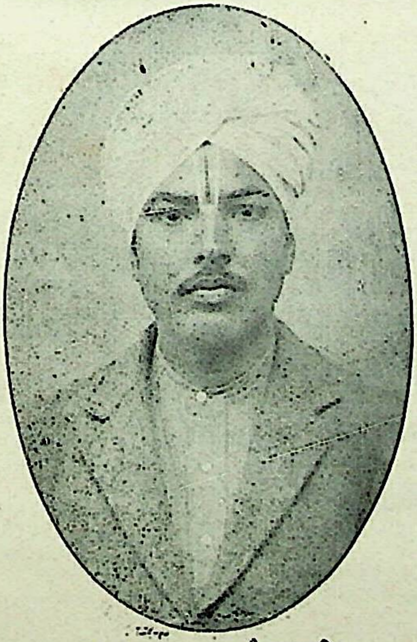

पं० माधवाचार्य शास्त्री,

पं० दुनीचन्द शर्मा अमृतसरी,

ब्रह्मप्रेस इटावा।

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

(१) ऋषि (२) देवता (३) छन्दः और (४) कार्य।

ऋषि—जो मंत्र जिस ऋषि की समाधि में दीख पड़ा वही मन्त्रद्रष्टा व्यक्ति उस मंत्र का ऋषि कहलाता है।

देवता—जिस मंत्र से जिस देवता का सम्बन्ध हो या स्पष्ट रीति से जिसका वर्णन किया गया हो उस मंत्र का वह देवता होता है निरुक्त में इसका वर्णन किया गया है।

छन्दः—गायत्री आदि छन्दों में से जिस मंत्र में जो छन्द हो वही उस मन्त्र का छन्द होता है जो अक्षर या मात्राओंकी संख्या व्यक्त करता है।

कार्य्य—जो मन्त्र जिस कार्य में विनियुक्त हो वही उस मन्त्र का कार्य है।

जब तक ये चार बातें विदित न हो जावें तब तक मन्त्रोपदेश नहीं किया जाता। अतएव मन्त्र से प्रथम ही यह बातें बता दी जाती हैं यज्ञविधान में इन बातों पर विशेष ध्यान दिया जाता है अन्यथाचार से लाभके स्थान में हानि होने की सम्भावना है।

वेद में लिखा है—

यो ह वा अविदितार्षेयच्छन्दो दैवतब्राह्मणेन मन्त्रेण याजयति वाऽध्यापयति वा स्थाणुं वर्च्छति गर्तं वा प्रतिपद्यते॥

आर्षेय ब्राह्मण (१) श्रुतिपंथ।

अर्थ—जो पुरुष ऋषि छन्द देवता और ब्राह्मण आदि के परिज्ञान के विना मन्त्र द्वारा यज्ञ करवाता है अथवा पढ़ाता है वह शाखाहीन सूखे लकड़ में टकर मारता है और गढ़े में गिरता है। यही भाव स्मृतिकारों ने प्रगट किया है यथा—

अविदित्वा ऋषिं छन्दो दैवतं योगमेव च।
योऽध्यापयेद्यजेद्वापि पापीयाञ्जायतेतु सः॥

अर्थात्—जो ऋषि छन्द देवता और विनियोग के विना जाने ही वेद पढ़ाता है अथवा यज्ञ करता है वह पापी है।

स्वामी दयानन्द सरस्वती के अतिरिक्त सभी भाष्यकारों ने इन चार बातों को ध्यान में रखते हुए मन्त्रार्थ किया है स्वामी जी के मन्त्रार्थ में जो असंख्य त्रुटियां रह गई हैं वह केवल विनियोग अवहेलना ही का कुपरिणाम है। अस्तु यह प्रसंगान्तर है। हमें केवल यह बताना है कि यह चार बातें मन्त्रोपदेश से पूर्व जान लेनी आवश्यक हैं प्रायः सभी संहिताओं में मन्त्रोंसे पूर्व विनियोग लिखे हैं। और तो और आर्यसमाज प्रकाशित वैदिक यन्त्रालय अजमेर की संहिताओं में भी ऋषि देवता छन्द आदि मन्त्रोंसे पूर्व छपे हैं। जिससे हमारे कथन की पुष्टि होती है।

गुरु लोग जब मन्त्रोपदेश से प्रथम शिष्य को विनियोग बताया करते थे तो स्वभावतः शिष्यों के हृदयों में ऋषि और देवताओं के विषय में कुछ प्रश्न उपस्थित होते थे। तब गुरु उन ऋषि और देवताओं के विषय में कुछ इतिहास का वर्णन किया करते थे इस प्रकार मन्त्रों के साथ २ प्राचीनतम काल से कुछ ऐसी ऐतिहासिक सामग्री बनती चली आई। जैसे वेदमन्त्रोंको केवल गुरु शिष्य सम्प्रदाय से कहे सुने जाने के कारण "श्रुति" कहा जाता था वैसे ही उस ऐतिहासिक सामग्री को भी पुरातन होने के कारण पुराण कहते थे पुराण शब्दका निर्वचन करते हुए निरुक्तकार इस बात को स्पष्ट करते हैं। यथा—

पुराणं पुरानवं भवति ३-१६-२४

अर्थात्—पुराण उसे कहते हैं जो कभी पहले नया हो आगे चलकर यह सामग्री इतिहास पुराण गाथाओं और नाराशंसी के नाम से पुकारी

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

जाने लगी। तथा वेदार्थ जानने के लिये इतनी उपयोगी हो गई कि ऋषियों ने इसे पांचवें वेद के नाम से प्रसिद्ध किया।

जैसा कि—

इतिहासपुराणाभ्यां वेदं समुपबृंहयेत्।
बिभेत्यल्पश्रुताद्वेदो मामयं प्रहरिष्यति ॥

श्रीमद्भागवत में स्कन्ध १२ के अ० ६ श्लो० ३६ से अ० ७ श्लो० २५ तक यह बात विस्तार के साथ स्पष्ट की गई है। यथा—

क्षीणायुषः क्षीणसत्वान्दुर्मेधान्वीक्ष्यकालतः।
ब्रह्मेशाद्यैर्लोकपालै-र्याचितोधर्मगुप्तये ॥
पराशरात्सत्यवत्या-मंशांशकलया विभुः।
अवतीर्णोमहाभाग वेदं चक्रे चतुर्विधम् ॥

अर्थात्–कलिकाल के प्रभाव से मनुष्यों को क्षीणायु निर्बल और दुर्बुद्धि जानकर ब्रह्मादि लोकपालों की प्रार्थना पर धर्मरक्षा के लिये महर्षि पराशर द्वारा सत्यवती में भगवान् ने अंशांश कला रूप से अवतार धारण करके वेदों को चार भागों में विभक्त किया।

इसके बाद पैल वैशंपायन जैमिनि और सुमन्तु नामक मुख्य शिष्योंको एक २ संहिता का भार सौंपा इन चारों महर्षियों ने भी अपनी २ संहिताओं को शाखा प्रशाखा रूप से कई भागों में विभक्त करके भिन्न २ शिष्यों को प्रदान किया।

(१) इतिहास और पुराण से वेदार्थ प्रवृद्ध करना चाहिये क्योंकि अल्पश्रुत पुरुष से वेद भयभीत होता है, यह अल्पज्ञ मुझे हनन करेगा।

(तथा)

इतिहासपुराणं पञ्चमं वेदानां वेदम्
छान्दोग्य ७ १-२

अर्थ–इतिहास और पुराण वेदों का पाँचवां वेद है।

इस प्रकार सृष्टि के विकाश काल से लेकर द्वापर के अन्त तक वेद और पुराण साथ २ गुरु शिष्य सम्प्रदाय से उपदिष्ट होते चले आये। जब द्वापर के अन्त में भावी कराल कलिकाल से वेदों की संरक्षा के लिये भगवान् कृष्णद्वैपायन ने अवतार धारण किया तो वेदों को शाखा प्रशाखाओं में विभक्त करके भिन्न २ शिष्यों में बांट दिया इसीलिये आपका यौगिक नाम 'वेदव्यास' अर्थात् वेदों का विस्तार करने वाला प्रसिद्ध हुआ। कभी वह समय था जब कि एकही पुरुष समस्त वेद को कंठस्थ करके चतुर्वेदी कहलाता था। समय पाकर क्रमशः त्रिवेदी द्विवेदी और एक वेदी होने लगे बुद्धिमान्द्य के कारण जब एक वेद का पढ़ना पढ़ाना भी कठिन हो चला। और मनु महाराज के–

वेदानधीत्य वेदौवा वेदं वापि यथाक्रमम्।

वचन का अनुसरण सर्वथा बन्द होने लगा तब वेदव्यास जी ने वेदत्रयी को ११३१ शाखाओं में विभक्त किया और एक २ शिष्य को एक २ शाखा की संरक्षा का भार सौंपा।

व्याकरण के परम प्रसिद्ध ग्रंथ पातञ्जल महाभाष्य के पस्पशान्हिक में इस बात का विशद वर्णन मिलता है। (यथा)

एकशतमध्वर्युशाखाः सहस्रवर्त्मा सामवेदः।
एकविंशतिधाबाह्वृच्यन्नवधा आथर्वणोवेदः ॥

अर्थात्–यजुर्वेद की १०१ शाखा सामवेद की १००० शाखा हैं ऋग्वेद की २१ शाखा अथर्ववेद की ९ शाखा हैं (१०१–१०००–२१–९ = ११३१)

इस प्रकार द्वापर के अन्त में वेदों का नवीन रूप से संकलन हुआ मंत्रों के साथ जो ऐतिहा-

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

लिक सामग्री पुरातन काल से चली आती थी उसे भी सुरक्षित रखने के लिये दो हिस्सों में विभक्त किया गया है जो नाराशंसी-आख्यायिका गाथा पुराकल्प और जनश्रुति नामक केवल ऐतिहासिक सामग्री थी उसे ग्रंथरूप में परिणत किया गया और उस समय के प्रसिद्ध २ राजाओं का इतिहास साथ मिलाकर एक लक्ष श्लोकों का बृहत्कलेवर ग्रन्थ बना दिया जिसका नाम "महाभारत" हुआ। भगवान् व्यासजी ने महाभारत नाम रखने का कारण बताते हुए जो निर्वचन किया है वह इस बात का सूचक है। (यथा)

महत्वाद् भारतत्वाच्च महाभारतमुच्यते।

अर्थात्-भारतवर्ष का महत्व पूर्ण ग्रन्थ होने के कारण ही महाभारत कहा जाता है।

अथवा-भारत वंशजों का महत्वपूर्ण इतिहास होने के कारण इसे महाभारत कहा जाता है। शेष सामग्री को पुराण नामसे पुकारा गया और इसे फिर सात्विक-राजस-तामस तीन प्रकारके भावों में विभक्त किया गया। प्रत्येक भाग को सर्वाङ्गीण बनाने के लिये छः २ हिस्सों में विभक्त किया। इस प्रकार अष्टादश पुराणों का संकलन हुआ यह समन्वय श्रीमद्भागवत रेवामाहात्म्य पद्मपुराण में इस प्रकार किया है।

पुराणमेकमेवासीदस्मिन्कल्पान्तरे नृप!।
त्रिवर्गसाधनं पुण्यं शतकोटिप्रविस्तरम्॥
स्मृत्वा जगाद च मुनीन् प्रतिदेवश्चतुर्मुखः।
प्रवृत्तिः सर्वशास्त्राणां पुराणस्याऽभवत्तदा॥
कालेनाग्रहणं दृष्ट्वा पुराणस्य ततो नृप!।
व्यासरूपं विभुं कृत्वा संहरेत्स युगेयुगे॥
चतुर्लक्षप्रमाणेन द्वापरे द्वापरे सदा।
तदष्टादशधाकृत्वा भूर्लोकेऽस्मिन् प्रभाषते॥

अर्थ-हे राजन्! कल्पान्तरमें पहिले एकही पुराण था। और अर्थ धर्म काम का साधक वह सौ कोटि विस्तार वाला था। उसको स्मरण करके ब्रह्माजी ने मुनियोंके प्रति कथन किया तब सब शास्त्रों और पुराणों की प्रवृत्ति हुई। जब देखा कि इतने बड़े ग्रंथ को लोग कैसे जान सकेंगे अतः भगवान् व्यास रूप धारण करके प्रत्येक द्वापर के अन्त में उसे संक्षिप्त करते हैं। केवल चार लक्ष श्लोकों में अष्टादश पुराणों का संकलन करके भूलोक में कथन करते हैं।

निष्कर्ष यह हुआः—

ब्रह्मा जी ने सृष्टि के आरम्भ में जब ऋषियों के प्रति वेद कथन किये। या ज्ञानरूपेण उनके हृदय में उद्भावित किये तो मन्त्रोपदेशसे प्रथम ही विनियोग आवश्यक हुए। विनियोग की स्पष्टता के लिये जो कथन प्रथम किया गया, आगे चलकर वही पुराणरूप में परिणत होगया अतएव रेवाखण्ड में कहा है।

अष्टादशपुराणानां वक्ता सत्यवतीसुतः।

अर्थः-सत्यवती के पुत्र व्यास जी अष्टादश पुराणों के वक्ता हैं। यहां "वक्ता" शब्द से यह स्पष्ट होजाता है कि-व्यास जी ने पुराणों का केवल संग्रहात्मक संकलन ही किया मौलिक सामग्री तो उनकी इतनी प्राचीन है कि वह वैदिक काल में भी विद्यमान थी जो मंत्रोपदेश से पूर्व विनियोग की स्पष्टता के लिये शिष्यों को बताई जाती थी।

ब्रह्माण्डपुराण में भी लिखा है कि—

पुराणं सर्वशास्त्राणां प्रथमं ब्रह्मणा स्मृतम्।
अनन्तरं च वक्त्रेभ्यो वेदास्तस्य विनिर्गताः॥

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

अर्थ-ब्रह्माजी ने सब शास्त्रों से प्रथम पुराण प्रगट किये। पीछे उनके मुख से वेद प्रगट हुए।

यहां यह शंका नहीं की जा सकती कि "तब तो पुराण वेदों से अधिक मान्य होने चाहिये" क्योंकि वे पहले के हैं प्रामाणिकता में पूर्वापर निर्माण कारण नहीं होसकता। प्रथम तो वेदों का कोई निर्माण समय ही नहीं क्योंकि–

अनादिनिधना नित्या वागुत्सृष्टा स्वयम्भुवा॥

अर्थात्–ब्रह्माजी से अनादि अनन्त अतएव नित्य वाणी वेद का प्रादुर्भाव हुआ।

फिर प्रामाणिकता के विषयमें न्यायदर्शन के (समारोपणादात्मन्यप्रतिषेधः) सूत्र पर वात्स्यायन भाष्य में लिखा है कि–यथाविषयं प्रामाण्यम्।

अर्थात्–श्रुति स्मृति पुराण आदि अपने २ विषय में प्रमाण हैं। यज्ञ विषय में मन्त्र और ब्राह्मण प्रमाण हैं लोकवृत्त में इतिहास और पुराण प्रमाण है। और लोक मर्यादा की व्यवस्था में धर्मशास्त्र प्रमाण है।

इन्द्रियादिवत्।

अर्थात्–कान आंख नासिका आदि इन्द्रियों की तरह।

तात्पर्य्य-यह कि जैसे रूप के देखने में नेत्र प्रमाण हैं और शब्द के सुनने में श्रोत्र इन्द्रिय प्रमाण हैं, इसी प्रकार अन्यान्य इन्द्रियां अपने २ विषय में प्रमाण हैं। कोई भी इन्द्रिय दूसरी इन्द्रिय के विषय में प्रमाण नहीं होसकती। ठीक इसी प्रकार श्रुति स्मृति और पुराण अपने अपने विषय में प्रमाण हैं। इससे स्पष्ट है कि पुराणों की प्रामाणिकता वेदों की प्रामाणिकता में बाधक नहीं हो सकती।

रहा पूर्वापर उत्पत्ति का समन्वय, सो यह एकरूप होने के कारण "बीजांकुर न्याय" से स्पष्ट होता है। अंकुर से बीज की उत्पत्ति होती है। और बीज से अंकुर बनता है यहां एक के बिना दूसरे का उत्पन्न होना असम्भव है। परन्तु प्रथम कौन उत्पन्न हुआ यह निर्धारित करना जरा कठिन सी समस्या है। इसी प्रकार वेदों को समझने के लिये पुराणों की आवश्यकता है और पुराणों के आधार के लिये वेदों की आवश्यकता है वेद प्रकाशनिधि सूर्य हैं तो पुराण उस प्रकाश को ग्रहण करने वाले नेत्रों के समान हैं वह अमूल्य रत्नों का भण्डार है तो पुराण उसके उद्घाटन की कुंजी है।

इस अध्याय का सारांश यह है कि जिस समय ऋषिजनों ने अपने शिष्यों को मंत्रोपदेश करना आरम्भ किया था उस समय मंत्रोपदेश से पूर्व विनियोग अवश्य बताया था। विनियोग में ऋषियों और देवताओं के नाम आते हैं। जब शिष्यों की ओर से उन ऋषियों और देवताओं के चरित्र जानने के लिये प्रश्न होने लगे तो उपदेष्टा गुरुजन उन २ ऋषियों और देवताओं के यथाश्रुत अथवा समाधिलब्ध चरितों को बता कर शिष्यों का समाधान करने लगे।

द्वापर के अन्त तक इसी प्रकार गुरु परम्परा द्वारा वेदोंका उपदेश होता रहा और साथ२ ऋषियों और देवताओं के चारु चरित भी कहे सुने जाते रहे। जब वेदव्यास जी ने वेद रक्षाके लिये गुरुपरम्पराश्रुत वेदों को कई भागों में विभक्त करके ग्रंथ रूपके ग्रंथन किया और उन्हें भिन्न २ पैलादि शिष्यों को पढ़ाया।

इस प्रकार पुराणों का उपदेश काल यही है

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

जो कि वेदों का और ग्रन्थ रूप में निबद्ध होने का समय भी वही है जो कि वेदों का। पुराणों के वक्ता वह ऋषिजन हैं जो वेदमंत्रों के द्रष्टा और उपदेष्टा थे। इन्हें पुस्तकाकार ग्रन्थन करने वाले भी वही महर्षि व्यास हैं जिन्होंने कि वेदों का संकलन किया था। यही वेद और पुराणोंका सम्बन्ध है। इस परम्परा का मनन करने से यह बात स्पष्ट हो जाती है पुराणों का अध्ययन किये बिना वेदज्ञान कठिनाई नहीं किंतु सर्वदा असम्भव है। क्योंकि मंत्रार्थज्ञान के लिये विनियोग ज्ञान आवश्यक है और विनियोग वर्णित ऋषियों और देवताओं का चरित जानने के लिये पुराणों का स्वाध्याय आवश्यक है। हमारे पास पुराण ग्रन्थ ही एक मात्र साधन हैं जिनसे कि हम ऋषियों और देवताओं के विषय में सर्वतोमुख ज्ञान प्राप्त कर सकते हैं। क्या हम आशा करें कि "वेदानुयायी" होने का दावा रखने वाले सज्जन अपने पुराण विषयक भ्रम को दूर करके पुराणों की उपयोगिता स्वीकार करेंगे।

अप्रकाशित "पुराणादर्शन" ग्रन्थसे संकलित।

(खास 'पुराणाङ्क' के लिये)

पुराणों का प्रचार कैसे हो ?

(ले०—अध्यापक श्री जहूरबख्श हिन्दी कोविद सागर)

बन्धुवर श्री जहूरबख्श जी का यह लेख 'ऐतिहासिक' है। बात यह हुई कि आपकी कुछ सामाजिक गल्पों के कारण 'जाति पांति-तोड़क-मण्डल' के मन्त्री सन्तराम जी B. A. ने आप पर यह अभियोग लगाया कि 'आप हिन्दी-सेवा के बहाने हिन्दू महिलाओं में इस्लाम का प्रचार कर रहे हैं'। आपने 'चांद' में इसका तड़पता हुआ-वेदना-पूर्ण-प्रतिवाद किया और यह निर्णय किया कि मैं भविष्य में हिन्दी लिखने का कभी विचार न करूंगा। आपका यह निर्णय निराशा, मानसिक आघात एवं स्वाभाविकता से समन्वित होने पर भी हमारी दृष्टि में न्याय, विवेक एवं कर्तव्यता से शून्य था। हमने आपको एक पत्र लिखा और उसमें आपसे हमने ३ प्रश्न किये।

१—क्या एक पुत्र के अनुचित व्यङ्ग या आक्षेप करने पर किसी सुपुत्र का यह धर्म है कि वह जननी की सेवा से विरत हो जाय ?

२—क्या एक सदस्य के व्यक्तिगत अभियोग पर आपको समस्त हिन्दी-संसार से विमुख होने का अधिकार है ?

३—क्या किसी व्यक्ति के यह कहने पर कि 'आपका जीवन संसार में व्यर्थ है !। आप आत्महत्या के लिये प्रस्तुत हैं ?

यदि इन प्रश्नों का उत्तर 'हां' है, तो आपका निर्णय ठीक है और यदि 'नहीं' है, तो आप एकबार शान्त चित्त से अपने इस निर्णय पर फिर विचार करें।

प्रसन्नता की बात है कि आपकी आत्मा ने इन प्रश्नों का उत्तर 'न' में दिया। फलतः आपको अपना निर्णय बदलना पड़ा। निर्णयपरिवर्तन के अनन्तर लिखा हुआ आपका यह सर्व प्रथम लेख है।

—सम्पादक।

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

भारत में पाश्चात्य सभ्यता का प्रचार क्या हुआ, भारत की मौलिक संस्कृति एक बार ही जर्जरीभूत हो गई । पाश्चात्य सभ्यता की मोहकता एवं चमक दमक ने भारत-वासियों को विवेक-विहीन एवं क्षीण दृष्टि कर दिया । उन्हें अपनी प्राचीनता से विरक्ति होगई । प्राचीन विद्याओं और कलाओं पर घृणा प्रकट की जाने लगी । उनमें भारत के आधुनिक सपूतों को अपने पूर्वजों की अधिक से अधिक मूर्खता दिखाई देने लगी । इतना ही नहीं कटु आलोचनाओं द्वारा उस 'महान् मूर्खता'का पर्दाफाश भी किया जाने लगा । और तो और आलोचना के इस कठोर शस्त्र से भारत का सनातन हिन्दू-धर्म भी सुरक्षित न रह सका । कल के पैदा हुये आर्यसमाज नामक एक अबोध बच्चे ने तो भारत की प्राचीन विद्याओं कलाओं एवं सनातन हिन्दू धर्म को रात दिन कोसने का ठेका ले लिया । उसने धर्मशास्त्रों विशेष कर पुराणों की अत्यन्त अविचार पूर्ण एवं निर्मम आलोचनायें कीं । इन हृदयहीन आलोचनाओं का प्रभाव भारत के और विशेषतया हिन्दू समाज के लिये अत्यन्त भयावह हुआ । ऐसे लोगों की जो या तो अखबारी दुनियां में रहते हैं या जिन्हों ने थोड़ी बहुत अंगरेजी पढ़ ली है, अपने धर्म या धर्म ग्रन्थों पर श्रद्धा नहीं रह सकी । परिणाम स्वरूप उनका हृदय धर्मभावनाओं से शून्य हो गया, और वे अधर्म का पोषण करने में तत्पर हो गये । वास्तव में धर्म ग्रंथों की तीक्ष्ण आलोचना द्वारा एवं उनमें नवीन नवीन काल्पनिक दोषों की उद्भावनासे भारतकी बहुत बड़ी क्षति हुई है ।

परन्तु इस दुःख में यदि कोई सन्तोष की बात है तो यही कि जहां दुष्टबुद्धि लोग धर्म ग्रन्थों को ठुकराते सङ्कोच नहीं करते, वहां ऐसे सज्जनों का भी अभाव नहीं है, जो उन्हें अपनी अक्षय निधि समझते हैं उन पर हार्दिक श्रद्धा रखते हैं उनकी रक्षा करनेमें पश्चात्पद भी नहीं रहते । परन्तु इस श्रद्धालु सम्प्रदाय द्वारा एक बड़ी त्रुटि हुई है, ऐसी त्रुटि हुई है, जो सर्वथा अक्षम्य है । इस सम्प्रदाय ने भारत की मौलिकताके उस विराट् भाण्डार से जनता को परिचित कराने की कोई सुन्दर चेष्टा की ही नहीं । और यह कहते हुये हमें अत्यन्त परिताप होता है, कि इस नास्तिकता के युग में ऐसे लोगों का अभाव नहीं है, जो श्रीराम और श्रीकृष्ण की पूरी पूरी कथायें भी नहीं जानते । इन लोगों में वे तो हैं ही जो धार्मिक ग्रन्थों की निन्दा करना अपना पैदायशी अधिकार समझते हैं । वे भी हैं, जो अपने को सनातनधर्मी कहने में गौरव का अनुभव करते हैं जो धार्मिक ग्रन्थों पर अनन्य श्रद्धा रखते हैं वास्तव में उस जाति के लिये यह अत्यन्त लज्जा का विषय है जिसके बच्चे अपने धार्मिक तत्वों से अपरिचित हैं और अपने पूर्व पुरुषों के सम्बन्ध में रुपये में पाई भर का भी ज्ञान नहीं रखते जो हिन्दू अपने को रामकृष्ण की औलाद कहता है परन्तु उसके सम्बन्ध में जानता समझता कुछ नहीं, उसकी इस हिमाकत पर किस समझदार व्यक्ति की आत्मा क्षोभ से उद्वेलित न हो उठेगी । ऐसी शोचनीय स्थिति में इस बात की बड़ी ही आवश्यकता है कि हिन्दू समाज अपने धार्मिक ग्रन्थों का प्रचार करने में अधिक से अ-

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

धिक तत्परता का परिचय देने के लिये अग्रसर हो।

इसी सत्कामना से प्रेरित होकर हम इस लेख में इस प्रश्न पर विचार करने की चेष्टा करेंगे कि किन किन उपायों का आश्रय लेकर पुराणों का देशव्यापी प्रचार किया जा सकता है। इसका कारण यह है कि हिन्दुओं के धार्मिक ग्रंथों में पुराणों की प्रधानता है। वे धार्मिक तत्वों से ओत प्रोत तो हैं ही साथ ही उनमें ऐसी ऐसी नीति कथाओं की बहुलता है, जिनका अध्ययन एवं मनन मानव-जीवन को बहुत ऊंचा उठा सकता है। सच तो यह है,कि 'पुराण' भारत के अतीत गौरव की ऐसी मञ्जूषा है जिसका मूल्य आँका जाना सम्भव नहीं। पूर्व-कालमें भारत में मानव जीवन के आदर्श क्या थे, भारत में उन दिनों धार्मिक व्यवस्था कैसी थी, उस युग में भारत के सामाजिक जीवन का विकास किस प्रकार हुआ था, यहां की शासन व्यवस्था कैसी थी, राजा और प्रजा के पारस्परिक सम्बन्ध कैसे थे, भारतवासियोंमें किन किन विद्याओं और कलाओं का प्रचार था, तथा उनके क्या क्या स्वरूप थे, आदि आदि बातें जानने की जिन्हें आकांक्षा हो, उन्हें पुराणों के पन्ने उलटने चाहिये। पुराण ज्ञान के अक्षय भाण्डार हैं, और ज्ञान के उस अक्षय भाण्डार से मानव समाज का अशेष कल्याण हो सकता है। अतः पुराणों का जितना ही प्रचार होगा, भारत और विशेषतया हिन्दू समाज उससे उतना ही लाभान्वित होगा। अस्तुः—

पुराणों की रचना उस काल में हुई थी; जब भारतमें संस्कृत का अत्यधिक प्रचार था या वह जन साधारण की भाषा थी। अतः उनकी रचना संस्कृत में ही की गई थी। परन्तु अब वह बात नहीं। अब देश में न संस्कृतज्ञ पण्डितों का बाहुल्य है और न संस्कृत के ग्रन्थोंका प्रचार ही हो सकता है। जैसी परिस्थिति है उसे देखते यह आशा करना व्यर्थ है कि एक बार पुनः इस देशमें संस्कृत का अभ्युदय होगा। अतः अब तो युक्तिसङ्गत साधन यही है कि हम अपने धर्म ग्रन्थों का प्रचार करने के लिये धर्म की ओर जन साधारण की साई हुई श्रद्धा जागृत करने के लिये राष्ट्रभाषा हिन्दी की ही शरण लें। यद्यपि इस दिशा में कुछ प्रयत्न किया भी गया हैं पर उससे जैसा चाहिये वैसा लाभ नहीं हुआ। इसके प्रधान कारण दो हैं-एक तो इन ग्रंथों के अनुवादों में आकर्षण नहीं है उनकी लेखन शैली भी लचर है दूसरे उनका मूल्य भी इतना अधिक है कि सर्वसाधारण उन्हें सरलता पूर्वक क्रय नहीं कर सकते। भला नास्तिकता के इस युग में शिथिल लेखन प्रणाली से युक्त धार्मिक ग्रंथों को कौन पढ़ना चाहेगा और वह भी बहु मूल्य देकर। अस्तु—

यद्यपि कुछ धार्मिक ग्रन्थोंके हिन्दी अनुवाद होगये हैं, परन्तु अठारहों पुराणों के भी हिन्दी अनुवाद हुए हैं यह हमें नहीं मालुम इस समय मेरे सामने कई बड़े २ प्रकाशकों के सूचीपत्र हैं। वे भी इस बात का पता नहीं देते कि हिन्दी संसार में अठारहों पुराणों के अनुवाद विद्यमान हैं या नहीं। यदि हों भी-कहीं से प्रकाशित हुए भीं हों तो-हमें विदित नहीं। परन्तु इस बात से कोई इन्कार नहीं कर सकता कि पुराणों का

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

हिन्दी रूपान्तर होने की आवश्यकता है और वह आवश्यकता पूर्ण होनी चाहिये। परन्तु इस आवश्यकता की पूर्ति करते समय इस ओर अवश्य ध्यान रहे कि उसका प्रचार अधिक से अधिक होसके। यदि केवल स्वार्थ बुद्धि की प्रेरणा से ही यह कार्य किया जायगा तो उससे इष्ट उद्देश्य की सिद्धि कदापि न होगी। स्वार्थ के साथ परार्थ का सम्मिश्रण ही स्वार्थ और परार्थ का साधन करने में समर्थ होगा। प्रथम तो यह होना चाहिये कि पुराणों के अनुवाद की भाषा अत्यन्त सरल सजीव और सुमिष्ट रहे, दूसरे उनका प्रकाशन बिलकुल आधुनिक ढंग पर किया जाय। हमारा अभिप्राय गेट अप के सौन्दर्य से है यदि उनके संस्करण सचित्र रहें, तो और भी उत्तम। तीसरी और सबसे प्रधान आवश्यकेता यह है कि उनका मूल्य स्वल्प से स्वल्प रखा जाय। दरिद्र देश का यह सामर्थ्य नहीं कि वह बड़े २ ग्रंथ प्रचुर धन राशि व्यय कर सङ्ग्रह कर सके। यदि इन सब युक्तियों से कार्य किया जाय तो पुराणों के आशातीत प्रचार की सम्भावना की जा सकती है।

ऊपर लिखे उपाय से यद्यपि पुराणों के सन्तोषजनक प्रचार की आशा की जाती है, परन्तु देश के पठित समाज में ऐसे लोगों का भी बाहुल्य है जिन्हें या तो समयाभाव रहता है या कम से कम उसकी शिकायत अवश्य रहती है। ऐसे लोग पुराण जैसे विशाल ग्रंथों का पाठ करने से मुँह छिपाने में अवश्य ही सङ्कोच न करेंगे। और हमारी इच्छा यह है कि भारत के बच्चे बच्चे का पौराणिक ज्ञान पुष्ट हो जिससे उसे कम से कम इस बात का तो बोध रहे कि हमारे भारत का अतीत इतिहास कितना गरिमामय था। इस इच्छा की पूर्ति के लिये एक सरल उपाय है और वह यह है कि पुराणों का आधार लेकर ऐसे साहित्य की रचना की जाय जो देश के प्रत्येक युवक युवती और बालक बालिका के हाथ दिया जा सके।

पुराणों में जीवन-चरित्रों और कथा कहानियों की बहुलता है हमें यह कहते हुए गर्व की अनुभूति होती है कि उन जीवनचरित्रों एवं कथा कहानियों में एक भी संख्या ऐसी नहीं है जिसे कोई निस्सार या व्यर्थ कहने का साहस कर सके। पुराणों के प्रणेता की दृष्टि इतनी व्यापक थी कि उसने मानव जीवन का कोई भी उपयोगी या आवश्यक अङ्ग नहीं छूटने दिया। मानव जीवन का उत्कर्ष साधन करने वाला ऐसा कोई विषय नहीं जिस पर पुराण रचयिता ने एकाध जीवनचरित्र या कहानी की सृष्टि न की हो। पुराणों के इन उपाख्यानों में राजनीति की जटिल से जटिल गुत्थियां सुलझाई गई हैं, उच्च कोटि के स्वदेश प्रेम का समावेश किया गया है। स्वधर्म पालन की तत्परता, भूत, दया, परोपकार प्रवणता गुरु जनों के प्रति श्रद्धा और भक्ति, पाप के दुष्परिणाम, राजा, प्रजा, पिता, माता, गुरु, पुत्र, पुत्री, नारी, ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र आदि के कर्त्तव्य इत्यादि सभी विषयों का सुन्दर विश्लेषण पुराणों में दिखाई देता है। इन सब विषयों को लेकर बड़े ही सुन्दर पौराणिक साहित्य की रचना की जा सकती है। पौराणिक साहित्य की रचना केवल इसीलिये नहीं की जानी चाहिये कि उससे पुराणों का प्रचार

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

होगा, इस लिये भी की जानी चाहिये कि उस से देश का चरित्र निर्माण करने में अभूतपूर्व सहायता मिलेगी। यह मानी हुई बात है कि मनुष्य को अपना चरित्र सुसङ्गठित करने में जीवनचरित्रों आख्यानों और कथा कहानियों से प्रचुर सहायता प्राप्त होती है। और पुराणों में वह सामग्री विद्यमान है जिसका आश्रय लेकर क्या बालक बालिका और क्या स्त्री पुरुष सभी अपना चरित्र सुन्दरता के सांचे में ढाल सकते हैं यदि यह कहा जाय कि पुराण रचना करते समय उनके महान् रचयिता के हृदय में लोककल्याण की यही कामना हलचल मचा रही थी, तो कदाचित् अतिशयोक्ति न होगी। अस्तु—

जनता का चरित्र सुसंस्कृत करने के लिये जिस पौराणिक साहित्य की रचना होना आवश्यक है, उसे हम दो मुख्य भागों में विभक्त कर सकते हैं—(१) जीवनचरित्र या उपाख्यान और (२) कथा कहानियां। इन दोनों विषयों को लेकर हिन्दी में अब तक क्या हुआ है यह भी विचार करने की एक बात है।

पुराणों में विस्तृत जीवनचरित्रों या आख्यानों का अभाव नहीं है। परन्तु जब हम हिंदी संसार की कर्तृत्व शक्ति की ओर देखते हैं, तब हमें दुःख होता है। हिन्दी भाषा में अबतक प्रकाशित हुई जीवनकथाएं यदि एक स्थल पर एकत्र की जांय तो उनकी संख्या अत्यल्प—उंगलियों पर गिनी जाने योग्य—होगी। वे इस ढंग से हिन्दी में उपस्थित की गई हैं कि उन्हें देखकर विचारवान् लोगों को आह्लाद के स्थान में परिताप ही विशेष होगा। इन जीवन कथाओं में दो मुख्य बातें दिखाई देती हैं। एक तो यह कि ये प्रायः अनधिकारी लेखनियों द्वारा लिखी गई हैं या बंगला आदि भाषाओं से हिन्दी में रूपान्तरित की गई हैं, जिससे इनकी उपयोगिता बहुत घट जाती है। दूसरी यह कि इनमें नवीनता का अभाव है, वही श्रीकृष्ण सीता, सावित्री, पार्वती आदि की गिनी चुनी जीवन कथाएं, इनसे आगे बढ़ने की चेष्टा की ही नहीं जाती जैसे पुराणों में इन जीवनियों से अधिक कुछ है ही नहीं।

और तो क्या हिन्दी भाषा में श्री रामचन्द्र जी के एक सुन्दर जीवन-चरित्र या आख्यान तक का शोचनीय अभाव है। स्वर्गीय पं० ईश्वरी प्रसाद शर्मा ने श्री राम के सम्बन्ध में लिखने की चेष्टा की थी परन्तु उसका मूल्य साधारण कहानी से अधिक महत्व नहीं रखता, और वह कहानी भी ऐसी है जो लगभग पांच सौ पृष्ठों में समाप्त हुई है तथा छः रुपये से कम में क्रय नहीं की जा सकती। इस ग्रंथ में जो चित्र दिये गये हैं उन्हें चित्र कहना चित्रकला का घोर अपमान करना है। हां श्रीकृष्ण के चरित्र पर अवश्य ही कई लोगों ने लेखनी उठाने का साहस किया है, पर सफलता शायद ही किसी ने प्राप्त की हो। इस सम्बन्ध की कृतियाँ ऐसी हैं जिन्हें न तो हम जीवन-चरित्र की श्रेणी में रख सकते हैं और न आख्यान की। केवल श्री लक्ष्मणनारायण गर्दे लिखित 'श्रीकृष्ण' ऐसा है जिसे हम सुन्दर आख्यान कह सकते हैं लेखक ने उसे योग्यतापूर्वक लिखा है। परन्तु उसका मूल्य अधिक है, और उसमें जो चित्र दिये गए हैं वे बाज़ारू चित्रों से भी बुरे हैं।

वास्तव में पुराणों में कितने ही ऐसे लोको-

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

त्तर महापुरुषों की जीवन कथायें हैं जिनका आधार लेकर विद्वानों, नवयुवकों तथा बड़ी आयु के विद्यार्थियों के सामने बहुत सी प्रशंसनीय सामग्री रक्खी जा सकती है। इस सामग्री का उपयोग दो प्रकार से हो सकता है-(१) जीवन चरित्रों द्वारा और (२) आख्यानों द्वारा, जीवनचरित्र आलोचनात्मक, विश्लेषणात्मक तथा पाण्डित्यपूर्ण शैली में लिखे जावें, जिस से विद्वान् एवं प्रौढ़, मस्तिष्क वाले लोग उनका उपयोग करें। आख्यान बढ़िया कथाओं के रूप में मजे की भाषा में साधारण बुद्धि वालों तथा बड़े विद्यार्थियों के लिये लिखे जावें।

महिलाओं के उपयोगी पौराणिक आख्यान भी हिन्दीमें अभी नहींके बराबर हैं। अभी थोड़े दिनों से कलकत्ते के कुछ प्रकाशकों ने इस ओर ध्यान दिया है, और पार्वती, सीता, दमयन्ती, सावित्री आदि सात आठ देवियों की कथाएं आख्यान रूप में प्रकाशित की हैं। परन्तु इस कार्यमें उन्होंने जिस व्यावसायिक नीचतासे कार्य लिया है वह साहित्य संसार के लिये लज्जा की बात है। इन पुस्तकों में जो चित्र दिये गये हैं वे बड़े ही भद्दे हैं, इतने भद्दे कि ग़ैरतदार लोग उन्हें देखना भी बर्दाश्त नहीं कर सकते, सतीत्व और पवित्रता की वह दिव्य देवियां कहीं कहीं वेश्याओं की वेश भूषा में चित्रित की गई हैं, और यह काम उन हिन्दू प्रकाशकों द्वारा हुआ है जो अपने को हिन्दू कहने में गर्व का अनुभव करते हैं। मूल्य इन पुस्तकों का इतना कस कर रक्खा गया है कि साधारण स्थितिकी महिलाओं में यह सामर्थ्य नहीं, जो वे इन्हें मोल ले सकें। परन्तु इनपर सब से बड़ी तथा प्रधान आपत्ति की जा सकती है वह इनकी लेखन शैली है। या तो ये पुस्तकें अन्य भाषाओं के भ्रष्ट रूपान्तर मात्र हैं,या ऐसे लेखकोंसे लिखाई गई हैं कि जिन्हें अपने उत्तरदायित्व का तनिक भी बोध नहीं था इनके लेखक आवेश में आकर कहां तक बहक गये हैं, यहां इसका एक उदाहरण देना अप्रासङ्गिक न होगा। पार्वती नामक एक पुस्तक के लेखक लिखते २ कदाचित् इतने आत्मविस्मृत हो गये हैं कि उसमें आपने असहयोग सत्याग्रह तथा निष्क्रिय प्रतिरोध तक की मीमांसा कर डाली है। पुराण प्रेमी पाठकों को कदाचित् यह जानकर आश्चर्य होगा कि इस पुस्तककी पार्वती जी शिवजी के साथ विवाह करने के लिये इतनी आतुर हो उठीं कि उन्होंने अपने माता पिता तथा सखी सहेलियोंसे असहयोग और सत्याग्रह करने में कोई बात नहीं उठा रक्खी। एक और सज्जन थे जो अपने को लाल बुझक्कड़ से नीची श्रेणी में रखने को कदापि तैयार न थे। आप अपनी 'पार्वती' नामक पुस्तक में महादेव जी से पार्वतीजी को इस प्रकार उपदेश दिलवाते हैं-"हे पार्वती सुनो! रहीम कवि कह गये हैं कि-रहिमन मोहि न सुहाय अमिय पियावत मान विन। वरु विष देय पिलाय, मान सहित मरिबो भलो।" ऐसे योग्य लेखकों की लेखनी के नीचे पड़कर इन आख्यानों की यथेष्ट से भी अधिक दुर्दशा हुई है। इस दुर्दशा का एक कारण प्रकाशकों की वह व्यापारिक प्रतिस्पर्द्धा भी है जिसके वशीभूत होकर उन्होंने टकापंथी लेखकोंसे इन आख्यानों पर पूरा २ अत्याचार कराया है। इन प्रकाशकों को आख्यानों की सुन्दरता की चिन्ता नहीं रही उन्हें तो यही चिन्ता रही है कि हमारी जेवें किसी प्रकार गरम भर हों। बस।

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

कुछ दिन पहिले पत्र पत्रिकाओं में कलकत्ते की आर० एल० वर्म्मन कम्पनी द्वारा प्रकाशित स्त्रियोपयोगी पौराणिक आख्यानों की आलोचना निकला करती थी। परन्तु जब वे आख्यान देखने का अवसर प्राप्त हुआ, तब हमें पता चला कि हिन्दी के अधिकांश सम्पादक पुस्तकों की आलोचना लिखते समय इस बात के लिये चिन्तित रहा करते हैं कि हमारे पास किसी भी तरह हो आलोचनार्थ अधिक से अधिक पुस्तकें आया करें। उक्त कम्पनी द्वारा प्रकाशित आख्यानों के लेखकों में यद्यपि दो एक प्रसिद्ध व्यक्ति भी हैं पर यदि पुस्तकें रचते समय वे स्त्रियों की योग्यता का विचार कर लेते, तो उनका श्रम सफल हो-जाता। सत्य तो यह है कि इन पुस्तकों की काव्यमयी भाषा एक बार पुनः सम्पादित होने के लिये तरस रही है। अस्तु—

पुराणों में स्त्री शिक्षा के लिये ऐसे २ आख्यान गुम्फित किये गये हैं, जो यदि बाक़ायदे सजाकर स्त्रियों के सामने रख दिये जांय तो उन के लिये हीरे मोतियों के आभूषण की अपेक्षा भी अधिक बहुमूल्य साबित हों। ये आख्यान जब अत्यन्त सरल मधुर और बोल चाल की भाषा में लिखे जायं तभी पूर्णतया उपयोगी बन सकते हैं। उनका कलेवर भी आवश्यकता से अधिक विस्तृत करनेकी आवश्यकता नहीं। लेखकों को अपना कर्तव्य कुछ अत्यन्त प्रसिद्ध आख्यानों तक ही सीमित न रखना चाहिये पुराणों में और भी जो चमकीले रत्न छिपे पड़े हैं उन्हें कौन प्रकाश में लावेगा? हमारी प्रार्थना तो यही है कि ऐसी चीजें लिखते समय यदि लेखक लोग मनुष्य ही बने रहने की कृपा किया करें, तो अच्छा हो, स्वर्ग के स्वप्न देखने या देवता बन जाने से न तो उन्हें श्रेय प्राप्त होगा न उनकी वस्तु से ही कोई यथोचित लाभ उठा सकेगा।

बाल-साहित्य में भी पौराणिक उपाख्यानों का समावेश किया जाना चाहिये, और ये उपाख्यान बालक तथा बालिका दोनों के लिये लिखे जाने चाहिये। इस ओर कुछ ध्यान दिया तो गया है पर विषय को जो महत्व देना उचित था वह नहीं दिया गया। इन्डियन प्रेस और शिशु कार्यालय आदि दो एक स्थानों से चार छः बालोपयोगी आख्यान प्रकाशित हुये हैं। इंडियन प्रेस के आख्यान बहुधा बंगला भाषा से अनुवादित किये जाते हैं। इंडियन प्रेस के उदार स्वामी से हमारी प्रार्थना है, कि वे व्यर्थ ही हिन्दी पर बंगला के ऋण का बोझ न लादा करें। यदि वे चाहें तो हिन्दी वाले ही उन्हें बालोपयोगी अच्छी वस्तुएं दे सकते हैं। उक्त कार्यालयों द्वारा प्रकाशित आख्यान किसी प्रकार ठीक कहे जा सकते हैं। खेद है तो यही, कि उनमें भाषा सम्बन्धी कठिनाइयां सर्वथा हल नहीं की गईं।

कुछ ऐसे बालोपयोगी आख्यान भी प्रकाशित किये गये हैं, जो बालकों के काम के तो हैं ही नहीं, स्त्रियां और पुरुष भी उनसे लाभ नहीं उठा सकते। उनकी भाषा भी ठीक नहीं और विषय प्रतिपादन भी गड़बड़। पिछले दिनों हम ने लाहौर से प्रकाशित अभिमन्यु नामक एक आख्यान देखा था। उसकी आधी पञ्जाबी और आधी हिन्दी भाषा देखकर तो हम दङ्ग रह गये और सोचने लगे कि आखिर लोगों को पांचवें सवारों में अपना नाम लिखाते लज्जा क्यों नहीं आती? इसी प्रकार कलकत्ते के एक प्रकाशकने

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

"बालक श्रीकृष्ण" नामक पुस्तक प्रकाशित की है। आपकी लेखनी में मिर्जापुरी लोटे की बहार है। कभी वह हिन्दी की ओर दौड़ती है, और कभी संस्कृत की ओर।

बालिकाओं के लिये जो आख्यान निकाले गये हैं, उनकी स्थिति बालकों के आख्यानों से भी अधिक शोचनीय है। ये आख्यान कलकत्तेके व्यवसाय पटु प्रकाशकों ने प्रकाशित किये हैं, और उन आख्यानों के कतरन मात्र हैं, जो पहिले उनके यहां से स्त्रियों के लिये प्रकाशित हो चुके हैं वास्तव में कलकत्ते के कई प्रकाशकों ने अपनी जेबें गरम करने के लिये साहित्य-सेवा के नाम पर जो अनर्थ किया है, वह अकथनीय है उसका स्पष्टीकरण करने के लिये बहुत समय और स्थल की आवश्यकता है। इन अर्थपिशाचों की बुद्धि मार्ग पर लाई जा सके इसका केवल एक उपाय है। और वह यह कि साहित्य संसार में उनका तथा उनकी प्रकाशित की हुई पुस्तकों का बहिष्कार किया जाय।

हमारी सम्मति में बालक और बालिकाओं के लिये छोटे छोटे पौराणिक आख्यान अधिक संख्या में लिखे जाने चाहिये। इनके सम्बन्ध में केवल तीन बातों की ओर विशेष ध्यान रहे। इनकी भाषा बहुत सरल रक्खी जाय, पुस्तकों का परिमाण अधिक न हो चार-पांच फर्मे यथेष्ट होंगे, छपाई मोटे अक्षरों में हो, और आवश्यक सुन्दर चित्रों का भी अभाव न रखा जाय। यदि बालकोंमें पौराणिक साहित्य का प्रचार यथाविधि किया गया, तो उससे अत्यधिक लाभ होने की सम्भावना है। आरम्भ से ही वे सच्चरित्र बनेंगे और उनकी मानसिक वृत्तियां समुचित रूप से पवित्र तथा उन्नत हो जायेंगी। किसी देश के महान् उत्थान के लिये उसके बालकों का इतना उन्नत होना ही यथेष्ट है। अस्तु-

छोटी-छोटी पौराणिक कहानियों से भी बालक बालिकाओं को बहुत लाभ पहुँच सकता है। परन्तु जहां तक हम जानते हैं, हिन्दी में इस विषय की कोई पुस्तक प्रकाशित नहीं हुई। पुराणों में ऐसी बहुत सी छोटी छोटी कहानियां हैं, जो सरल और रोचक भाषा में लिखी जा सकती हैं। बड़े आख्यानों को भी संक्षिप्त कहानियों का रूप दिया जा सकता है। आदर्श व्यक्तियों के सम्बन्ध की साधारण घटनायें लेकर भी अच्छी २ कहानियां गढ़ी जा सकती हैं। हमारे विचार से इस प्रकार की छोटी छोटी कहानियां अधिकता पूर्वक लिखी जानी चाहिये। ऐसी कहानियां बालकों को रोचक प्रतीत हुई हैं, उन्हें वे शीघ्र स्मरण भी हो जाती हैं। बालकों में पौराणिक ज्ञान उत्पन्न करने के लिये इन कहानियों से श्रेष्ठतर साधन और नहीं हो सकता। लेखक और प्रकाशक चाहें तो इस प्रकार की पच्चीस पचास पुस्तकें सरलता पूर्वक तैयार हो सकती हैं।

पुराणों के प्रचार का एक और भी उत्तम उपाय है। उसका आश्रय लेने से उच्चकोटि का साहित्य निर्मित किया जा सकता है. और हमारी भाषा की उल्लेखनीय वैभव वृद्धि हो सकती है। वह उपाय है—पुराणों के आख्यान या घटना विशेष को लेकर श्रव्य और दृश्य काव्यों का निर्माण करना।

खड़ी बोली की कविता अब प्रगति पथ पर है। परन्तु कविता के उत्कर्ष की दृष्टि से अभी वह दरिद्र ही कही जायगी। अभी उसमें

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

स्थायी रचनाओं महाकाव्यों, खण्ड काव्यों तथा स्फुट कविताओं का शोचनीय अभाव है। हमारे प्रतिभाशाली कवियों ने कविता की अक्षय्य धारा 'पुराण' पर अभी दृष्टि ही नहीं डाली, नहीं तो उन्हें कविता के विषय ढूंढ़नेके लिये घण्टों माथा पच्ची न करनी पड़ती, पुराणों में उन्हें वह सामग्री मिलती जिसका सहारा लेकर ये छोटी कवितायें तो क्या न जाने कितने खण्ड काव्य तथा महाकाव्य रचकर अमरत्व प्राप्त कर लेते। हम जानते हैं कि वर्तमानकालीन प्रतिभाशाली कवियों में न तो सभी नास्तिक हैं न आर्य-समाजी ही और वे कवि जो अपने पूर्व गौरव तथा हिन्दुत्व पर अभिमान रखते हैं यदि चाहें तो पुराणों पर दृष्टिपात करें, और फिर वह कविता लिखें जिससे हिन्दी का माथा ऊंचा हो तथा उनकी कीर्ति भी सदा के लिये अमर होजाय। वर्तमान हिन्दी कवियों की पल्टन में दो ही वीर ऐसे दिखाई देते हैं जिनका ध्यान इस ओर गया है-१ बाबू मैथिलीशरण गुप्त और २ स्वर्गीय बाबू शिवराम गुप्त कुसुम। पहले गुप्तजी ने शकुन्तला और वीराङ्गना नामक कविताएं लिखी और दूसरे गुप्तजी ने 'उषा' नामक खण्ड काव्य। हमें यह कहते प्रसन्नता उत्पन्न होती है कि दोनों सज्जनों की वस्तुएं रसीली और लुभावनी हैं। क्या और कवियोंकी लेखनी से ऐसी प्यारी वस्तुओं का प्रसव नहीं होसकता?

नाटकों के शोचनीय अभाव का होना हिन्दी में बहुत दिनों से रोया जा रहा है रोते २ लोगों ने मन समझाने के लिये कभी २ नाटक लिखने का प्रयास भी किया है पर ऐसे नाटक शायद दो एक ही बन पाए होंगे जिन्हें देखकर अभिमान किया जा सके। फिर पौराणिक नाटकों की तो और भी कमी हैं। नाटकों में हृदय के जो घात प्रतिघात दिखाये जाते हैं वह पुराणों में भरे पड़े हैं और उनमें कथा वस्तु की भी प्रचुरता है यदि नाटककार चाहें तो पुराणों की दया से उत्तम से उत्तम ढेरों नाटकों की रचना कर दोनों हाथोंसे कीर्ति बटोर सकते हैं। अभी तक इस ओर जिन साहित्य सेवियों ने ध्यान दिया है उनको संख्या अत्यल्प है और उनके रचे नाटक भी हिन्दी को गौरव के शिखर पर नहीं ले जाते हैं यों तो हिन्दी में पौराणिक नाटकों की संख्या पचास साठ से कम न होगी, पर उनमें उच्चकोटि के दस पांच ही निकलेंगे। शेष तो इस योग्य हैं कि उनका स्वागत दियासलाई से होना चाहिये साहित्य संसार में पं० बदरीनाथ भट्ट बी० ए० के वेन चरित्र, राजपरिवर्तन वेणी संहार आदि नाटक उत्तम समझे जाते हैं। पण्डित कामताप्रसाद गुरु गोपाल दामोदर तामस्कर और माखनलाल चतुर्वेदी के नाटक भी उच्च कोटि के हैं। अनुवादित नाटकों में सीता और पाषाणी का स्थान उच्च है रङ्गमञ्च पर राधेश्याम, कथावाचक, बेताब आदि सज्जनों के नाटकों ने अच्छी ख्याति प्राप्ति की है। इन महाशयों के नाटकों ने जनता में पौराणिक अभिनयों के प्रति अभिरुचि उत्पन्न कर दी है। यह निस्सङ्कोच कहा जा सकता है कि यदि उच्च कोटि के पौराणिक नाटक प्रस्तुत किये जांय तो जनता उन्हें आग्रह पूर्वक अपनावेगी और इस प्रकार पौराणिक घट-

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

नाओं के प्रचार के लिये एक महान् क्षेत्र निर्मित किया जासकता है अधिकारी लोगों को इस उपयुक्त क्षेत्र को ओर शीघ्र ही ध्यान देना चाहिये।

इस सिलसिले में हम यह भी कहना चाहते चाहते हैं कि बालक बालिकाओं के लिये भी छोटे २ पौराणिक रूपक अवश्य रचे जाने चाहिए।

इन सब के अतिरिक्त पुराणों के अन्तर्गत मनुष्य जीवन के उपयोगी ऐसे कितने ही विषय हैं जिन पर पण्डितों को विचार करना चाहिये। पुराणों में राजनीति, शासन पद्धति, वर्णव्यवस्था, जातिभेद, नाट्यकला, भौगोलिक तथा वैज्ञानिक तत्व आदि २ ऐसे बहुत से विषय हैं जिन पर मनन और अध्ययन के पश्चात् बड़ी बड़ी पाण्डित्य पूर्ण पुस्तकें रची जा सकती हैं। इसमें सन्देह नहीं कि इन पाण्डित्य पूर्ण निबंधों से पुराणों के रहस्य का बड़ा ही सुन्दर उद्घाटन होगा तथा ये साहित्य की अमर सम्पत्ति बन कर उसे गौरवान्वित करते रहेंगे। जहां तक हमें मालूम है पुराणों के सम्बंध में अभी तक ऐसी कोई पुस्तक नहीं रची गई। अस्तु—

पुराणों का प्रचार करने के सम्बंध में कुछ उपाय यहां हमने लिख दिये हैं विद्वान् लोग और भी उपाय सोच सकते हैं। हमारी प्रार्थना इतनी है कि पुराणों का अत्यधिक प्रचार अवश्य होना चाहिये। कोई कुछ भी कहे पर पुराण हिन्दूधर्म से अलग नहीं किए जा सकते। पुराण हिन्दूधर्म की आधार शिला हैं उनके अभाव में हिन्दूधर्म मृतवत् होजायगा। फिर उनके प्रचार से लोगों का चरित्र भी बनेगा और इसमें तो सन्देह ही नहीं किया जा सकता कि उनके द्वारा लोगों की धार्मिक भावनाओं के बहुत ही उन्नत होने की सम्भावना है और पुराणों के सम्बन्धमें जो साहित्य निर्मित होगा उससे हिन्दी कितनी वैभव सम्पन्न हो जायगी इसकी कल्पनामात्र से हृदय पुलकित हो उठता है। रही पौराणिक साहित्य प्रचार की बात; सो अभी इस देश से आस्तिकता तथा धार्मिकता के बीज बिलकुल ही नष्ट नहीं हो गए हैं। इण्डियन प्रेस से प्रकाशित 'महाभारत' तथा गोरखपुर से निकलने वाले 'कल्याण' पत्र को आज भी दस हजार से अधिक ग्राहक मिल सकते हैं। तब कोई कारण नहीं कि पुराण जैसी पवित्र वस्तु के लिये इतने ग्राहक न मिल सकें जिससे उसके प्रकाशन का ही आयोजन होना असम्भव ज्ञान पड़े। कोई विधिवत् कार्य करने वाला हो तो वह अपना कल्याण तो करेगा ही साथ में भारत का भी अशेष कल्याण कर जायगा।

'कल्याण' की ग्राहक संख्या इस समय प्रायः १३ हजार है—

सम्पादक।

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

खास 'ब्राह्मण सर्वस्व' के 'पुराणांक' के लिये

भारत प्राण पुराण।

(ले० श्री पं० हनूमान शर्मा चौमूं जयपुर)

उपोद्घात।

यद्यपि इन दिनों विद्या का बाहुल्य और विज्ञान की वढ़ोतरी बतलाई जाती हैं। तथापि सूक्ष्म दृष्टि से देखा जाय तो परिणाम दोनों का विपरीत प्रतीत होता है।

गाड़ी भर पोथियां पढ़ा हुआ विद्यार्थी यदि अनुभवी न हो, और साइन्स से सड़ाये हुए मस्तक वाला मनुष्य यदि लोक व्यवहार न जानता हो तो ऐसे विज्ञान और विद्या बाहुल्य हैं किस काम के।

वह पुत्र ही क्या जिसको पिता की प्रकृति का पता नहीं और वह धनिक ही क्या जिसकी बाजार में कुछ पैठ नहीं। वास्तव में वर्त्तमान समय के कुछ भले आदमियों की परिस्थिति ऐसी ही है।

महत्व साधना।

जिन विद्या कला और शास्त्रों के सहाय से भारत की महा महिमा दिगन्तव्यापिनी हो रही थी उन विद्या कला और शास्त्रों का इन दिनों तिरोभाव हुआ जा रहा है। और लोग उन से अनभिज्ञ होते जा रहे हैं।

पुराण भारत के प्राण हैं। त्रिकालदर्शी महर्षियों ने उनका बड़े विचार से निर्माण किया है और इस देशके हित तथा उपकार के लिये सब प्रकार की सामग्री उनमें उपयुक्त की है।

जिस प्रकार एक विचारशील पिता अपने पुत्रोंके सुख सौभाग्य और सुकीर्ति के लिये लेखबद्ध व्यवस्थापत्र या वसीयत नामा बना जाता है। उसी प्रकार सर्वज्ञ महर्षियों ने भारत के प्राण पोषणके लिये पुराणोंका निर्माण किया है।

पुराण क्या हैं?

पुराण पुराने के बोधक हैं। साथ ही उनमें प्राचीन काल की कथा आदि होने से भी पुराण कहलाते हैं। इसके सिवा जिनमें सर्ग, प्रतिसर्ग पोषण, मन्वन्तर और वंश वर्णन हो वे पंचलक्षण पुराण होते हैं।

पुराणों के पांच लक्षण।

जिन पुराणों में ब्रह्मा की उत्पत्ति ब्रह्मा की की हुई सृष्टि की उत्पत्ति, देव और पितरों की पोषण विधि, चौदह मन्वन्तरों की परिस्थिति, और सोम सूर्यवंशों का वर्णन हो वे पुराण कितने महत्व के हो सकते हैं यह कहने की आवश्यकता नहीं।

पुराणों का रचना काल।

पुराण कब बने थे? इस प्रश्न के उत्तर में कई किंवदंतियां हैं। (१) कोई कहते हैं कि यह तो कोरी पोपलीला है। आधुनिक समय के ब्राह्मणों ने अपने मतलब के लिये ये गढ़ लिये हैं। (२) अङ्गरेज और अङ्गरेजी पढ़े हुये विद्वान् जिस प्रकार राम पञ्चायतन की मुहर से रामावतार होने के ३ हजार वर्षों का अन्दाजा लगाते हैं, उसी प्रकार पुराणों में जैनकथा, जगदीश माहात्म्य, बौद्धवर्णन, और तांत्रिक बातों के उल्लेख देख-

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

कर उनका ५ सौ ७ सौ ६ सौ या ज्यादा से ज्यादा १५ सौ वर्ष के पुराने बतलाते हैं। (३) कथावाचकों का कथन है कि पुराण महाभारत के समकालीन हैं। (४) शास्त्रों से सिद्ध होता है कि वेदों के साथ ही पुराण भी प्रकट हुए थे, पुराण संहिता उन सब की जननी है। (५) वेदों उपनिषदों, महाभारत, बाल्मीकीय रामायण और मनुस्मृति आदि से आभाषित होता है कि आदि में शत कोटि पुराणसंहिता प्रकट हुई थी उसी को १८ भागों में विभक्त करके अन्य ऋषियों ने उसका प्रचार किया था। और अन्त में भगवान् वेदव्यास ने उसके सारभूत अंशसे अठारह पुराण निर्माण किये थे। इससे प्रतीत होता है कि प्रचलित पुराण लगभग ५ हजार वर्ष के अवश्य हैं।

पुराणों के निर्माता कौन हैं।

जिस पुराण संहिता का ऊपर उल्लेख हुआ है वह वेदों के समान ही महाभूत के निःश्वास से स्वतः प्रकट हुई थी। उनको १८भागोंमें विभाजित करने वाले मार्कण्डेयादि महर्षि थे। और जिन पुराणों को पढ़ कर वर्तमान समय के लोग ऊहापोह मचाते हैं या तर्क वितर्क करते हैं ये भगवान् वेदव्यास द्वारा संकलित हैं।

वेदों और पुराणों का सम्बन्ध।

वेद और पुराण परस्पर में क्या सम्बन्ध रखते हैं? इस विषय में विस्तार से लिखने के लिये तो स्थान नहीं और संकीर्णता करने में मंदता होती है अतएव यह लिखना निस्सार नहीं होगा कि 'वेद रूप बहुमूल्य हीरों के गुण-कर्म और स्वरूप आदि को सुस्पष्ट रूप से प्रकट करने वाले पुराण हैं। अथवा वेद रूप बढ़िया रेशम की उलझी हुई गुत्थियों को सुलझाने और उनको काम में लाने योग्य बनाने वाले पुराण हैं। वेदों के दुर्बोध और अज्ञेय अंश पुराणों के आधार से स्वतः मालूम होजाते हैं। और अनेक अवसरों में वेद विधि के बहुधा कर्म पुराणोक्त प्रकार से सम्पन्न होते हैं।

पुराण कितने हैं।

इस सम्बन्ध में ऊपर लिख दिया है कि आरम्भमें एक पुराण था जिसके १० अरब श्लोक थे। उसके कण्ठस्थ होने की कठिनाई का ख्याल करके अन्य महर्षियोंने उसे कई भागोंमें विभाजित किया जिससे कई पुराण प्रख्यात हुए अन्त में भगवान् वेदव्यास ने उन सब का सार लेकर कई लाख श्लोकों में अठारह पुराण निर्माण किये। इनके अतिरिक्त १८ उप पुराण और कई एक जैन पुराण तथा साम्प्रदायिक पुराण और भी हैं जिनकी संख्या लगभग ६० होती है।

क्या भविष्यपुराण आधुनिक है ?

यह सब होते हुये भी अष्टादश पुराणों में लोगों को भविष्य पुराण के बाबत भ्रांति होती है और वे पूछते हैं कि 'क्या भविष्य पुराण आधुनिक है ?' उनके जानने के लिये यह लिखना अनुचित न होगा कि प्राचीन ग्रंथों में अष्टादश पुराणों के नाम दिये हैं। ब्रह्म पुराण में भी उनके नाम निर्दिष्ट किये गये हैं। और शङ्कराचार्य जिनको हुये आज लगभग तेईस सौ वर्ष होने को आये उन्होंने भी सम्पूर्ण पुराणों के सम्बन्ध में अपनी सम्मति प्रकट की है। ऐसी दशा में भविष्य पुराण को आधुनिक कहना न्यायसंगत

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

प्रतीत नहीं होता है किन्तु वर्तमान भविष्य पुराण में पृथ्वीराज चौहान, सम्राट् अकबर, महारानी विक्टोरिया और सप्तम एडवर्ड जैसे नाम होने से स्वतः सन्देह होता है कि यह कैसा भविष्य पुराण है।

क्या पुराणों में प्रक्षिप्त अंश हैं ?

इसमें कोई सन्देह नहीं कि पुराणों में प्रक्षिप्त अंश हैं। सांप्रदायिक मतभेद की मनमानी सामग्री मुफ्त मिलती रहने के लिये बहुत से आख्यान और प्रमाण वाक्य हस्तलिखित पुराणों में प्रक्षिप्त कर दिये हैं। कइयों ने अपने पुस्तक का विशेषत्व दिखाने और कईयों ने अपने पासके पुराणोपयुक्त दुर्लभ विषयों को सुरक्षित रखने के अनुरोध से पुराणों में युक्त कर दिये गये हैं। जिस प्रकार २४ हजार मूल महाभारत में गीता जैसे अमूल्य रत्नों का समावेश किया है। उसी प्रकार पुराणों में भी कई अंश संसार के हित के लिये और कई अंश अभीष्ट सिद्धिके लिये पीछेसे जोड़ दिये गये हैं। यही कारण है कि उनके आश्रय विषय, कथाविभाग, और श्लोक संख्या आदि में अन्तर होगया है।

पुराण और इतिहास।

साहित्यिक सम्पत्ति के ध्यान से और प्राचीन परिस्थिति के ज्ञान के लिये पुराण और इतिहास दोनों ही समान रूप से संसार का उपकार करते हैं यद्यपि इनकी वर्णन शैली में भिन्नता है और कई भाग इतिहासों की अपेक्षा पुराणों में अधिक हैं तथापि इतिहास रसिकों को रसास्वादन कराने में पुराण बड़े प्रयोजनीय और यथेच्छ सामग्री देने वाले हैं।

पुराणों में दार्शनिक तत्त्वज्ञान।

विद्या व्यवसायियों के लिये दर्शन शास्त्र कठिन माने जाते हैं किन्तु उनके तत्त्वज्ञान के लिये पुराण बड़े प्रतिपाद्य साधन हैं। किसी स्थल का कोई अंश कई बार के पठन पाठन से भी समझ में न आता हो तो वह पुराणों की साधारण कथा सुनने मात्र से ही हृदयंगम हो जाता है। ऐसी दशा में पुराणों को दर्शन शास्त्रों के समझाने वाले सुदक्ष अध्यापक कहना चाहिये।

स्मृतिशास्त्र और पुराण।

इसी प्रकार स्मृति शास्त्रों का सारोद्धार भी पुराणों के आधार से होता है। कई एक स्मृतियां ऐसी हैं जिनके प्रमाण वाक्यों का असली आशय आधुनिक दुनियां के लिये दुर्बोध्य हैं। किन्तु पुराणों में उनके प्रत्यक्ष रूप उदाहरण देकर दिखलाये हैं जिनसे उनकी दुर्बोधता दूर हो जाती है। ऐसा होने से आजकल के कई एक इतिहासवेत्ता बहक भी जाते हैं। जब कभी उनको किसी स्मृति का कोई वाक्य पुराणों में मिल जाता है तो वे या तो उस पुराण को स्मृतिकार से पीछे का बतलाते हैं या पुराण वाक्यको स्मृतियों में देखकर स्मृतिकार को पुराण से पीछे का मानते हैं।

पुराणों के रचनाकाल में भ्रांति।

पूर्वोक्त धारणा कई एक विद्वानों ने पुराणों के रचना कालका निश्चय करने में भी लागू की है। उन्होंने पुराणों में कई जगह आधुनिक झलक देखकर उनको इस जमाने के बने हुए मान लिया है। किन्तु ऐसा मानने में उन्होंने अ

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

पनी अल्पज्ञता, अदूरदर्शिता और पुराणों की वर्णनशैली से अनभिज्ञता प्रकट की है।

पुराणों की भाषा और वर्णनशैली ।

प्रसङ्गवश यहां यह विदित कर देना उचित प्रतीत होता है कि आधुनिक समय के अधिकांश लोग पुराणों के भाषाविज्ञान को जानते नहीं हैं प्रत्येक पुराण में लौकिक, विचित्र और समाधि इन तीन भाषाओं का प्रयोग किया है। इसी प्रकार आध्यात्मिक, आधिभौतिक और आधिदैविक इन तीन प्रकार की कथाएं कहकर अद्वितीय वर्णनशैली विख्यात की है। राजाओं के चरित्र लौकिक भाषा में लिखे गये हैं, कच्छप, मृग और नकुलादि के वार्तालाप में विचित्र भाषा द्योतित की गई है· और भगवान् के चरित्र तथा उनके रहस्य समाधि भाषा में बतलाये हैं। इस प्रकार की वर्णनशैली और भाषा विज्ञान के असली तत्त्व को आज कल के लोग गम्भीर दृष्टि से अन्वेषण किये बिना समझ ही नहीं सकते।

इसके सिवा कई एक कथाएँ रूपकात्मक और आलंकारिक हैं। जिनका तात्पर्य कुछ और होता है और अनभिज्ञ लोग कुछ और ही मतलब मान लेते हैं। यथा सृष्टि रचना के लिये ब्रह्मा ने सावित्री में वीर्याधान किया, और इन्द्रकी सभा में रंभा और मेनका के रूपसे मोहित होकर मित्र और वरुण स्खलित होगये, इत्यादि–

स्थानाभाव से यहां हम इनका तात्पर्य प्रकट नहीं कर सकते हैं यदि अवसर मिलेगा तो फिर कभी ऐसी कथाएँ और उनका तात्पर्य स्वतंत्र लेख में प्रकट करेंगे। अस्तु।

पुराणों में भौगोलिक तत्त्व ।

वर्तमान समय में भूगोल के बहुत ग्रन्थ विख्यात हुए हैं। किन्तु पुराणों में भौगोलिक तत्त्व विशद और विस्तृत रूप में प्रकट किया गया है। जिन देशों नदियों पहाड़ों और स्थल विशेषों का इन दिनों रूपान्तर होगया है। अथवा कइयों का नाम शेष भी नहीं रहा है उनका पुराणों में पूर्ण रूप से वर्णन हुआ है।

जो देश, जो पर्वत और जो नदियां इन दिनों जिस आकार प्रकार रूप-रंग और विस्तृति में वर्तमान हैं वे प्राचीनतम काल में किस जगह, किस परिमाण में,कैसे रूप रंग के थे; यह पुराणों से भली भांति विदित होसकता है।

पौराणिक जातियां ।

बहुधा लोग पुराणों को कोरी कल्पना कह कर उनके प्रति दुर्भाव प्रकट करते हैं किन्तु जब कभी उनको अपनी ही जाति की उत्पत्ति आदि का पता लगाना आवश्यक होता है तब वे पुराण की ही शरण लेते हैं। वास्तव में पुराणोंमें अनेक प्रकार की जातियां अनेक प्रकार के जातीय नियम और अनेक प्रकार के रहन सहन आदि के उल्लेख हैं।

कई एक जातियां, जिनका इन दिनों या तो नाम शेष भी नहीं है, या उनके जातीय गुण-धर्म बिगड़ या सुधर गये हैं, या उनके वासस्थान अस्त व्यस्त अथवा सुनिश्चित होगये हैं। उनके पूर्व रूप भी पुराणों से परिलक्षित होसकते हैं।

इसके सिवा जातियों का एकीकरण, निराकरण, नामकरण, भेदभाव, रहन सहन, वर्त्ताव व्यवहार,वंशानुक्रम या वंशावली और परिस्थिति

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

आदि का भी पुराणों से पूर्णतया पता लगता है।

पुराणों में अनेक विद्यायें ।

पुराण काल में अनेक प्रकार की अद्भुत अलौकिक, अचिंतनीय और आश्चर्यजनक विद्याएं विद्यमान थीं, जिनमें प्रत्येक का ज्ञान करने केलिये एक २ शास्त्र के अध्ययन की आवश्यकता है।

जलतरण, अज्ञात देश गमन, आकाश विचरण, दूरदेशस्थों का अवलोकन, अश्रुत और अदृष्ट पूर्व दृश्यों का वर्णन, समाधिधारण, देहांतर प्रवेश और निधिदर्शन अथवा अंतर्धान आदि विद्याएं उन दिनों ऐसी अभ्यस्त थीं, जिनके सामने टेलीग्राफ, वेतार के तार, आक्सिजन गैस, और विद्युच्छक्ति के खेल कोई चीज नहीं।

पुराणों में अस्त्र शस्त्र ।

लोग अनुमान करते हैं कि वर्तमान समयके बहुधा अस्त्र शस्त्र ऐसे हैं जिनका प्राचीन काल में होना असंभव है। किन्तु पुराणों के अवलोकन से अच्छी तरह आभाषित होता है कि उन दिनों एक एक योद्धा के लिये ३०-३० अस्त्र शस्त्र उपयुक्त किये जाते थे और अनेक प्रकार के अस्त्र शस्त्र बनते और काम आते थे। पुराणों में उनके नाम, काम और निर्माण विधि भले प्रकार बतलाई है, जिन को देखकर अवाक् होजाना पड़ता है।

पौराणिक चिकित्सा ।

पुराणों में कई जगह रोगों औषधियों और चिकित्साओं का भी आनुपूर्वी विशद और पूर्ण वर्णन हुआ है पुराण काल का चिकित्सा शास्त्र इस काल के कालग्रस्त कलेवरों को बचाने के लिए बड़े बड़े बिलक्षण उपाय बतला सकता है और उससे रोगियों तथा वैद्यों को भी अपूर्व लाभ होसकता है।

पौराणिक चित्रकला ।

पुराणों में उपासना और आराधना सम्बन्धी अनेक प्रकार के चित्रों का वर्णन तो हुआ ही है, साथ ही विषया-शकुन्तला और चित्र लेखा आदि की कथाओं से पुराण काल की उत्कृष्ट चित्रकला का साक्षात् स्वरूप भी आंखों के सामने आजाता है।

पुराणों में कामविज्ञान ।

उन दिनों काम वासना तृप्त करने या संतान उत्पन्न करने मात्र का काम विज्ञान नहीं था। किन्तु इस संबंध के कई एक पौराणिक वर्णन ऐसे पाये जाते हैं जिनसे उन दिनों का विज्ञान बड़े प्रयोजन का था।

विदेश में बैठे हुए पति के दोने में भेजे हुए वीर्य से सन्तान उत्पन्न करना जननेन्द्रियों के अलावा अन्य अंगों के द्वारा सृष्टिक्रम के कार्य करना-अधोरेत की अपेक्षा ऊर्ध्वरेता होने में सफल होना-अनेक वर्षों तक रजवीर्य का रोके रखना अथवा एक ही समय में अनेक वार रजवीर्य को मिलाना और वन-जल-तथा पुष्पोद्यानों में रहकर कई प्रकार की काम कला से सुख लाभ करना आदि में पौराणिक काल का काम विज्ञान विशेष प्रकार का था।

शासन पद्धति राजनीति प्रजातंत्र ।

पुराणों में शासन पद्धति के अनेकों भेदभाव नियमोपनियम-और व्यवस्था आदि का भी बहुत वर्णन है। इसके स्वरूप सहेतु और सप्रमाण बतलाए हैं साथ ही अनेक प्रकार की राज-

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

नीति और प्रजातंत्र भी सम्यक् रीति से वर्णन किए हैं।

पुराणों के गूढ सिद्धान्त ।

इस बात का दिग्दर्शन ऊपर होचुका है कि पुराणों के कई एक गूढ रहस्य या उनके अनेकों अलक्षित सिद्धांत आज कल के मनुष्यों के सहज ही ध्यान में नहीं आते हैं। किंतु साइन्स के द्वारा उनकी सत्ता अधिक दृढ मान्य होती जा रही है।

क्योंकि वर्तमान विज्ञान ने पुराण के अनेक सिद्धान्तों को सत्य सिद्ध कर दिया है और सम्भवतः वह दिन भी अब दूर नहीं जब पुराण के सिद्धान्त विज्ञान-सिद्ध होकर संसार को चकाचौंध कर देंगे। और आज पुराणों को 'गप्प' कहने वालों की आंखें शर्म और पश्चात्ताप से नीची होजायगी। भगवान् करें वह दिन शीघ्र ही आये।

देव वाहन ।

लोगों को यह जान कर कौतूहल होता होगा कि-ब्रह्मा के हंस-विष्णु के गरुड़-शिव के वृषभ इन्द्र के ऐरावत-गणेश के मूषा-स्वामि कार्तिक के मयूर-सरस्वती के हंस-लक्ष्मी के उलूक-गंगा के मच्छ और देवी के सिंह आदि वाहन यथा योग्य ही नियुक्त किए गए हैं। क्या कारण है कि गणेश जैसे दीर्घकाय मूषक पर चलें-लक्ष्मी जैसी सौभाग्य दायिनी उल्लु पर चढ़े। और कार्तिकेय जैसे सेनापति को मोर मिले। किन्तु इन देवों और वाहनों के नाम निर्देश रहस्यजनक हैं। जिस वस्तु पदार्थ या तत्वमें ब्रह्मा आदि देवताओं की कल्पना कीगई है उनके लिये कथित वाहन ही यथायोग्य हो सकते हैं और तभी उन देवताओं से अभीष्ट सिद्धि प्राप्त हो सकती है।

पूर्वोक्त-देवताओं के आर्ष प्रणीत ध्यान का ध्यान देकर विचार किया जाय तो विदित हो सकता है कि उक्त देवता देवलोक में, भूतल में और ध्यानकर्ता के शरीर में किस रूप से प्रविष्ट होकर कैसे २ काम करते हैं। और उस समय उनके लिये मूषक, मयूर, या उलूकादि वाहन ही काम दे सकते हैं। यह विषय विस्तार से लिखा जाय तो उपयोगी हो सकता है।

त्रिदेव रहस्य ।

थोड़े दिन पहले हमने 'माधुरी' में तीन महा शक्तियां शीर्षक लेख में यह विदित किया था कि महाकाली, महालक्ष्मी और महासरस्वती क्या हैं और किस प्रकार उनकी उपासना से उपासकों को फल मिलता है उसी प्रकार हमारा विचार है कि त्रिदेव (ब्रह्मा विष्णु महेश) कौन हैं और किस प्रकार उपासना करने से उपासक लोग वास्तविक फल लाभ कर सकते हैं। इस विषय में किसी समय विस्तार से लिखा जायगा। इस जगह केवल इतना ही लिखा जासकता है कि त्रिदेवरहस्य बड़ा ही उपयोगी है और उसका ज्ञान होना नितांत आवश्यक है। अस्तु।

पुराण और ऐतिहासिक खोज ।

इन दिनों प्राचीन कालके देश, ग्राम, मकान नद, नदी, तालाव, जातियों, प्राणियों और अस्थिपंजरों आदि की बड़ी सरगर्मी से खोज की जारही है। साथ ही ऐतिहासिक विषयों, व्यक्तियों और अन्यान्य प्रकार की सामग्रियों का भी अनुसंधान किया जारहा है।

बड़े २ इतिहास वेत्ता पुरातत्त्व वेत्ता और

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

भूगर्भ विद्याविशारद विद्वान् लोग अपरिमित धन व्यय के द्वारा उत्तम प्रकार के आयोजनों से पृथ्वी के पेट को फाड़ कर नदियों के प्रलंब तीरों को चीर कर और अति विशाल पर्वतों के उच्चतम शिखरों को फोड़कर उनमें से प्रतिवर्ष कुछ न कुछ सामग्री निकाल ही लेते हैं।

इस प्रकार से निकाले हुये सामान में या वस्तु पदार्थों में वहुत से पदार्थ या सामान बहुमूल्य विलक्षण-और आश्चर्यकारी होते हैं। इस सम्बन्ध में भी पुराण बड़े हितसाधक और प्रवीण सहायक हो सकते हैं।

यदि पुराणोंमें वर्णन किये हुये विचित्र देशों विविध नगरों और आश्चर्य जनक वस्तु पदार्थों या जीव जन्तुओं आदि का वैज्ञानिक दृष्टिसे विचार किया जाय तो जो लाभ लाखों रुपये के खर्च से होता है वह लाभ पुराणों के अवलोकन से वड़ी सरलता और सुगमता से हो सकता है इस विषय में पुराणों को निपुण पुरातत्ववेत्ता या भूगर्भित पदार्थों के पूर्ण ज्ञाता और द्रष्टा समझने चाहिये।

सर्वश्रेष्ठ पुराण कौन है ?

इस प्रश्न का उत्तर कई प्रकार से दिया गया है। यों तो प्रत्येक पुराण में उसकी उत्तमता प्रतिपादन की गई है। किन्तु सांप्रदायिक भेद से प्रत्येक सम्प्रदाय अपने अपने सम्प्रदाय के पुराण को सर्व श्रेष्ठ समझता है। यथा—वैष्णव विष्णुपुराण को-शैव शिवपुराण को-और शाक्त मार्कण्डेय पुराण को-उत्तम समझते हैं। इसी प्रकार अन्यान्य सम्प्रदाय अन्यान्य पुराणों को सर्वश्रेष्ठ मानते हैं।

किन्तु प्रत्येक पुराण में एक एक विद्या एक एक देवता-एक एक विषय—या-एक एक प्रकार का प्रधान रूप से वर्णन किया है। और सर्वापेक्षा उसी को उत्तम या सर्वोत्कृष्ट बतलाया है।

किसी भी देवोपासक की प्रसन्नता या अनुराग—वृद्धि के लिये उसके देवताका उस पुराण में प्राधान्य प्रकट किया है। और उस उपासक की मति-गति-और भक्ति को तल्लीन बना देने की पूर्णतया चेष्टा की गई है।

अतः प्रत्येक विषय के पुराण प्रेमी या उपासक के लिये प्रायः प्रत्येक पुराण ही सर्वश्रेष्ठ है परन्तु सार्वजनिक दृष्टि से अष्टादश पुराणों में ब्रह्मपुराण और भागवत पुराण अधिक महत्व के माने गये हैं।

पुराणों की सार्वभौमिकता।

अठारह पुराणों का आरम्भ से अन्त तक अच्छी तरह ध्यान देकर अवलोकन किया जाय तो यह बात सहज ही समझ में आ सकती है कि पुराण सार्वभौमिक हैं।

भूपृष्ठ परके प्रायः सभी द्वीप द्वीपान्तरों लोक प्रति लोकों—देश प्रान्त नगरों-जनाकीर्ण शहरों जन शून्य भयंकर वनखण्डों-सुरम्य महलों शुघूप्राय पर्णकुटीरों-दुस्तर नदियों-भूगर्भगत गर्तों पातालवासियों-और आकाश पाताल तथा पृथ्वी के प्रत्येक वस्तु पदार्थ या प्राणियों का पुराणों में पूर्णतया वर्णन किया गया है।

साथ ही उनके रहन-सहन वर्ताव व्यवहार वेशभूषा-निवृत्ति प्रवृत्ति और परिस्थिति आदि का यथोचित या यथार्थ उल्लेख भी हुआ है। अतएव पुराण अवश्य ही सार्वभौम हैं।

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

पौराणिक प्रयोग।

पूजा, उपासना, सदनुष्ठान, और अन्यान्य प्रकार के प्रयोजनीय प्रयोगों का भी पुराणों में विस्तृत वर्णन किया गया है।

किसी देवता की पूजा का प्रकरण आ गया है-किसी प्रसङ्ग में मारण मोहन उच्चाटनादि बतलाने की आवश्यकता हो गई है। किसी युद्ध यात्रा या महोत्सवादिका संयोग मिल गया है। किसी प्रकार की उपासना करने का अवसर आ गया है योग सम्बन्धी विधि बताना जरूरी हो गयी है। या भक्ति-श्रद्धा-स्तुति-अनुरक्ति और विरक्ति आदि का विषय आगया है तो उस विषय की प्रायः सभी ज्ञातव्य बातें सभी प्रकार के विधिविधान और सभी प्रकार के प्रयोग पुराणों में भली भांति वर्णन किये गये हैं। प्रयोग सम्बन्धी बातें जानने के लिये पुराणों में प्रवीण होने की परम आवश्यकता है। इसके बिना उनके किये हुये कई एक वर्णनों से बहक जाना भी संभव है।

गरुड़, भविष्य, अग्नि, मार्कण्डेय।

यदि पुराणों की त्रिविध भाषा का ज्ञान हो यदि उनकी रूपकात्मक या आलंकारिक वर्णन शैली आती हो और प्रयोग में आये हुये अनेकार्थ वाची शब्दों के प्रसंगानुकूल अर्थ करने की क्षमता हो तो अनभिज्ञ लोगों की दृष्टि से जितने पुराण या पुराणों के विषय निरर्थक अथवा कपोल कल्पित प्रतीत होते हैं उनकी सार्थकता भलीभांति मानी जा सकती है।

लोगोंको इस बातका बहुत कम बोध है कि जिस प्रकार अग्निपुराण से अनेक प्रकार के आग्नेय प्रयोग, गरुड़पुराण से अनेक प्रकार के गारुड़ी प्रयोग, और मार्कण्डेय पुराण से अनेक प्रकार के शाक्त प्रयोग सम्पन्न किये जा सकते हैं उसी प्रकार अन्य पुराणों से अन्य प्रकार के प्रयोग भी सिद्ध किये जा सकते हैं। परन्तु खेद की बात है कि लोग प्रच्छन्न या गुढ़तम रहस्यों को बिना जाने बूझे ही कोई भविष्य पुराण को कोई गरुड़ पुराण को और कोई मत्स्यपुराण को प्रक्षिप्त या निरर्थक बतलाते हैं। और उनके रूपकात्मक विषयों को लेकर पौराणिकों की दिल्लगी उड़ाते हैं।

परिशिष्ट।

यह बात अवश्य है कि पुराणों में प्रक्षिप्त अंश भी हैं। और कई एक विषय अनेकवार भी कहे गये हैं। किन्तु इसका कारण यह है कि जिस समय भगवान् वेदव्यास ने अष्टादश पुराणों का निर्माण किया उस समय पुराणसंहिता का सार भाग और अन्यान्य मान्य महर्षियों के बनाये हुये पुराणों का आंशिक स्वरूप हृदयंगम करके अठारह पुराण निर्माण किये थे। और उनमें अपने अभिमत के साथ प्राचीन पुराणों के कई एक कथाभाग ज्यों के त्यों रख दिये थे। उन्हों ने इस बात का भी ध्यान रक्खा था कि आगे जाकर पुराणों का सूत के द्वारा प्रचार होगा अतः कथाप्रसंग का प्रारम्भ सूत के नाम से ही किया था।

भगवान् वेदव्यास ने (१) ब्रह्म १०००० (२) पद्म ५५००० (३) विष्णु २३००० (४) वायु-शिव २३००० (५) भागवत १८००० (६) नारद १५००० (७, मार्कण्डेय ९००० (८) अग्नि १५००० (९) भविष्य १४००० (१०) ब्रह्मवैवर्त्त १८००० (११) लिङ्ग ११००० (१२) वराह २४०००

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

(१३ स्कन्द ८१००० (१४) बामन १०००० (१५) कूर्म १७००० १६। मत्स्य १८००० (१७) गरुड़ १६००० और ब्रह्माण्ड पुराण १२००० ये अष्टादश पुराण बनाए थे।

कुछ लोग पूछ सकते हैं कि ठीक १८ पुराण बनाने ही से क्या प्रयोजन था? इसके उत्तर में यह कहना अनुचित न होगा कि प्रथम तो आदि पुराण जिसको मान्य महर्षियों ने १८ भागों में विभक्त किया था। तदनुसार व्यास ने भी अठारह पुराण ही निर्माण किए। दूसरे त्रिगुणात्मक मनुष्यों की प्रकृति १८ भागों में बँट जाती हैं अतः अठारह भेदों के उपकार और सानुकूलता के लिए अष्टादश पुराण संपादन किए थे।

इन अठारह पुराणों में एक विशेषता और है। वह यह है कि प्रथम तो वेदों के समान ही पुराण भी प्रकट हुये थे अतः वेदोंसे इनका दर्जा कम नहीं है। दूसरे सांप्रदायिक मतभेद या शास्त्रीय आज्ञा से स्त्री और शूद्र वेदों के अधिकारी नहीं होते। किन्तु पुराणों के पठन पाठन मनन अवलोकन, पूजा उपासना, नवधाभक्ति, और प्रयोग साधना आदि में स्त्री और शूद्रों की कोई मनाही नहीं है। अस्तु।

अब हम यह लिख कर इस लेख को समाप्त कर रहे हैं कि इसमें जो कुछ भी लिखा गया है अति संक्षेप है। किन्तु प्रस्तुत 'पुराणांक' में उपरोक्त सब बातों के विषय में बड़े २ अनुभवी और सुयोग्य विद्वानोंके एक २ विषय पर अलग अलग लेख अंकित हुये हैं उनसे विदित होगा कि हमारे लिये पुराण कैसे सर्वोत्कृष्ट बहुमूल्य रत्न हैं। और हम केवल उन्हीं के प्रभाव और प्रचार से भारत का कितना अधिक उपकार कर सकते हैं।

SRI JAGADGURU VISHWARADHYA
JNANA SIMHASAN JNANAMANDIR
LIBRARY.
Jangamwadi Math, VARANASI.
Acc. No. ....

खास 'ब्राह्मण-सर्वस्व' के 'पुराणांक' के लिये।

पुराणों की उपयोगिता।

लेखक—प्रोफेसर श्री रामदास जी गौड़, ऐम्० ए० गुरुकुल कांगड़ी (हरद्वार)

कोई डेढ़ वर्ष हुये "विश्वमित्र" में पं० नेकीराम शर्मा का एक पत्र छपा था, कि पुराणों के परिमार्जित संस्करण निकलने चाहिये। उनकी इस नेक सलाह में मैंने नेकी नहीं देखी। जब से महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती ने पुराणों को गप्प ठहराया, और अप्रामाणिक माना, तब से पाश्चात्य आलोचकों की ऊटपटांग आलोचनाको बड़ी मज़बूत मदद मिल गयी, और विद्वानों में पुराणों के अनुशीलन की ओर बची खुची प्रवृत्ति भी घट गयी। हम लोगों की मानसिक दासता की यह दशा है, कि स्वतन्त्र विचार करने के लिये हम कभी हिम्मत नहीं बांधते, और न पूरा प्रयास करते हैं पाश्चात्य आलोचक जो कहते हैं उसको हम झटपट सही मानने को तैयार हो जाते हैं। अच्छी चीज़को भी मज़ाक में उड़ा देने वाले और सस्ती निन्दा करने वाले ऐसी ही मनोवृत्ति में आश्रय पाते हैं। पिछले पचीस वर्षों में इतिहास के विशेषज्ञों ने पुराणों के तथा कथित अछूत साहित्य का थोड़ा बहुत उद्धार किया। पार्जिटर और विन्सेएट स्मिथ ने पुराणों

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

से खोज २ कर और तामपत्रों और शिला लेखों से मिला २ कर भारत के प्राचीन इतिहास का बहुत कुछ पता लगाया। और जब उन्होंने पुराणों की प्रशंसा की तब फिर भारतीय ऐतिहासिकों का ध्यान पुराणों की ओर गया।

पुराणों की आलोचना करने वाले इस बात पर बड़ा ज़ोर देते हैं कि पुराणों में से कई नये हैं, हाल के बने हुये हैं और वेदव्यास का रचा तो पुराने पुराणों में से एकभी नहीं मालूम होता बहुत से विद्वानों की इसमें सम्मति है कि पुराण अपने प्राचीन रूप में नहीं हैं। विविध सम्प्रदाय वालों ने अपने २ मतानुसार उनके पाठ में घटायां–बढ़ाया है। यह अवश्य ही बड़ा भारी दोष है। पाठ में फेरफार करना महाअनर्थ है, और ग्रन्थकार के साथ घोर अन्याय है। यह एक ऐसी बात है जिसमें कोई विद्वान् अपनी असहमति नहीं प्रकट कर सकता। अब पंडित नेकीराम शर्मा के परिमार्जित संस्करण निकालने वाले प्रस्ताव पर जब हम दृष्टि डालते हैं तो हमको दो दोष देख पड़ते हैं एक तो यह कि परिमार्जन करना वैसी ही अनधिकार चेष्टा है जैसे किसी सम्प्रदाय वालेका अपने मतलब के श्लोक बढ़ा देना। जैसे बढ़ाने वाला ईमानदारी के साथ कोई कमी समझ कर पूरी करता है उसी तरह घटाने वाला ईमानदारी के साथ अपने विचारानुसार कुछ श्लोक अनुचित समझकर निकाल देता है। परन्तु इस तरह के काम करने वाले चाहे अकेले २ हों चाहे समिति के रूप में मिलकर काम करते हों दोनों प्रकार के लोग अनधिकार चेष्टा करते हैं। दूसरा दोष यह है कि जब परिमार्जन करने वाले साम्प्रदायिकता या नव्यता के दोष को मिटाने के लिये बैठेंगे, तो यदि भिन्न सम्प्रदाय के हुये तो पुराणों को सचमुच साम्प्रदायिकतासे अर्थात् पुराणत्व से ही खाली कर देंगे। पुराणों को पंच लक्षण कहते हैं, परन्तु बात यहीं खतम नहीं होती। पुराणों में ब्राह्म वैष्णव और शैव तीन प्रकार के विभाग हैं। और उनमें भी सौर शाक्त आदि प्रभेद हैं। जो पुराण जिस सम्प्रदाय के हैं उसी का पोषण करते हैं। नासमझ लोग इसे ही पारस्परिक विरोध समझते हैं। परन्तु विरोध रत्ती भर नहीं है। सम्पूर्ण १८ पुराणों को पढ़ने वाला पुनरुक्ति और असंगति अवश्य पाता है। परन्तु इसका कारण यह है कि इतने बड़े विशाल देश में पांच हजार वर्ष के विशाल काल में, कई लाख श्लोकों के विस्तार में लेख प्रमाद की भी तदनुरूप विशालता क्या कोई आश्चर्य की बात है? असल बात तो यह है कि साम्प्रदायिकता तो महाभारत काल में भी मौजूद थी, और यदि वेदव्यास के भी "रचे हुये" सब पुराण मान लिये जांय तो भी उनका साम्प्रदायिकता से खाली होना असभंव और अस्वाभाविक है। क्या कोई सम्प्रदाय ऐसा भी है जो अपनी बुनियाद वेद के मंत्रों में न देखता हो और संहिताओं की पंक्तियों पंक्तियों में न पाता हो? वैष्णव, शैव, सौर, गाणपत्य और शाक्त सभी तो अपने अपने को वेदों के आधार पर बना हुआ बताते हैं। क्या शैव अपने सम्प्रदाय को रुद्राध्याय रुद्र अथर्वशीर्षादि से पुष्ट नहीं करता? क्या वैष्णव पुरुष सूक्तादि से काम नहीं लेता? कौन ऐसा सम्प्रदाय है जो अथर्व शीर्षों की नींव पर अपनी इमारत नहीं उठाता?

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

फिर वह सम्प्रदाय जो वेदों के आधार पर हैं पुराण से बाहर कैसे निकाले जा सकते हैं?

पुराणों के भिन्न २ संस्करणों में किसी २ में बहुत पाठभेद है। परन्तु यहां भी परिमार्जन की कोई आवश्यकता नहीं दिखाई पड़ती। मैं तो इतनी हिम्मत नहीं रखता कि किसी संस्करण में पाठ के साथ हेर फेर करूं। मेरी समझ में तो जिस तरह का पाठ उपलब्ध है उस तरह के पाठ की पूरी रक्षा होनी चाहिये और विद्वानों के सामने तो ज्यों का त्यों पाठभेद आना चाहिये। यह उनका काम है कि वह यह विचार करें कि क्या साधु है और क्या असाधु। वस्तु पुरानी है इसी लिये वह अवश्य ही साधु होगी, और नयी है इसलिये अवश्य ही असाधु है, यह कहना युक्तियुक्त नहीं है। सत्य तो सभी रूपों में निहित हो सकता है, उसी की खोज करना उचित है। यह बात विद्वानों पर छोड़ देनी चाहिये कि किस ग्रन्थ में कौन सा पाठ ग्राह्य है और कौन सा त्याज्य। हम उत्तम संस्करण उसी को कहेंगे जिसमें सब तरह के उपलब्ध पाठान्तर दिये गये हों और सम्पादक ने अपनी ओर से किसी तरह का फेर फार न किया हो।

बम्बई और पूने के प्रकाशकों ने पुराणों के अच्छे २ संस्करण बड़ी खोज से निकाले हैं। कुछ के हिन्दी भाषान्तर भी निकले हैं। परन्तु जो भाषान्तर निकले भी हैं वह उतने अच्छे सम्पादित और प्रामाणिक नहीं हैं जितने कि संस्कृत के संस्करण हैं। भाषान्तर से उनके पठन पाठनका प्रचार तो होता है। परन्तु उनके पढ़ने में वह रस नहीं आता जो अच्छे व्यास के मुख से सुनने में आता है। मुझे तो ऐसा समझ में आता है कि हर एक पुराण प्रौढ़ जनता की साधारण शिक्षा के लिए सङ्कलित किया गया है। सर्वसाधारण में वेदों और वेदाङ्गों की शिक्षा फैलायी नहीं जा सकती। वह तो ऐसे मज़बूत संदूक में बंद है जिसकी चाबी उत्कृष्ट विद्वानों के पास है।

वेद वेदाङ्गों का जनता में न तो कभी प्रचार संभव था न आज है। वेदों का डंका भले ही बज गया, परन्तु आर्यसमाज भी आजतक चारों वेदों का जानने वाला एक भी प्रकांड पण्डित पैदा न कर पाया। यदि हम को पं० मधुसूदन झा का गर्व है तो वह आर्यसमाज की सम्पत्ति नहीं हैं। कहने का तात्पर्य यह कि वेद वेदांग जनता की चीज नहीं है। उपांगों में पुराण इतिहास स्मृति और तन्त्र अवश्य ही जनता की शिक्षा के लिये हैं। परन्तु यह शिक्षा सर्व साधारण को व्यासों से ही मिल सकती है। साधारण जन समुदाय फिर भी पुराणों के गहन विषय को बिना शिक्षक के केवल भाषान्तर के आधार पर समझ नहीं सकता। भाषा समझने की योग्यता से ही मनुष्य उसमें व्यक्त किये हुए विषयों को समझने में सदा सक्षम नहीं हो सकता, यदि ऐसी ही बात न होती तो शिक्षार्थियों को पढ़ना लिखना सिखा देना ही पर्याप्त हो जाता।

यह बात तो आर्यसामाजिक और सानातनिक दोनों ही मानते हैं कि वेदों में बीज रूप से अथवा सूत्र रूप से इस सृष्टिमें त्रिकाल में जानी जाने वाली समस्त विद्यायें मौजूद हैं परन्तु वह उन्हीं को उपलब्ध हैं जो यथार्थ रूप से वेद तत्त्वार्थ तक पहुँच चुके हैं। ऐसे लोग इस सृष्टिमें अवश्य हैं परन्तु काल की आवश्यकता के अनुसार वह हमें प्राप्य नहीं हैं। इन्हीं आने वाली

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

बातों के ऊपर विचार करके वेदव्यास ने वेदों की व्याख्या के रूप में पुराणों, स्मृतियों और इतिहासों का सङ्कलन किया, और जिन बातों को जानकर जनता को लाभ उठाना था, विविध पुराणों में उनका समावेश किया, वेदाध्ययन के अधिकार का प्रश्न भी वस्तुत महत्वपूर्ण है। सचमुच जिसने उपाङ्गों और अंगों का पूरा परिशीलन नहीं किया है उसकी समझ में वेद आ ही नहीं सकते। "काता और ले दौड़े" वालोंके लिये वेदाध्ययन नहीं है। फिर उनके सिवा शारीरिक मानसिक और आध्यात्मिक योग्यता तपस्या और सदाचार, वेदाध्ययन के लिये अनिवार्य हैं। सच्ची शिक्षा वही है जो गुरुमुख से निकल कर शिष्यके सदाचार में परिणत होजाती है। ऐसा न हुआ तो शिक्षा व्यर्थ है। वशिष्ठ स्मृति कहती है—

आचारहीनं न पुनन्ति वेदाः,
यद्यप्यधीताः सहषड्भिरंगैः।
छन्दांस्येनं मृत्युकाले त्यजन्ति,
नीडं शकुन्ता इव जातपक्षाः॥

जब सच्ची शिक्षा की कसौटी यही है तब तो अधिकार का निर्णय आचार्य्य के ही हाथ में होना चाहिये। आजकल जो मुकाबले के इम्तहानों का सिलसिला जारी हो गया है और परीक्षा पास कर करके जो अधिकार प्राप्त कर लेने की पद्धति बन गई है, जिसमें प्रकृत आचार्य्य से और शिष्य से कोई सम्बन्ध नहीं है, यह तो अभिनव-आसुरी परिपाटी चल पड़ी है। प्राचीन कालमें अधिकारी और अनधिकारी का निर्णय आचार्य के अधिकार में था, केवल शौक़ या उत्साह होने से कोई अधिकारी नहीं बन बैठता था और यह मान भी लें कि सत्यकाम जाबाल तकको स्वीकृत करलेने वाले ऋषि अगर किसी सच्चे अधिकारी को भी किसी प्रकार की भूल से अस्वीकार कर देते तोभी अधिकारी की हानि नहीं होती, वह तो एकलव्य की तरह अपने इष्ट को प्राप्त कर ही लेता है। परन्तु वेदव्यास जी ने "यथेमां वाचं कल्याणी" इत्यादि श्रुति की आज्ञा के अनुसार उसी कल्याणी वाणी को सर्वसाधारण तक पहुँचने के लिये व्याख्या रूप पुराणों का सङ्कलन किया। इधर आजकल के लोगों ने श्रुति की इस महती आज्ञा को अद्भुत रीति से समझ रक्खा है। या तो वह समझते हैं कि बिगाड़ कर उच्चारण किये हुये और दुर्बोध मन्त्रों को जिस तिस तरह पढ़ लेना और ईसाई मुसलमान आदि विधर्मियों का मुंह बन्द करने के लिये वेदों के केवल एकेश्वर वाद वाले ही अर्थ को जान लेना और बता देना श्रुति की उस आज्ञा का पालन है। वह इस तात्पर्य को नहीं समझे हैं कि इस आज्ञा का वास्तविक अभिप्राय सर्वजन समुदाय में अच्छी शिक्षा का प्रचार है, जिसका मूल उद्गम वेदों में ही है।

पुराण और इतिहास हिन्दू-संस्कृति के विश्वकोष हैं। जो विद्यायें पुराणों और इतिहासों में हैं वह कहीं और नहीं हैं। हिन्दू संस्कृति के लिये यही परम निधि है। इनके ही पुनरुद्धार और प्रचार में हिन्दू संस्कृति की रक्षा है। सर्वसाधारण की शिक्षा के लिये फिर से कथा कहने की प्रथा चलानी चाहिये। और इन कथाओं के द्वारा आजकल की अभिनव विद्याओं को भी पुराण की कथाओं के साथ सम्मिलित कर लेना चाहिये। पुराण तो पुरानी चीज़ है नाम से ही

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

प्रकट है। विद्वान् व्यासों को चाहिये कि उन में से ऐसी वस्तुओं का प्रचार करें जिनसे प्रजाका साम्प्रतिक कल्याण हो और अभिनव आसुरी विज्ञान और कला से भी वह अंश समाविष्ट करें जिनसे प्रजा वर्तमान संसार से अवगत रहे।

पुराणों से इतिहास, भूगोल, धर्मशास्त्र,सृष्टि विज्ञान, आयुर्वेद, वनस्पति विद्याओं की शिक्षा मिल सकती है। जहां जिस तरह जैसे पुराण की आवश्यकता हो, वहां उस तरह वैसे पुराण सुनाये जांय। सभी पुराणों के सभी विषय सुनाये जाने योग्य नहीं होते। ऐसे भी विषय हो सकते हैं जिनको विधिपूर्वक पढ़ाये बिना काम ही नहीं चल सकता। जैसे व्याकरण निरुक्त, पिंगल, गणित, ज्योतिष आदि वेदाङ्ग के विषय बहुत मनोयोग पूर्वक पढ़ाने योग्य हैं। कोई चाहे कि अग्निपुराण की कथा व्यास गद्दी से कह दे, तो उस पुराण में कथा सुनाने योग्य अंश बहुत नहीं मिलेंगे। व्याकरण के नियमों की कथा या छन्द के लक्षणोंकी कथा, या संस्कृत और वैदिक शब्दों के निर्वचन की कथा, या काव्य की रीतियों की कथा भला क्या कोई कहेगा, और सुनने वाला कितना लाभ उठावेगा? इन सब विषयों के विशद वर्णन अग्निपुराण में मौजूद हैं। किसी सज्जन ने "स्वदेश" में यह बहुत अच्छी सलाह दी है कि मैं अग्नि पुराण का भाषान्तर करके छपवा दूं। इस सलाह के लिये मैं उक्त सज्जन को धन्यवाद देता हूँ। परन्तु मुझे भी इस सम्बन्ध में आवश्यक वक्तव्य है। पहले तो मैं अपने में उतनी पर्याप्त योग्यता नहीं पाता दूसरे इन विषयों के भाषान्तर को पढ़कर लोग बहुत कुछ लाभ उठा लें, इस बात की बहुत सम्भावना नहीं दीखती। यह विषय ही ऐसे हैं कि बहुत अच्छे अध्यापक के मुख से ही इनकी व्याख्या हो सकती है, और अध्येता को ठीक विधि से पढ़ाकर ही यह विषय हृदयङ्गम कराये जा सकते हैं। व्याकरण के नियमों के भाषान्तर हुए हैं। मैं जब स्वयं छात्रावस्था में था, तो पं० मथुराप्रसाद मिश्र की हिन्दी में अनुवाद की हुई लघुकौमुदी पढ़ता था। सूत्र थे, वृत्तियां थीं और मिश्र जी का हिन्दी भाष्य था, परन्तु मुझे अपनी इस अयोग्यता के स्वीकार करने में तनिक भी संकोच नहीं है, कि मिश्र जी के हिन्दी भाष्य से मुझे रत्ती भर भी सहायता न मिली जबतक मैंने अपने पूज्य गुरुके श्रीमुख से ठीक २ व्याख्या न सुनी। और यह मेरी छात्रावस्था भी ऐसी थी, कि मैं उस समय कालेज में एफ० ए० में पढ़ता था। मुझे तो भाषान्तरों से सन्तोष नहीं होता। मैं तो समझता हूँ कि अब जो राष्ट्रीय पाठशालाएं और विद्यालय बनें उनमें हिन्दी का अच्छा ज्ञान हो जाने के बाद संस्कृत का पाठ्य विषय चुन २ कर अग्निपुराणसे ही रखना चाहिये। व्याकरण पढ़ाना हो, पिंगल पढ़ाना हो, काव्यरीति पढ़ानी हो तो उसी में से पढ़ाना चाहिये, और ऊंचे दर्जों तक पहुंचते २ उसके अठारह हजार श्लोक समाप्त कर देने चाहिये। यदि पुराण और इतिहास हिन्दू संस्कृत के पूर्ण विश्वकोष हैं तो अग्नि पुराण उसी विश्व कोष का संक्षिप्त संस्करण है। इस पुराण को आदि से अन्त तक पढ़ जाने वाला हिन्दुत्व की पूरी ऊंचाई तक पहुँच जाता है।

हिन्दुत्व से मेरा तात्पर्य यहां साम्प्रदायिकत्व

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

नहीं है। मेरा तात्पर्य केवल उस संस्कृति से है जो भारत की पवित्र भूमि के कण २ में व्याप्त रही है, जिसमें विश्वबन्धुत्व का उदार भाव है, विश्वनागरिकत्व की समीचीन कल्पना है। और यदि हम पच्छाहीं सिविलजेशन को आसुरी सभ्यता कहें तो दैवी संस्कृति ही हम जिसे कह सकते हैं। इस संस्कृति के अन्तर्गत बौद्ध, जैन चार्वाक आदि नास्तिक सम्प्रदाय और सांख्य आदि आस्तिक सम्प्रदाय सभी शामिल हैं। हिन्दुत्व किसी सम्प्रदाय का विरोधी नहीं है सब सम्प्रदायों का पोषक है। संसारकी परिधि से और प्रवृत्ति मार्ग के वृत्त के भीतर जितने धर्म हैं, सम्प्रदाय हैं, पन्थ हैं सब के सब एक मात्र केन्द्र परमात्मा की ओर जाते हैं। हिन्दुत्व में विश्वग्राहित्व हैं। हिन्दुत्व किसी को अपने से बाहर निकाल कर नहीं फेंकता। इसका हृदय संकीर्ण नहीं है। उसके विशाल हृदय में अखिल विश्व के लिये स्थान है।

पुराणों में सूर्य चन्द्र वंश।

(लेखक-पंडित रामगोविन्द त्रिवेदी वेदान्त शास्त्री सम्पादक "गङ्गा")

सृष्टिकर्ता ब्रह्मा के छठे मानस पुत्र तथा प्रजापति महर्षि मरीचि द्वारा कला नाम की स्त्री से उत्पन्न पुत्र का नाम कश्यप है। इन्हीं के पुत्र का नाम हुआ सूर्य, जिनसे सूर्य वंश की उत्पत्ति हुई है। सूर्य के पुत्र का नाम वैवस्वत मनु और पौत्र का इक्ष्वाकु है। वैवस्वत मनु की पुत्री इला से चन्द्रवंश की उत्पत्ति हुई है। इलाके पति का नाम बुध और श्वसुर का चन्द्र है। बुध के पिता के ही नाम पर चन्द्रवंश चला है। सूर्यवंश के इक्ष्वाकु, पृथु, मान्धाता, सगर, भरत, दिलीप, रघु, श्रीराम, कुश, निमि अम्बरीष आदि और चन्द्रवंश में पुरूरवा, नहुष, ययाति, यदु, भरत, पुरु कुरु, धृतराष्ट्र, युधिष्ठिर, श्रीकृष्ण, बलराम वृष्णि, वसुदेव आदि प्रातःस्मरणीय तथा प्रबल प्रतापी राजा महाराजा होगये हैं। इन्हीं दोनों वंशों के हाथ प्राचीन आर्यजाति का शासन दण्ड था। विष्णु पुराण, रामायण, ब्रह्मपुराण, हरिवंश, अग्निपुराण, शिवपुराण, श्रीमद्भागवत, महाभारत, देवीभागवत और बृहद्धर्मपुराण में सूर्यवंश तथा विष्णु पुराण, महाभारत, हरिवंश श्रीमद्भागवत अग्निपुराण और ब्रह्मपुराण में चन्द्रवंश की वंशलता कीर्ति काहिनी एवं आधिपत्य विस्तार से वर्णित है। जिस तरह रामायण में त्रेतायुग में सूर्यवंश की प्रधानता लिखी गई है उसी तरह महाभारत में द्वापर युग में चन्द्र वंश का प्राधान्य परिकीर्तित है। इसके सिवा वेद से लेकर तन्त्र-शास्त्र तक सहस्र कण्ठों से इन्हीं आर्य रक्षक दोनों वंशों का कीर्ति गान कर रहे हैं।

यह सब होते हुए भी इन दोनों वंशों की वंश लताओं और कथानकों में विविध ग्रंथों में स्थूल दृष्टि से अमिट मत-भेद है, अमार्जनीय विशृङ्खलता है और संदिग्ध विसदृशता है। पीढ़ी दर पीढ़ी की बातें तो जाने दीजिये दोनों वंशोंके प्रवर्त्तकों में ही काफी मतभेद है। यजुर्वेद की तैत्तिरीय संहिता के अनुसार सूर्यवंश के प्रवर्तक

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

श्री पं० रामगोविन्द त्रिवेदी, वेदान्त शास्त्री सम्पादक 'गङ्गा'।

BRAHMA PRESS ETAWAH.

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

कश्यप ब्रह्मा के पुत्र हैं और रामायण, श्रीमद्भागवत, देवी भागवत अग्निपुराण तथा बृहद्धर्मपुराण के मतानुसार ब्रह्मा के छठे मानस पुत्र मरीचि के पुत्र का नाम है कश्यप। इसी तरह हरिवंश, भागवत और विष्णु पुराण आदि के अनुसार बुध ने इला या इड़ा से शादी की थी और कितने ही पुराणों के अनुसार चन्द्र ने ही इला से शादी की थी। इसके अतिरिक्त किसी २ पुराण में इला को स्त्री न मान कर सुद्युम्न नाम का पुत्र भी माना है।* ऐसा भयंकर असामञ्जस्य हमारे इतिहास के लिये भ्रान्ति कारक है।

तेंतालीस लाख बीस हज़ार वर्षों की एक चतुर्युगी होती है या इतने वर्षों में सत्य, त्रेता, द्वापर, और कलि आदि चारों युग बीतते हैं। इधर रामायण, महाभारत या पुराणों को देखने से विदित होता है कि सूर्यवंश के आदिम राजा इक्ष्वाकु, निमि, अम्बरीष, मान्धाता आदि और चन्द्रवंश के पुरूरवा, नहुष, रजि, दिवोदास, आदि सत्युग में ही हुए थे। पुराणों की वंशावली देखने से मालूम पडता है कि, सूर्य से बृहद्वल राजा तक सूर्यवंश में छानवे राजा और चन्द्र वंश में बुध से श्रीकृष्ण † तक इक्यावन राजा गुजरते हैं। यदि प्रत्येक राजा का शासन काल मोटे हिसाब से बीस-बीस वर्षों का मान लिया जाय तो 'सूर्य वंश के राजाओं का शासन काल एक हज़ार नौ सौ अस्सी वर्षों और चन्द्र वंश के राजाओं का एक हज़ार बीस वर्षों में हो समाप्त होजाता है। पश्चिमी विद्वानों की खोज के अनुसार बृहद्वल और श्रीकृष्ण के ग्यारह सौ वर्ष वर्ष बाद विक्रमादित्य हुए थे एवं विक्रमादित्य के काल से अब तक एक हज़ार नौ सौ सतासी वर्ष होचुके हैं। इस तरह सब मिलकर सूर्यवंशियों का शासन समय पांच हज़ार अट्ठावन और चन्द्र वंशियों का चार हज़ार अट्ठानवे वर्षों का हुआ। अब विचारने की बात यह है कि, यदि कलियुग और सत्ययुग के कुछ हिस्सों के लिये चार युगों में से तेरह लाख बीस हज़ार वर्ष भी निकाल दें तो भी तीन लाख वर्षों में केवल चार हज़ार अट्ठानवे और पांच हज़ार अट्ठावन वर्ष ही सूर्य-चन्द्र-वंश वालों ने राज्य किया है * इस दृष्टि से तो स्पष्ट मालूम पड़ता है कि, इन वंशों के हज़ारों लाखों राजाओं की नामावली अनन्त काल के अगाध गर्भ में विलुप्त होगयी है और दोनों वंशों की वर्तमान नामावली बिल्कुल अधूरी और सोलह आने छिन्न विच्छिन्न है। युगों का परिमाण सत्य मान लेने पर यह अनुमान करना कठिन हो जाता है कि, दोनों वंशलताओं में जो पुत्र-पौत्र आदि के नाम मिलते हैं, वे कहां तक प्रामाणिक और विश्वसनीय हैं। इस बात का विचार कर हमारी प्राचीनता पर टाडसाहब के भी विचार भ्रामक हो गये हैं। †

सूर्य-वंश-वृक्ष में असामञ्जस्य।

सभी पुराणों और महाभारत तथा रामायण के अनुसार सूर्य-वंश के सर्वोच्च और सर्व-प्रथम

---

* श्रीमद्भागवत (९ म स्कन्ध, १ म अध्याय) देवीभागवत (१ म स्कन्ध १२२ अध्याय) और विष्णु पुराण (४ र्थ अंश, १ म अध्याय) देखिये।

† बृहद्बल और श्रीकृष्ण दोनों ही द्वापर के अन्त में हुए थे।

* यहां लेखक ने सत्ययुग त्रेता और द्वापर में आयु का परिमाण क्या था इस पर विचार नहीं किया है, रामचन्द्र जी ने ११ हजार वर्ष राज्य किया था, इसी दृष्टि से अन्य राजाओं के राज्य शासन की गणना करने पर यह असामञ्जस्य न रहेगा। —सम्पादक ब्रा० स०।

† टाडसाहब का राजस्थन (CH. III.) देखिये।

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

राजा इक्ष्वाकु हैं। इनके विषय में प्रायः मतभेद नहीं हैं। परन्तु इनके ज्येष्ठ पुत्र विकुक्षि के बारे में भयंकर मत भेद है। सभी पुराणों के अनुसार विकुक्षि ज्येष्ठ पुत्र हैं और इनका एक नाम शशाद भी है। परन्तु रामायण के अनुसार इक्ष्वाकु के पौत्र का नाम विकुक्षि है। इसके सिवा सभी पुराण विकुक्षि के पुत्र का नाम ककुत्स्थ बताते हैं; परन्तु रामायण के मतानुसार विकुक्षि के पुत्रका नाम है बाण। रामायणमें भागीरथ के पुत्र और रघु के पिता का नाम ककुत्स्थ लिखा है।

इधर श्रीमद्भागवत में विकुक्षि के पुत्र का नाम है काकुत्स्थ। अब यहां कौन मत उपेक्षणीय है और कौन ग्राह्य? इसका निर्णय करना दुस्साध्य है। भागवत, हरिवंश, विष्णुपुराण और ब्रह्म पुराण के अनुसार ककुत्स्थ के पुत्र का नाम "अनेना" है; परन्तु अग्निपुराण के अनुसार सुयोधन, शिव पुराण के अनुसार अरिनाभ और देवी भागवत के अनुसार काकुत्स्थ है। और तो और, एक ही वाल्मीकि—रामायण में एक ही वसिष्ठ द्वारा कहे गये, सूर्य वंश में, घोर अनैक्य है। आदि काण्ड (७ वें सर्ग) में वशिष्ठ जी जनक से कहते हैं—"प्रशुश्रुक, अम्बरीष, नहुष, ययाति, अज, दशरथ आदि एकके एक पुत्र हैं" और फिर वे ही वशिष्ठ रामचन्द्र से अयोध्या काण्ड (११० सर्ग) में कहते हैं—"प्रशुश्रुक, अम्बरीष, नहुष, नाभाग आदि एक के एक पुत्र और नाभाग के अज तथा सुव्रत नामक दो पुत्र हुये,, एक ही वक्ता के मुंह से ऐसी सन्देह जनक बातों का निकलना कैसी विचित्र बात है! रामायण के अनुसार ब्रह्मा से सैंतीसवीं पीढ़ीमें श्रीराम हुये; परन्तु ब्रह्मपुराण उनसठवीं पीढ़ी, विष्णु पुराण अड़सठवीं पीढ़ी, हरवंश छप्पनवीं, अग्निपुराण छप्पनवीं, शिव पुराण त्रिपनवीं, भागवत सरसठवीं और बृहद्धर्म पुराण चालीसवीं पीढ़ी में सूर्यवंश में श्रीराम का होना बताते हैं। एक ही वंश के एक ही व्यक्ति के बारे में इतना असामञ्जस्य चित्त को घबरा देता है। रामायण में एक ही दिलीप हैं; परन्तु विष्णु पुराण, ब्रह्मपुराण भागवत और हरिवंश में दो दिलीप हैं। हरिवंश और ब्रह्मपुराण में तो दो रघु भी हैं। इसी तरह रामायण मान्धाता को पन्द्रहवीं, ब्रह्मपुराण तेईसवीं, विष्णु पुराण चौबीसवीं और हरिवंश इक्कीसवीं पीढ़ी में मानता है। रामायण में तो सूर्यवंश के उज्वल रत्न हरिश्चन्द्र का नाम ही नहीं है। मान्धाता की ही तरह सगर, भरत, भागीरथ आदि के वंश परिचय में भी पूरा मतद्वैध है। अम्बरीष और नाभाग के नाम में तो बेतरह गड़बड़ी है। ब्रह्मपुराण के अनुसार वैवस्वत मनु के पुत्र पौत्रोंका क्रमशः नाम नाभाग और अम्बरीष लिखा है। विष्णुपुराण में भी यहां ऐसी ही गड़बड़ी है कहां तक लिखा जा सकता है। आप चाहे जिस व्यक्ति का नाम ले लीजिये, उसकी पीढ़ी में अवश्य ही मत—भेद मिलेगा। किसी भी दो पुस्तकों की वंशलता से मिलाने से यह बात स्पष्ट हो जायगी।

इक्ष्वाकु के दूसरे पुत्र का नाम है निमि। मैथिल वंश के ये ही प्रवर्त्तक हैं। इनकी वंश—विवृत्ति केवल श्रीमद्भागवत और विष्णु पुराण में है। रामायण (आदि काण्ड ७१ वें अध्याय) में भी इनकी नाममात्र की वंशलता है; परन्तु यह बहुत ही खटकने वाली है। भागवत और विष्णुपुराण के अनुसार निमि के पुत्र का नाम

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

जनक,और जनक के ही वैदेह वा मिथि नाम भी हैं इधर रामायणके अनुसार निमि के पुत्र का नाम मिथि और पौत्र का नाम जनक है। भागवत और रामायण में जनक के पुत्र का नाम उदावसु लिखा है तथा विष्णु पुराण में नन्दिवर्द्धन। उधर रामायण और भागवत में उदावसु के पुत्र का नाम नन्दिवर्द्धन लिखा है।

समस्त पुराण सीता के पिता राजर्षि जनक का ही नाम "सीरध्वज" बताते हैं और रामायण के मत में जनक के पिता का नाम सीरध्वज है। चाहे जिधर देखिये, पूरी अनेकता दिखाई पड़ेगी।

विष्णु पुराण और श्रीमद्भागवत के अनुसार वैवस्वत मनु के एक नेदिष्ट या दिष्ट नाम के पुत्र हैं। इनकी वंशलता दोनों पुराणों में बड़ी लम्बी चौड़ी है। परन्तु दोनों में ही वंशलता की अनेकता बड़ी भयावनी है। इस वंश के मरुत नामक राजा बड़े ही प्रतापी, प्रसिद्ध और धार्मिक होगये हैं। विष्णुपुराण में ये मरुत अठारहवीं पीढ़ी में गिने गये हैं। भागवत में दिष्ट के प्रपौत्र का नाम वत्सप्रीति या वत्सप्रि और इनके पुत्र का नाम प्रांशु बताया गया है, परन्तु विष्णुपुराण में ये दोनों ही नेदिष्ट के प्रपौत्र माने गये हैं। विष्णु पुराण में प्रांशु के बाद यथाक्रम प्रजानि क्षुप, अविविंश, निविंश, खनीनेत्र, करन्दम, अविक्षि, मरुत, नरिष्यन्त, दम आदि नाम गिनाये गये हैं और भागवत में प्रांशु के बाद यथाक्रम प्रमिति खनित्र, चाक्षुष, विविंशति, रम्भ, खनीनेत्र, करन्दम, अविक्षित, मरुत्त, दम आदि नाम लिये गये हैं। नेदिष्ट वंश के अठाईसवें या भागवत के अनुसार उन्नीसवें पर्याय-भुक्त तृणविन्दु राजाके विशाल आदि पुत्रों का परिचय पाया जाता है। रामायण (आदि काण्ड सैंतालीसवें सर्ग) में भी विशाल वंश का कुछ २ परिचय दिया गया है। परन्तु परिचय में घोर मतान्तर है। रामायण में विशाल के बाद हेमचन्द्र, सुचन्द्र, धूम्राश्व, सृञ्जय, सहदेव, कुशाश्व, सोमदत्त, काकुत्स्थ, सुमति आदि नाम आते हैं। इस क्रम से विशाल की दशवीं पीढ़ी में सुमति है। विष्णुपुराण में भी यही बात है। परन्तु भागवत में सातवीं पीढ़ी में सुमति का नाम आया है। कहीं तो विशाल का नाम "विशवल" लिखा है। इसके सिवा नामों के अक्षर विन्यास या हिज्जे में भी कई स्थानों में भारी असादृश्य है।

चन्द्रवंश वृक्ष में असामञ्जस्य।

इला के पुत्र पुरुरवा की सन्तानों के नामकरण में ही पहिले तो खूब असामञ्जस्य है। महाभारत में केवल एक आयु का वंश विवृत किया गया है, परन्तु विष्णुपुराण और हरिवंश में आयु के अतिरिक्त अमावसु नामक राजाके वंश का भी विवरण लिखा गया है। इधर भागवत में अमावसु के नाम की गन्ध तक नहीं है और आयु के सिवा विजय नामक एक राजा के वंश का उल्लेख है। बहुत कुछ खोज ढूंढ़ करने पर भी अमावसु का विजय नाम कहीं नहीं मिलता हां आगे चलकर वंश पर्याय में कुछ मेल दिखाई देता है।

अब आगे पुरुरवा की तीसरी पीढ़ी की तरफ देखिये। यहां आकर घनघोर गड़बड़ी हो गई है। सभी पुराणों में नहुषवंश की ही शाखा प्रशाखायें बतायी गई हैं, परन्तु विष्णु पुराण

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

और भागवत में नहुष के छोटे भाई क्षत्रवृद्ध का नाम तक नहीं है।

नहुष के पुत्र ययाति के पांच पुत्र हैं। इनमें पांचवें पुत्र पुरु के पुत्रों की बावत पूरा मतभेद है। महाभारत में पुरु के पुत्रका नाम है रौद्राश्व परन्तु हरिवंश में पुरु की आठवीं पीढ़ी, विष्णुपुराण में नवीं पीढ़ी, भागवत में दसवीं पीढ़ी और ब्रह्मपुराण में छठी पीढ़ीमें रौद्राश्व का नाम आता है। इधर अग्नि पुराण के चन्द्रवंश प्रकरण में रौद्राश्व नामका कोई राजा ही नहीं हुआ है।

शकुन्तला के पति दुष्यन्त या दुष्यन्त के पुत्र भरत का नाम महाभारत में चौदहवें, हरिवंश में तेरहवें, विष्णुपुराण में पचीसवें, भागवत में छब्बीसवें, अग्निपुराण में तेईसवें और ब्रह्म पुराण में इक्कीसवें पर्याय या पीढ़ी में आया है। इसके अतिरिक्त महाभारत में भरत के पुत्र के नाम भूमन्यु हरिवंश में वितिथ्य, विष्णु पुराण में भारद्वाज और भागवत, अग्निपुराण तथा ब्रह्मपुराण में वितथ्य लिखा गया है।

महाराज कुरु के बाद जो वंशलता है उसमें भी बहुत मतभेद है। महाभारत में (जनमेजय वंश में) सत्ताईसवें पर्याय में, (सुधन्वा के वंश में) छत्तीसवें पर्याय में, विष्णु पुराण में (यदुवंश में) पचासवें पर्याय में, भागवत में (यदुवंश में) उनचासवें पर्याय में, ब्रह्म पुराण में (परीक्षित वंश में) सैंतीसवें पर्याय में, और अग्निपुराण में (परीक्षित वंशमें) उनचासवें पर्याय में धृतराष्ट्र और पांडु के नाम आये हैं। महाभारत में तो दो वार उन लोगों के नाम देखने में आते हैं—प्रथमवार बाईसवें पर्याय में और द्वितीय वार सत्ताईसवें पर्याय में। इस बाईसवें पर्याय वाले धृतराष्ट्र के (न मालूम किस के पुत्र के ?) पौत्र का नाम प्रतीप है और इन्हीं प्रतीप के पुत्र का नाम शान्तनु पौत्र का विचित्र वीर्य और प्रपौत्र का नाम धृतराष्ट्र एवं पांडु लिखा गया है। इधर हरिवंश में उपरिचरवसु की सत्यवती नाम की कन्यासे विचित्रवीर्य की उत्पत्ति लिखी गई है। ये उपरिचरवसु ब्रह्मपुराण और हरिवंश में कुरु पुत्र सुधन्वा के वंश में यथा क्रम इकतीसवें और तेईसवें पर्याय में तथा विष्णु पुराण और श्रीमद्भागवत के मत से कुरु पुत्र सुधनु के वंश में, उनतालीसवें पर्याय में सन्निविष्ट हैं। अग्निपुराण में तो इतने बड़े यशस्वी राजा का नामोनिशान तक नहीं है। जो हो, ये बड़े ही शक्तिशाली राजा हो गये हैं। इनका असली नाम वसु है। इन्होंने तपस्या कर देवों से एक अद्भुत विमान पाया था, जिसके प्रभाव से ये ऊपर आकाश में विचरण करते थे, इसलिये पदवी के साथ इनका नाम पड़ा उपरिचरवसु। इनकी और इनकी पुत्री सत्यवती की अलौकिक जन्मकथा महाभारत आदिपर्व, तिरसठवें अध्याय में लिखी गई है। यमुना जल में अवस्थित मत्स्यरूपिणी अद्रिका नाम की एक अप्सरा से सत्यवती की उत्पत्ति हुई है। इसका एक नाम मत्स्यगन्धा भी है। पराशर से संयोग होने पर इसका नाम पड़ा 'गन्धवती' और 'योजनगन्धा' एक मल्लाह ने इसे पाला था। शान्तनु के विवाह के पहले पराशर द्वारा, इसी से व्यास की उत्पत्ति हुई थी। द्वीप में होने के कारण व्यास का नाम द्वैपायन पड़ा और जन्मके समय

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

बहुत काले होने के कारण व्यास का पूरा नाम होगया 'कृष्ण द्वैपायन"। इसी सत्यवती के पौत्र हैं धृतराष्ट्र और पाण्डु। इनके वंश में भी खूब गड़बड़ है।

महाभारत में यदुवंश का धारावाहिक परिचय नहीं पाया जाता हरिवंश, विष्णु पुराण, भागवत, अग्नि पुराण और ब्रह्मपुराण में यदुवंश का बहुत कुछ स्पष्ट वर्णन है, परन्तु यदु के पुत्रों में ही खूब मतभेद है। कोई चार पुत्र मानता है और कोई पांच। यदु के सहस्रजित् और क्रोष्टु नामक दो पुत्रों की वंश—लता देखी जाती है। विष्णु पुराण और भागवत में सहस्रजित् (या सहस्रद) के पुत्र का नाम शताजित् और पौत्र का हैहय है। हरिवंश और ब्रह्मपुराण में सहस्र के पुत्र का ही नाम हैहय रखा गया है। अब आगे देखिये। हैहय के पुत्र का नाम धर्मनेत्र बताया गया है। हरिवंश ब्रह्मपुराण और विष्णु पुराण आदि सब यहां सहमत हैं; परन्तु भागवत में लिखा है,—हैहय के पुत्र का नाम धर्म है तथा पौत्र का नेत्र! हरिवंश और ब्रह्मपुराण में धर्म नेत्र के पुत्र का नाम लिखा गया है कार्त तथा विष्णु पुराण में कुन्ति। भागवत में नेत्र पुत्र का नाम भी कुन्ति ही है। इसी वंशमें कार्त्तवीर्यार्जुन हुये हैं। ये हरिवंशके अनुसार बीसवीं पीढ़ी और विष्णु पुराण तथा भागवत के अनुसार बाईसवीं पीढ़ी में हुये हैं। "तीन लोक से मथुरा न्यारी" की तरह इन्हें ब्रह्मपुराण उन्नीसवीं पीढ़ी में मानता है।

यदु के दुसरे पुत्र क्रोष्टु या क्रोष्टा का वंश विशेष प्रसिद्ध है। इन्हीं के वंश में देवमीढुष हुये हैं, जो किसी मत से श्रीकृष्ण के पितामह और किसी मत से प्रपितामह हैं। इन देवमीढुष के विषय में अनर्थकारी असामञ्जस्य है। हरिवंश के मत से ये देवमीढुष क्रोष्टा के पुत्र हैं। परन्तु विष्णु पुराण में क्रोष्टु की तिरपनवीं पीढ़ी में ये विराजमान हैं। इधर ब्रह्मपुराण में एक जगह देवमीढुष क्रोष्टु के पुत्र और दूसरी जगह पौत्र हैं। इस तरह "मुण्डे-मुण्डे मतिर्भिन्ना" की तरह देवमीढुष के विषयमें घोर मतभेद है। इस कारण कहीं तो श्रीकृष्ण चन्द्र वंशमें दसवीं पीढ़ी में है और कहीं बारहवीं पीढ़ी, कही चौदहवीं, कहीं पचपनवीं और कहीं इससे भी कुछ विलक्षण पीढ़ी में श्रीकृष्णका नाम आता है। इसी प्रकार तुर्वसु-वंश और पुरुवंश दोनों में दुष्यन्त राजा का नाम आता है इनके पुत्र का नाम कहीं भरत और कहीं करुरोम है। हरिवंश और ब्रह्म पुराणमें नहुष के छोटे भाई अनेना का वंश पाया जाता है, अन्यत्र नहीं। इसी वंश में धन्वन्तरि वंश और अलर्क-वंश हैं। परन्तु ब्रह्मपुराण में इतने प्रतापी अलर्क-वंश का नाम ही नहीं है।

सबसे ज्यादा गोलमाल है विश्वामित्र के बारे में। हरिवंश में देव वंशों में दो स्थानों में विश्वामित्र का नाम आया है। अमावसुवंश में सतरहवें पर्याय और रौद्राश्ववंश में बत्तीसवें पर्यायमें विश्वामित्र माने गये हैं। इधर विष्णुपुराण में अमावसु-वंश में अठारहवें पर्याय में विश्वामित्र का नाम आया है। यहां हरिवंश और ब्रह्मपुराण के मतोंमें कुछ कुछ मेल है एवं विष्णुपुराण तथा भागवत में भी कुछ २ मेल है। परन्तु रामायण और पुराणों में यहां भीषण मतान्तर है। रामायण (आदि कांड बत्तीसवें और चौतीसवें सर्ग) में लिखा है, "कुश नाम के एक प्रतिष्ठित

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

ब्राह्मण थे। उनकी वैदर्भी नामक स्त्री से चार पुत्र हुये, जिनमें एक कुश नाम के थे। कुश के पुत्र गाधि और पौत्र विश्वामित्र थे। इनकी बहन का नाम सत्यवती था जो ऋचीक ऋषि को व्याही गयो। विश्वामित्र के पुत्र का नाम था शुनःशेफ! पुराणों के साथ यहां कैसा अमिट अनैक्य है। और तो और, रामायण के अनुसार ब्रह्मा से चौथी ही पीढ़ी में विश्वामित्र हुये थे।

दूसरी तरफ देखिये। ऋग्वेद के तीसरे मंडल के कितने ही सूक्तों के प्रवर्त्तक एक विश्वामित्र का नाम आता है। उनके मधुच्छन्दा और ऋषभ नामक दो पुत्रोंका भी वहीं परिचय दिया हुआ है ऋग्वेद प्रथम मण्डल के दस सूक्तों में ही मधुच्छन्दा का नाम है। इधर पुराणों में मधुच्छन्दा का नाम तो आया है, परन्तु ऋषभ का कहीं पता ही नहीं है। हां इसके सिवाय जय, कृतदेव आदि कई पुत्र पुराणों में विश्वामित्र के माने गये हैं।

और आगे चलिये। दशरथ पुत्र श्रीराम का विवाह जनक-नन्दिनी जानकी के साथ हुआ था। परन्तु निमि वंश की सीता के साथ इक्ष्वाकु वंश पर्याय मिलाकर देखने से यह बात अविश्वसनीय सी मालूम पड़ती है। श्रीमद्भागवत के अनुसार श्रीराम अड़सठवीं पीढ़ी और सीता तीसवीं पीढ़ी में हैं। अब बताइये कि सीता श्रीराम के साथ कैसे व्याही गयीं?

निष्कर्ष।

ऊपर के इन सब असामञ्जस्यों को देखकर कौन कह सकताहै कि,भारतके प्राचीन नृपतियों का वंश पर्य्याय अक्षुण्ण है? ऐसी विषम विशृङ्खलताएं देखकर प्राचीन इतिहास की तत्त्वालोचना करना और प्राचीन राजाओंका शासनकाल निश्चय करना विडम्बनामात्र है। यदि आप किसी भी प्राचीन पुस्तककी वंशलता पर विचार कर उसका निर्णय करने बैठिये तो आप अवश्य ही भ्रम में पड़ जायेंगे। यदि आप रामायण पढ़कर विश्वामित्र की वंशलता को सत्य मान लें, तो क्या त्रेता में विश्वामित्र का रहना सम्भव होसकता है? यदि हाँ तो विश्वामित्र के वृद्ध प्रपितामह ब्रह्मा को हुए पाश्चात्य विद्वान् कितने वर्ष मानेंगे? बड़ी मेहरबानी करके कर्नल टाडने प्रत्येक राजा का शासनकाल बीस वर्षों का माना है। यदि यही हिसाब रखा जाय तो ब्रह्मा के अस्सी वर्ष बाद ही विश्वामित्र का होना मानना पड़ेगा तब क्या अस्सी वर्षों में ही सत्य युग और त्रेता युग का कुछ हिस्सा बीत गया?

हमारे यहां के प्रत्नतत्वविद्, दूरदर्शी और निष्ठावान् हिन्दू विद्वान् वंश लताओं की विशृङ्खलताओं का और ही कारण बताते हैं। पहिला कारण तो यह बताते हैं, कि रामायण महाभारत और पुराणों के प्रणेताओं ने सूर्य-चन्द्रवंशों की वंश लताएं, धारा वाहिकरूप से पुत्र आदि के क्रमानुसार, लिखी ही नहीं हैं। उन्होंने प्रत्येक वंश के उल्लेखनीय व्यक्तियों का ही अपने ग्रंथ में, नामोल्लेख किया है। विचार करने पर यह बात प्रत्येक ग्रंथ से मालूम होसकती है। आप विष्णुपुराण को ही लीजिये। इसके चतुर्थ अंश (चतुर्थ अध्याय) के अन्त में इक्ष्वाकु वंशीय राजाओं का पूरा पूरा वंशपर्याय कह कर ग्रंथ प्रणेता लिखते हैं:—

"एत इक्ष्वाकुभूपालाः प्राधान्येन मयोदिताः।"

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

मतलब यह है कि "मैंने इक्ष्वाकु वंश के ख़ास २ राजाओं का ही यह नामोल्लेख किया है।" इसी तरह प्रायः सभी ग्रन्थों में यही बात लिखी गई है। कुछ ऐतिहासिक यह कहते हैं कि पिता, पुत्र आदि क्रम से जो वर्णन मिलता है, उससे तो धारावाहिक वंशलता ही मालुम पड़ती है। परन्तु यह विषय संदिग्ध है। कारण यह है कि पहले तो अनन्त काल के अगणित नृपतियों का नाम स्मरण रखना ही कठिन है, क्या असम्भव है, दूसरे पिता, पुत्र आदि परम्परा से नाम याद रखना तो मनुष्य शक्ति से ही बाहर है। हां, यह हो सकता है कि, इक्ष्वाकु के पुत्र निमि, दशरथ के पुत्र श्रीराम या वसुदेव के पुत्र श्रीकृष्ण आदि दस बीस नाम भले ही कोई कंठस्थ कर ले, परन्तु असंख्य व्यक्तियों का क्रमबद्ध नाम याद रखना शेष-शारदा के लिये भी सन्देहास्पद है। इस लिये यह मानना पड़ेगा कि जहां 'अमुक का पुत्र अमुक, लिखा है, वहां "अमुक वंश सम्भूत अमुक" समझना चाहिये। इसी से कहीं एक ही व्यक्ति को वंश सम्भूत और कहीं पुत्र भी लिखा गया है। ऐसा अर्थ लगानेसे वंश वृक्षों का बहुत कुछ समन्वय भी होजाता है और प्रधान २ व्यक्तियों के नामों तथा कथानकों के उल्लेख की बात भी युक्तियुक्त हो जाती है।

मालूम पड़ता है, कर्नल टाड ने ऊपर की बातों पर बिना विचार किये ही प्राचीन राजाओं के शासन काल की अवधि का अनुमान लगा डाला है। इस अनुमान तरङ्ग में कर्नल साहब श्रीवत्स, नल, सुरथ, समाधि, द्युमत्सेन, इन्द्रद्युम्न, सुदर्शन, ध्रुव संधि आदि की चर्चा तो एक बारगी ही छोड़ गये हैं! साथ ही ऋग्वेद के सुदास पुरुकुत्सत्रित्र त्र्यरुण, कुत्स आदि पराक्रान्त नृपवरों के नाम भी नहीं लिये हैं। मानो इन लोगों ने दो चार वर्ष भी पृथ्वी पर शासन नहीं किया है कम से कम टाड साहब को इस बात का अनुमान तो अवश्य ही करना था कि जब कि केवल यदुवंश में ही तीन करोड़ अस्सी लाख शस्त्र शास्त्रों के शिक्षक थे, * तब अन्यान्य वंशोंमें कितने शासक रहे होंगे? फलतः वर्तमान समय में प्राप्त वंशलताएं प्रधान २ व्यक्तियों की ही माननी चाहिये।

एक बात और है। वह यह कि योग बल से मनुष्य दीर्घ जीवन लाभ कर हजारों वर्ष जी भी सकता है। इसलिये हम आस्तिक हिन्दू पुराणों की यह बात मानते हैं कि "अमुक राजा ने पचास हजार वर्ष पृथ्वी पर राज्य किया और अमुक ने साठ हजार वर्ष या अधिक यह तो जरूरी है कि मोटी बुद्धि इस बात पर विश्वास नहीं कर सकती; परन्तु साथ ही यह भी है कि यदि एक क्षुद्र मनुष्य विज्ञानाचार्य जगदीशचन्द्र वसु के अलौकिक आविष्कारों पर विश्वास नहीं करे तो उसके लिये कोई उपाय नहीं है।

असामञ्जस्य का एक प्रधान कारण लिपिकारों का प्रमाद भी है। प्राचीन समय में यह रीति थी कि ग्रंथ-प्रणेता और होता था तथा ग्रन्थ लेखक अन्य। इसी से पहले तो वेचारे ग्रंथकर्ता ही असीम समय के असंख्य शासकों के नाम याद करने और उन्हें लिखने में गल्ती

* नोटः—विष्णुपुराण, चतुर्थ अंश, १२ वां अध्याय देखिये।

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

कर गये दूसरे लिपिकार गण लिखने में अपार भूल कर गये। यही कारण है कि महाराज पुरूरवा के पांचवें पुत्र का नाम कहीं 'शतायु' है, कहीं 'सत्यायु' और कहीं श्रुतायु! एक ही व्यक्ति का नाम कहीं 'नय' है और कहीं 'वय'! महाराज जन्हु के पुत्र का नाम कहीं 'सुजन्हु' है और कहीं 'सुनह'। इसी तरह एक व्यक्ति को कहीं पुत्र लिखा है, कहीं पौत्र और कहीं "मंडूकप्लुति न्याय की तरह बीसों पीढ़ियों के बाद लिख मारा है। वंश-सम्भूत की जगह कहीं पुत्र लिख दिया है और कहीं पुत्र की जगह वंशसम्भूत!

इतना लिखने का यह निष्कर्ष है कि वर्तमान पुस्तकोंमें जो प्राचीन भारतीय नरपतियों की वंश लताएं मिलती हैं, वे कुछ प्रधान २ व्यक्तियों की ही है और लिपिकारों की भूलों से परिपूर्ण हैं। इस लिये उनके अनुसार प्राचीन भूपतियों के शासन काल का निर्देश करना तर्कविरुद्ध और हेय है। साथ ही वंश लताओंमें अन्यान्य अज्ञेय नामों का समावेश रहने के कारण उनके सुधार की चेष्टा करना भी अनुचित है। हां, यह बात ठीक है कि, यदि वंशलताओं की छोटी मोटी बातों का सामञ्जस्य करने के लिये कुछ गवेषणा परायण, चिन्ताशील और पक्षपातहीन विद्वान् अपना दीर्घ समय और अदम्य साहस खर्च करें तो उन्हें बहुत कुछ सफलता प्राप्त हो सकती है, एवं हिन्दू जाति का पूरा कल्याण भी होसकता है। एक बात और है। वह यह कि, आज कल सूर्य-चन्द्र वंशों की जितनी वंशलतायें मिलती हैं, उनमें हमारे ख्याल से विष्णु पुराण की वंशलतायें सर्वापेक्षा सुबोध, विस्तृत और प्रामाणिक जान पड़ती हैं।

इस अगम-अपार महीमंडल पर कितनी वीर आत्मायें अपना भीम गर्जन सुना गईं? इस असीम विश्व वाटिका में कितने शोभन सुमन गिर कर सूख गये। इस दिव्य उद्यान को कितनी विमल वीणायें गुञ्जरित कर चुकीं। यहां कितनी देवबालायें कलरव कर चुकी हैं कितनी कोकिलायें अपनी कोमल कुहू सुना गयीं और कितने पपीहे अपनी पुकार मचा चुके। लीलामय की इस रङ्गस्थली पर कितने नटवर अपना अनूठा ठाट, अनोखा खेल और अनुपम मुद्रा दिखा चुके! क्या इन प्रश्नों का कुछ उत्तर है?

इन धरा-धाम-धन्यकारी आत्माओं के चित्र चित्रण चरित-चर्चा और कीर्ति कथा की बात तो अलग रहे आज इनके प्रातःस्मरणीय नामों तक का पता नहीं है। दस हजार विद्यार्थियों को अन्न वस्त्र देकर विद्यादान करने वाले कुलपतियों के पवित्र नामों का निशान तक नहीं है। लाखों करोड़ों गो दान कर पृथ्वीपर सुख-सरिता बहाने वाले महाराज नृग और इन्द्र तुल्य प्रबल पराक्रमी महाराज इन्द्रद्युम्न की कीर्त्ति काहिनी दो चार कालमों में ही, खतम हो जाती है। यह सब हमारे दुर्दान्त दुर्दिन का दुर्भाग्य है।

सूर्यवंश की अच्छी तरह छान-बीन कर डालिये और चन्द्रवंश की पूरी पड़ताल कर आइये; परन्तु आपको अनेक अतीव प्रसिद्ध नृपतियों का उनमें पता ठिकाना तक नहीं मिलेगा। ऐसे लोगों की संख्या भी प्रायः सूर्यवंश या चन्द्र वंश से कम नहीं है। इनमें बहुत से ऐसे राजा भी हैं, जिनके जीवन-चरित में वंशों का नाम,

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

भी लिखा है; परन्तु वंश-लतायें ढूँढने पर इनका नाम भी नहीं पाया जाता। यदि पाया भी जाता है तो, एक ही पुरुष के दोनों नाम होने में कोई पुष्ट प्रमाण नहीं मिलता।

आप पहिले नल—दमयन्ती की ही आख्यायिका लीजिये। शायद ही कोई अभागा हिन्दू होगा, जो इन वन्दनीय दम्पती का जीवन वृत्तान्त नहीं जानता हो। महाभारत और रामायण से पता चलता है कि, नल निषध देश के अधीश्वर थे और इनके पिता का नाम था वीरसेन। विदर्भ-देश के राजा भीम की पुत्री दमयन्ती से इनका विवाह हुआ था इनकी गुण गरिमा इनका दाम्पत्य प्रेम और इनका रूप-लावण्य अतुलनीय था। नल के विषय में तो महाभारत में इतनी दूर तक लिखा है कि,—

"रूपेणाऽप्रतिमोभुवि।"

अर्थात् पृथ्वी पर इनकी टक्कर का रूप वाला कोई नहीं है। ये इतने बड़े धार्मिक थे कि, श्री राम, सीता और युधिष्ठिर की तरह पुण्यश्लोक माने जाते थे। * वाल्मीकि रामायण, सुन्दरकाण्ड, चौबीसवें सर्ग में दमयन्ती के साथ सीता की उपमा दी गयी है। इससे मालूम पड़ता है कि, रामचन्द्र से पहिले नल हुये थे। यह सब कुछ है; परन्तु दोनों वंशलताओं में से किसी में भी नल का पता नहीं है। किसी-किसी ग्रन्थ में, इक्ष्वाकु वंश में, नल का और चन्द्रवंश में दमयन्ती के पिता भीम का नाम पाया जाता है; किन्तु ज़रा विचार करने पर वे दूसरे ही नल, भीम मालूम पड़ते हैं।

इसी तरह सावित्री सत्यवान् का उपाख्यान लीजिये। महाभारत, मत्स्य पुराण, देवीभागवत* और रामायण आदि में यह आदर्श-शीर्ष स्थानीय उपाख्यान मिलता है। शाल्व देश के अन्ध और अरण्यवासी नृपति द्युमत्सेन के पुत्र सत्यवान् के साथ मद्रदेश के धर्मनिष्ठ अधिपति अश्वपति नामक राजा की पुत्री सावित्री का विवाह हुआ था। पतिप्राणा और पतिव्रता-अगण्या सावित्री तथा सत्यनिष्ठ तेजस्वी और शौर्य-सम्पन्न सत्यवान् का जीवन चरित्र पढ़कर मन विशुद्ध और हृदय सबल होजाता है। श्री राम के बन जाते समय सीता माता कहती हैं:—

द्युमत्सेन-सुतं वीरं सत्यवन्तमनुव्रताम्।
सावित्रीमिव मां विद्धि त्वमात्मवशवर्त्तिनीम्॥

मतलब यह है कि, 'जैसे सत्यवान् की अनुगामिनी सावित्री थीं, वैसे मैं भी आप की दृढ़ अनुगामिनी रहूँगी।

इस वर्णन से श्री रामचन्द्र के पूर्व मद्रदेश और शाल्वदेश के दो नरपतियों का परिचय पाया जाता है, परन्तु वंशलताओं में इनका कहीं भी उल्लेख नहीं है। कुरु-वंश में एक द्युमत्सेन राजा का नाम आता है, परन्तु वे दूसरे थे। एक दूसरे अश्वपति का भी रामायण में उल्लेख है, किन्तु वे भरत के मातामह और कैकेयी के पिता थे।

नोट * "पुण्यश्लोको नलो राजा, पुण्यश्लोको युधिष्ठिरः। पुण्यश्लोका च वैदेही, पुण्यश्लोको जनार्दनः॥" महाभारत, वनपर्व ५२ से ७८ अध्यायों में "नलोपाख्यान" देखिये। शिवपुराण और ब्रह्मपुराण में दमयन्ती का वृत्तान्त लिखा है।

नोट * महाभारत, वनपर्व, २९२ से २९७ अध्याय देवीभागवत, ९ म स्कन्ध २६ से ४८ अध्याय और मत्स्य पुराण २०८ से २१४ अध्याय देखिये।

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

महाभारत अश्वमेध पर्व और रामायण के उत्तर काण्ड में एक क्षुर नामक राजा का कुछ परिचय लिखा है। रामायण के मत से पृथ्वी के आदि राजा क्षुर ही हुये हैं। पहले पहल प्रजा ने अपने को बिना राजा की देखकर ब्रह्मा की शरण में जा, एक राजा के लिये प्रार्थना की। उस पर दया कर ब्रह्मा जी को छींक आगयी, जिससे क्षुर का जन्म हुआ। महाभारत में व्यास जी युधिष्ठिरसे कह रहे हैं, "तात! सत्ययुग में सर्व प्रथम मनु जी राजा हुये। उनके पुत्र का नाम प्रसन्धि और पौत्र का क्षुर। क्षुर के ही पुत्र इक्ष्वाकु हुये।" इधर सारी पुराण-पुस्तकें उलट डालिये, परन्तु उनमें इक्ष्वाकु को ही मनु-पुत्र लिखा पाइयेगा। किन्तु यहां और ही कथा है। जो हो, विष्णु पुराण के अनुसार नेदिष्ट वंश में, सोलहवीं पीढ़ी में, एक क्षुर नाम के राजा पाये जाते हैं। किन्तु वे दूसरे थे, यह लिखने की ज़रूरत नहीं।

रामायण, उत्तर काण्ड, चौसठवें सर्ग में, नृगराजा की बड़ीही कौतूहलवर्द्धक कथा लिखी गयी है। वे परम ब्राह्मण भक्त थे, वे एक बार पुष्कर-तीर्थ में ब्राह्मणों को कोटि कोटि गोदान कर रहे थे कि, इसी बीच एक दरिद्र ब्राह्मण की सबला गो भी दान दे दी गयी। कुछ दिनों बाद पता पाकर वह ब्राह्मण राजा की राजधानी में पहुँचे। परन्तु लाख चेष्टा करने परभी वह राजा के पास नहीं पहुँच सके। इसलिये क्रुद्ध होकर उन्होंने शाप दिया कि "तुम 'ककलास, गिरगिट होकर गड्ढे में पड़े रहो।" ऐसा ही हुआ। द्वापर में भगवान् श्रीकृष्ण द्वारा इनका उद्धार हुआ सूर्यवंश में इक्ष्वाकु के भाई का नाम नृग पाया जाताहै, परन्तु पुत्र पौत्रादि पर विचार करने से वे दूसरे ही मालूम पड़ते हैं।

जैमिनीय महाभारत के अनुसार महाराजा श्रीवत्स अयोध्या के अधिनायक थे। इनके पिता का नाम चित्ररथ था। चित्रसेन नाम के राजा की कन्या चिन्ता के साथ श्रीवत्स का विवाह हुआ था। ये विलक्षण धार्मिक भूपति थे। शनि महाराज की क्रूर दृष्टि होजाने के कारण श्रीवत्स को वनवास करना पड़ा और वर्षों फल मूल खाकर अनेक यातनाएं उठानी पड़ीं। परन्तु इन्होंने अपना प्राणप्रिय धर्म नहीं छोड़ा। अन्त में लक्ष्मीकी कृपा पाकर इनके दिन सुधरे, चिंता की पति-चिन्तना भी अर्चनीय थी इसकी कथा खूब प्रचलित है। बंगाल में तो घर २ प्रसिद्ध है बहुत कुछ सिर पच्ची करने पर भी सूर्य चंद्र वंशों में चित्ररथ चित्रसेन और श्रीवत्स का प्रसङ्ग नहीं पाया जाता।

सत्ययुग में मालवप्रदेशान्तर्गत एक अवन्ती नाम की विख्यात नगरी थी। वहां बड़े २ सेठ-साहूकार रहते थे। वहां से देश देशान्तरों का वाणिज्य-व्यापार होता था। उसके बाज़ारों और गलियों का बहुत-बहुत वर्णन मिलता है। वहां की कितनी ही अट्टालिकायें तो हज़ारों तल्लों वाली थीं। वहां के ही राजा का नाम इन्द्रद्युम्न था। वे ब्रह्मनिष्ठ सर्वशास्त्रज्ञाता और सत्यवादी थे। उन्हों ने समुद्र के गर्भ से विष्णु की मूर्ति निकाल कर उसकी प्रतिष्ठा की थी। वे ही पुरुषोत्तम-महातीर्थ या जगन्नाथपुरी के संस्थापक थे। उन्हों ने सौ अश्वमेध यज्ञ किये थे। ब्रह्मपुराण, नारदपुराण, स्कन्द पुराण आदिमें उनकी बड़ी महिमा

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

लिखी है; किंतु वंशावली में इतने बड़े यशस्वी का भी कहीं पता ठिकाना नहीं है। महाभारत के वनपर्व में एक इन्द्रद्युम्न की कथा तो लिखी गयी है, परन्तु इन दोनों में कुछ सम्बन्ध था या नहीं, इसका निर्णय करना कठिन है।

जिस तरह पुरुषोत्तम तीर्थ के इतिहास के साथ इन्द्रद्युम्न का सम्बंध है उसी तरह सुप्रतीक राजा का वाराणसी के साथ। महाराज सुप्रतीक की ही तरह इनके दुर्जय और सुद्युम्न नाम के दो पुत्र भी विख्यात हैं। वाराणसी पुरी के स्वामी दुर्जय कुरु, भद्राश्व इलावृत्त. हरिवर्ष आदि समस्त प्रदेशों का शासन करते थे। अन्त में इन्होंने इन्द्र को भी परास्त किया था। परन्तु काशी नरेशों की वंशावली में कहीं भी इन तीनों का नाम नहीं है काशी के राजाओं में सबसे प्रसिद्ध नाम है दिवोदास का। इनका एक नाम रिपुञ्जय भी है। इन्होंने हैहय-वंशियों को पराजित कर काशी पर बहुत दिनों तक अखण्ड राज्य किया था। * इनके पुत्र प्रतर्दन थे। रामायण के अनुसार रामचंद्र के साथ इन प्रतर्दन की मित्रता थी। लङ्का संग्राम के समय इन्होंने श्रीरामचंद्र की भी सहायता की थी। राज्याभिषेक के समय में भी ये थे। फिर भी काशी नरेश और राममित्र प्रतर्दन एक ही थे या दो, इसमें संदेह है।

मार्कण्डेय पुराण वीस, से चौवीसवें अध्याय के मतानुसार एक अलर्क नाम के बड़े ही धीर और वीर राजा थे। इन्हें "अरिमर्दन" की पदवी भी मिली थी। ये प्रजारञ्जन में विख्यात थे। यज्ञ-दान में तो इनका कोई सानी ही नहीं था। काशीराजने एक बार इनकी राजधानी घेर कर उस पर कब्जा जमा लिया था। उस समय इनकी माता मदालसा के उपदेश ने इनके अन्तःकरण पर बिजली का सा काम किया। ये दत्तात्रेय जी की शरण गये और वहीं अपना मानव जीवन सफल बनाया। वंशलताओं में इनका भी कहीं नाम नहीं है! चन्द्र वंश में दिवोदास के प्रपात्र का नाम अलर्क आया है, परन्तु थोड़े ही विचार से मालूम हो जाता है कि, ये दोनों अलर्क भिन्न भिन्न थे।

महाभारत † के जिन महाराजा शिवि या उशीनर का मायावी बाज या नकली इन्द्र को खाने के लिये अपना मांस प्रदान करना भारत प्रसिद्ध है, उनका भी वंश-पर्याय में नाम नहीं आया है। यद्यपि उशीनर या शिवि का नाम पुरुवंश की वंशावली में आया है। परन्तु विचार करने से वे दूसरे ही मालूम पड़ते हैं।

श्री रामचन्द्र के विश्व-विदित अश्वमेध यज्ञ के समय जो यज्ञीय अश्व छोड़ा गया था, उसने विविध देशों में श्रीराम की जय श्री की घोषणा की थी। उस समय उसके साथ दल—बल सहित श्रीराम के मन्त्री सुमति, महाराज लक्ष्मी निधि और वीरानुज शत्रुघ्न, मौके पर संग्राम करने के लिये, पर्यटन में गये थे। पद्मपुराण में लिखा है कि, इस पृथ्वी—परिक्रमा में सुमति आदि को "कामाक्षा" मन्दिर वाली अहिच्छत्रा नाम की नगरी के अधिपति महाराजा सुमद र-

नोट * स्कन्द पुराण, काशी खंड, ४३ से ४८ वें अध्याय तक देखिये।

नोट † महाभारत, वनपर्व, १३० से १३१ अध्यायों और अनुशासन पर्व ३२ वें अध्याय को देखिये।

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

त्नातट नामक राजधानी के विख्यात भूप विमल चन्द्राङ्का राजधानी के महीश्वर सुबाहु, देवपुर राजधानी के नृपवर वीरमणि, कुण्डल नगर नामक राजधानी के विख्यात भूप सुरथ आदि कितने ही रणधीर नरपतियों से घोर संग्राम करना पड़ा था। अन्त में इन राजाओं ने पराजय भी मानी थी। इनके सिवा महाराजा महीरथ, श्रीधर भशूत्रवा, रुत्यवान् दीनानाथ आदि की लम्बी कीर्ति लता पद्मपुराण में फैली है, परन्तु वंश वृक्षों में इनमें से किसी का नाम नहीं है!

युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञके समय संग्रामजित्, कम्बोजराज कमठ, किरातराज पुलिन्द, उड़राज यवनाधिपति चाणूर, मगधाधिपति जयसेन, अनूपराज, करुषाधिपति आहुक, शारण, विप्रथु अङ्कति, भीष्मक आदि कितने ही गण्यमान्य राजा पधारे थे। महाभारत के महासमर के समय पूर्व सागर (चीन) वासी भगदत्त, हार्दिक्य, रोचमान, वृहन्त, पापजित्, प्रतिविन्ध्य, सुशर्मकेश, चेदिपति, सुपार्श्व, शकराज पह्लवराज दरदराज, नदीज, पञ्चनदराज, दुर्धर्ष, योतिमत्सक यांशु राष्ट्रपति धृष्टकेतु, समुद्रसेन, उद्धव आषाढ़ वायुवेग, पूर्वपालि सुवारि, क्षेमधूर्ति निचक्र, विराट्, चेकितान शैव्य, उत्तमौजा द्रुपद, पुरुजित् आदि कितने ही शूरवीरों के पास, पाण्डवों की ओर से निमंत्रणपत्र भेजा गया था। इनमें से अधिकांश समर में आये भी थे; परन्तु वंशलताएं खोजने पर बहुतों का नाम तक नहीं पाया जाता।

श्रीकृष्ण की राय से महासमर के अन्त में धर्मराज युधिष्ठिर ने बड़े समारोह के साथ एक अश्वमेध नामक यज्ञ किया था। निःसीम सैन्य के साथ अश्व की रक्षा करने का भार अर्जुन के सिर पड़ा था। उस समय अभयवीर गाण्डीवधारी अर्जुन ने किरात, यवन, म्लेच्छ आदि देशों के अधिपतियों के साथ त्रिगर्तराज, सूर्यवर्मा, और केतुवर्मा पूर्व सागराधिपति वज्रदत्त, सिंधुराज, मागधपति मेघसंधि, गान्धारराज, माहिष्मती के प्रवीर आदि अनेक वीरवर राजाओं के साथ तुमुल संग्राम कर, जयलाभ किया था। परन्तु उनमें से कितने राजाओं का वंशावली में नाम है?

महाभारत में और २ भी अनेकानेक धर्मनिरत, ज्ञानी तथा वीर राजाओं का परिचय दिया गया है। खाण्डव-दहन के समय वैशम्पायन ने जनमेजय से एक श्वेतकि राजा की कथा कह कर उनकी धर्मपरायणता की भूरि—भूरि प्रशंसा की थी। ब्राह्मण माहात्म्य-प्रसङ्ग में मार्कण्डेय ऋषि ने युधिष्ठिरसे अयोध्यापति, इक्ष्वाकु कुल नन्दन महाराजा परीक्षित उनके पुत्र शल और पौत्र सेनजित्का बहुत ही सुन्दर उपाख्यान सुनाया था। अभिमन्यु वध का समाचार पाने पर व्यास जी ने युधिष्ठिर का एक अकम्पन राजा का उपदेशप्रद आख्यान सुनाया था। मार्कण्डेय ऋषि ने सेदुक, वृषदर्भ और अष्टक राजाओं की रोचक कहानी कही थी। भीष्म ने युधिष्ठिरसे पौरिक और वीरद्युम्न नामक महीपों की प्रशंसात्मक कथा कही थी। इसके सिवा अरिन्दम पुरञ्जय, शत्रुञ्जय विचक्षु और धिम्दत्त आदि राजाओं की कीर्तिकाहिनी भी महाभारत में लिखी है। परन्तु वंशवृत्त ढूंढ़ने पर इनमें से कितने राजाओं का परिचय पाया जाता है?

इसके सिवा ब्रह्मवैवर्त्तपुराण, वायुपुराण,

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

स्कन्दपुराण और कल्किपुराण में ऐसे कितने ही विख्यात राजाओं के नाम और परिचय मिलते हैं, जिनका वंशलताओं में नामोनिशान भी नहीं है।

ऋग्वेद के स्थल २ पर सुदास, यदु, तुर्वसु द्रुह्यु, अणु पुरु, आयु अतिथिग्व, ऋजाश्व, सुश्रवस, पुरुकुत्स, चित्र, अरुण, कुत्स, रथरीति श्यावाश्व, विध्वदश्व, दभीति, विमद, भुज्यु, नाहुष, स्यश्व, खेल, पुरुपीढ़, स्वनम, मशर्शरि, अमवस, स्वीनम् प्रभृति, पराक्रमी राजाओं और राजर्षियों का जो परिचय सायणाचार्य ने लिखा है, उनमें से अधिकांश का, सूर्य-चन्द्र-वंशावलियों को देखने पर ठीक ठीक नाम नहीं पाया जा सकता।

जो लोग केवल सूर्य-वंश और चन्द्र-वंशकी वंशावलियों को देखकर ही प्राचीन राजाओं की अंगुली पर गणना करते हुए उनके शासन-काल की सीमा तक बांध बैठते हैं, वे यदि वंशलतातिरिक्त आर्य नृपतियों के इतिहास का पक्षपात हीन होकर अन्वेषण करें तो उनका भ्रम दूर हो जायगा। प्राचीन पुराणेतिहासों को देखने पर यह मालूम हो सकेगा कि अनन्त आर्य राजाओं के यदि केवल नाम भर उल्लेख किये जांय तो शायद वे दस बीस महाभारत जैसी पोथियों में अंट सके या नहीं।

परिशेष।

बहुत से पाश्चात्य पंडितों का ख्याल है कि भारतवर्ष की प्राचीन तत्त्वालोचना के लिये सूर्यवंश और चन्द्रवंश ही सर्वेसर्वा हैं, परन्तु यह बात नहीं है। कारण यह है, कि हमारे चौदह मन्वन्तरों में से केवल सातवें (वैवस्वत) मन्वन्तर के अन्तर्गत ही सूर्यवंशीय और चन्द्रवंशीय राजा हुए हैं। इनके पहिले के छः मन्वन्तरों में भी कितने ही प्रतिभाशाली राज-वंश होगये हैं। आगे के अन्यान्य सात मन्वन्तरों में भी इसी तरह के कितने ही शासक-कुल होंगे। वर्त्तमान वैवस्वत मन्वन्तर के सिवा अन्य तेरहों मन्वन्तरों का विवरण देखा जाय तो असंख्य महाबली और प्रबल पराक्रमी नृपतियों के साथ ही साथ कितने ही ब्रह्मविद् ऋषि-महर्षियों का भी वंश-वर्णन पढ़कर दङ्ग होजाना पड़ता है।

पहले ही कहा गया है कि जितने समयमें इकहत्तर चारों युग बीतते हैं, उतने का एक मन्वन्तर होता है। इस हिसाब से गत छः मन्वन्तरों में चार सौ छब्बीस युग व्यतीत होगये हैं। अब विचारिये कि इन युगों में से प्रत्येक युग में कितने राजवंश, सूर्य चन्द्र-वंशों की तरह व्यतीत होगये होंगे।

पहले मोटी नज़र से सर्व-प्रथम मनु स्वायम्भुवकी ही वंशलता देखिये। स्वायम्भुव मनु के प्रियव्रत और उत्तानपाद नाम के दो पुत्र थे। प्रियव्रत के दस पुत्र और दस पौत्र हुये। प्रियव्रत चक्रवर्ती राजा थे। उनके तीन पुत्र तो विरागी होगये, परन्तु सात में से प्रत्येक को एक एक ससागरा धरित्री दी गयी। *

नोट * विष्णु पुराण, द्वितीय अंश प्रथम अध्याय श्री मद्भागवत, ५ स्कन्ध १ म अध्याय और देवी भागवत ८ स्कन्ध चतुर्थ अध्याय देखिये।

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

प्रियव्रत के नाभि नामक पौत्रसे ऋषभ नामक प्रपौत्र पैदा हुए ऋषभ की गुण–गरिमा, प्रायः किसी विद्वान् से, छिपी नहीं है। इन्हीं के प्रसिद्ध योगी पुत्र जड़ भरत थे। भरत की कौतूहलोद्दीपक कथा शायद किसी हिन्दू से अविदित नहीं होगी। भरत के कुल में एक से एक बढ़कर विजयी और प्रतापी राजा हुये हैं। भरत की इक्कीसवीं पीढ़ी में विष्वग्ज्योति आदि एक सौ पुत्र हुए। इनसे अनेककुल हुए। इनमें बड़े–बड़े योग्य शासक होगये हैं। कितने ही तो चक्रवर्ती हुए हैं।

स्वायम्भुव मनु के छोटे पुत्र उत्तानपाद के पुत्र का ही नाम ध्रुव † था। इस वंश की नवीं और दसवीं पीढ़ी में महाराज पृथु और वेणु हुए थे। ‡ राजर्षि ध्रुव की चौदहवीं पीढ़ी में प्रचेता हुये थे। इनके वंश में अनेकानेक विश्व–विजयी चक्रवर्त्ती और शूरवीर महीपाल हुए थे।

महाराज प्रियव्रत के उत्तम, तामस और रैवत नाम के और भी पुत्र थे। भागवत के अनुसार ये ही, तपोबल के कारण, मन्वन्तराधिपति हुये थे।

शेष बारह, भूत और भविष्यत् मन्वन्तरों के अधीश्वर स्वारोचिष, औत्तम, तामस, रैवत चाक्षुष, सावर्णि, दक्षसावर्णि, ब्रह्मसावर्णि, धर्म सावर्णि, रुद्र सावर्णि, देवसावर्णि, और इन्द्र सावर्णि आदि मनु प्रजापतियों के अनन्त पराक्रमी पुत्र—पौत्रादि हो गये हैं और होंगे। इनमें कितने ही "सप्तद्वीपा वसुमती" के अकंटक राज्य करने वाले हो गये हैं। इनमें ही सावर्णि मन्वन्तर में, महाराज सुरथ जैसे अद्वितीय पृथ्वी पति तथा महाराज समाधि जैसे धन–कुवेर भूपति हो गये हैं। ⊛

अब यह विचार करना है कि, जब कि एक ही वर्तमान वैवस्वत मन्वन्तर के इतिहास का उद्धार करना असम्भव सा मालूम हो रहा है, तब अगम अतीत काल और अपार भविष्यकाल के मन्वन्तरों तथा मनु-पुत्रों के इतिहास का संग्रह करना एवं उनके सब राजाओं के शासन–काल का निर्देश करना सम्भव हो सकता है? क्षुद्रतम मनुज शक्ति, ससीम मानव–मस्तिष्क अज्ञेय, अनन्त और अगोचर इतिहास के लिये अनुमान भी कर सकता है? हम तो कहते हैं "नहीं" प्रतिध्वनि भी कहती है "नहीं"। इसी से शास्त्रों ने भी बार–बार कहा है,—

"न शक्यो विस्तरो विप्राः! वक्तुं वर्षशतैरपि।"

† भागवत, चतुर्थ स्कन्ध ८ से १२ अध्याय और अन्यान्य कई पुराणों में ध्रुव चरित, विस्तृत रूप से वर्णित है।

‡ श्री मद्भागवत, ४ र्थ स्कन्ध १५ से २३ अध्याय तक शिव पुराण धर्म संहिता, ४३ से ४७ वें अध्याय तक हरिवंश तृतीय अध्याय और ब्रह्मपुराण तृतीय तथा चतुर्थ अध्यायोंमें पृथु और वेणु राजाओं का विभूति वर्णन है।

नोट ⊛ ब्रह्मपुराण (५ वां अध्याय) विष्णु पुराण (३ य अंश, १ म और २ य अध्याय) गरुड़ पुराण (८७ वां अध्याय) हरिवंश (७ म अध्याय) श्रीमद् भागवत (३ य स्कन्ध ११ श अध्याय और ८ म स्कन्ध १ म अध्याय) देवी भागवत (१० म स्कन्ध १म २ य, ८ म, ६ म और १३ श अध्याय) शिवपुराण (धर्मसंहिता ४८ वां अध्याय) और मार्कण्डेय पुराण (५३ वां, ७४ वां, ७७ वां, ८० वां और ६४ वां अध्याय) देखिये।

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

खास 'ब्राह्मण सर्वस्व' के 'पुराणांक' के लिये

"पुराण और इतिहास"

(लेखक-काव्यतीर्थ, प्रोफेसर श्री लौटूसिंह जी गौतम एम० ए० एल० टी, एम० आर० ए० एस०, काशी)

आजकल अनेक लोगों की भ्रान्ति है कि पुराणों में सारे गप्प गपोड़े की बातें भरी हैं। उन लोगोंका कहना यह है कि ऐतिहासिक दृष्टि से पुराण निरर्थक से भी बुरे हैं। हमारे आर्य्य समाजी बन्धु और अंगरेजी पढ़े लिखे बाबू लोग पुराणों की खिल्ली उड़ाते हैं और "पुराणों" के नाम पर अपने अशिष्ट और बर्वर शब्दोंका प्रयोग करते हैं जिनसे उनकी अज्ञानता और क्षुद्राशयता सिद्ध होती है।

इस प्रस्तुत लेखमें यह दिखाने का यत्न किया गया है कि पुराण इतिहास का एक अंग है और इसकी उपादेयता प्रत्यक्ष है। इतिहास है क्या? इसपर अनेक परिभाषायें रची गई हैं। यदि हम लोग पाश्चात्य विद्वान् Carlyle की परिभाषा History is the record of the biographies of great men अर्थात् इतिहास बड़े पुरुषों के जीवनचरित्र की पोथी है, मानें तब तो पुराण एक इतिहास ग्रन्थ सिद्ध ही हो जाता है; परञ्च अन्य परिभाषाओं के अनुसार इतिहास में Chronology अर्थात् समय के क्रमानुसार घटनाओं का उल्लेख करना आवश्यक समझा गया है अर्थात् जब तक समय का विचार कर घटनायें वर्णन न की जाँय तब तक वह लेख "इतिहास" नहीं कहा जा सकता। आधुनिक विचार से "इतिहास" में भिन्न २ युगों के तारतम्य का क्रमानुसार वर्णन, कार्य कारण की अटूट श्रृङ्खला और समय की गति का विश्लेषण होना आवश्यक है। इस परिभाषा के अनुसार "पुराण" इतिहास की श्रेणी में नहीं आ सकते।

अन्य २ परिभाषाओं में "इतिहास" के विषय में भिन्न २ दृष्टि कोणोंसे विचार किया गया है परञ्च यह सभी मानते हैं कि "इतिहास" वह विषय है जिसमें मूल घटनाओं का सत्य २ वर्णन हो, इति+ह+आस, निश्चय ऐसा ही था यही इतिहास का अर्थ है यदि इतिहास का यह व्यापक अर्थ मान लिया जाय तो "विरुदावलि" अर्थात् "Tradition अर्थात् परम्परागत कथा" जिसमें विश्वास के लिये पर्याप्त प्रमाण हों और जिसमें "पूर्वापर" का विरोध न हो तो वह Tradition भी "इतिहास" है और इसे पाश्चात्य विद्वान् जैसे V. A. Smith प्रभृति भी मानते हैं, उन लोगों ने Tradition को भी इतिहास का अंग माना है। उस में चाहे पूर्ण ऐतिहासिक भावों की कमी हो परञ्च इतिहास का अंश उसमें अवश्य है। लेख के विस्तार के भय हम इन महाशयों की सम्मतियों की समीक्षा नहीं करना चाहते।

अब प्रश्न यह है कि सब परिभाषाओं का विचार कर पुराण को कौन स्थान देना चाहिये। इस विषय में पुराण प्रणेता महर्षि व्यास ने स्वयं पुराणों की परिभाषा दी है, वह यह है—

सर्गश्च प्रतिसर्गश्च वंशोमन्वन्तराणि च।
वंशानुचरितञ्चैव, पुराणं पञ्चलक्षणम्॥

जिन पोथियों में ये पञ्च लक्षण पाये जाँय

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

उन्हें "पुराण" समझना चाहिये अतः स्पष्ट है कि हम पुराण को "Dlocriptino History" अर्थात् इतिहास का "वर्णन भाग" कह सकते हैं। यद्यपि हमारे प्राचीन ग्रन्थ प्रणेताओं ने 'इतिहास' और 'पुराण' दोनों शब्दों का प्रयोग किया हैं, तथापि उन लोगों की सम्मति में ये दोनों विरोधी नहीं थे अर्थात् इतिहास के 'वर्णन भाग' ही का नाम पुराण पड़ा जो परम्परागत 'सूतों' द्वारा कहा जाता था और जिसमें वेद और स्मृति के धर्म साधारण भाषा और आलङ्कारिक ढंग से कहे जाते थे।

यहां पर यह कह देना आवश्यक है कि बहुत से "पुराण" के अन्ध पक्षपाती भारतीय तथा यूरोपीय विद्वान् "पुराण" वेद की तुलना करके एक दूसरे को बड़ा या छोटा कहने लगते हैं। पाश्चात्य विद्वानोंमें F. E. Pargiter ने पुराणों का अच्छा अध्ययन किया है, आपने पुराणों और वेदों की तुलना करते हुये पुराणों को "क्षत्रिय विरुदशील" और वेदों को "ब्राह्मण विरुदावलि" माना है। आप के ग्रन्थ Ancient Indian Historical Tradition से यों तो पुराण सम्बन्धी बहुत ज्ञातव्य बातें मालूम हो जायंगी परन्तु आप का निष्कर्ष ही गलत है क्यों कि आप को पुराणों का प्रतिपाद्य विषय ही नहीं ज्ञात हो पाया; यदि आप ध्यान पूर्वक पुराणोंको समझनेका यत्न करते तो विदित होता कि वेद और पुराणों में विरोध नहीं है; सब से आश्चर्य तो यह है कि Pargiter साहब ने वायु पद्मादि पुराणों से निम्नलिखित श्लोक उद्धृत किये हैं:—

"यो विद्याच्चतुरो वेदान् साङ्गोपनिषदो द्विजः।
न चेत् पुराणं स विद्यान्नैव स स्याद्विचक्षणः॥
इतिहासपुराणाभ्यां वेदं समुपबृंहयेत्।
बिभेत्यल्पश्रुताद्वेदो मामयं प्रहरिष्यति"॥

अर्थात् जो चारों वेदों को अङ्गों के साथ और उपनिषद् भी पढ़े यदि पुराण न जाने तो वह मूर्ख ही रह जाता है। इतिहास और पुराण से वेदज्ञान की वृद्धि करे, जिसने पुराण नहीं पढ़ा है उससे वेद डरता है यह समझ कर कि "यह मुझे चोट पहुँचावेगा" अर्थात् वेद के ज्ञान का परिवर्द्धक और पोषक पुराण है-वेद और पुराण में कोई विरोध नहीं है। Pargiter को बड़ा विरोध मालूम पड़ता है यह विरोधाभास मानवी प्रकृति के कारण है। आपने सुना होगा कि ब्रह्माने देव और दानवों को एक ही ज्ञान अर्थात् वेद पढ़ाया था। पर अपनी प्रकृतिके अनुसार उनके निष्कर्ष में अन्तर हुए। अतः इन विद्वानों को जब तक शुद्ध भावना से पुराणों की खोज की इच्छा न होगी, तब तक इनके निष्कर्ष स्वयं पूर्वापरविरोधी होंगे। भारतीय विद्वानों में भी हमें उन सनातनधर्मी भाइयों पर तरस आता है जो कहते हैं कि "तुम्हारे वेद में भी यह लिखा है; हमारे पुराणों में लिखा है तो क्या है? * क्या वेद पुराण दो विरोधी ग्रन्थ हैं?

* इस कहने का विशेष अभिप्राय है वह यह कि आर्यसमाजी मूल वेदों को ही प्रमाण मानते हैं उन्हें जब पुराणों की बातें वेद में भी दिखलायी जायंगी तो उन्हें स्वीकार करनी पड़ेंगी।

सम्पादक—

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

नहीं हमारे तो वेद और पुराण दोनों ही मान्य आदरणीय धर्मग्रन्थ हैं। दोनों ही नित्य मुक्तिके साधक हैं केवल वर्णन शैली में अन्तर है।

हम उन आर्यसमाजियों या समालोचकों को भी 'दाल भात में मूसलचन्द' समझते हैं कि जो अपनी दुर्बलता और संस्कारशून्यता से 'पुराणों' की निन्दा करते हैं "पुराणों" के भक्तों से तो हमारा निवेदन यह है कि "पुराणों" की ठीक स्थिति समझ कर उसे उपयोगी बनावें, उन को उत्कृष्ट से भी उत्कृष्ट रूपमें जनता के सम्मुख प्रकाशित करें। और पुराणविरोधियों से यह कि भाई! धर्म के दो अंग हैं—ज्ञान और भावना तर्क और केवल ज्ञान से मानवी धर्म का चक्र नहीं चलता; उसमें भावना की आवश्यकता होती है आज हमारे यहाँ "वेदान्तिनः सर्वे" वाली कथा अक्षरशः चरितार्थ हो रही है, ज्ञान "(शुष्क ज्ञान) और तर्क (शुष्क तर्क) ने श्रद्धा और भावना का नाश कर डाला है।

इस श्रद्धा और भावना की सुधा गङ्गा पुराणों में उन्मुक्त रूपसे बह रही है। अनुभवी कवि के मार्मिक शब्दों में—

"अष्टादशपुराणेषु व्यासस्य वचनद्वयम्।
परोपकारः पुण्याय पापाय परपीडनम्॥

अर्थात् पुराणों के निष्कर्षानुसार परोपकार ही पुण्य और पर-पीडन ही पाप है।

आपको यह सद्भावना और कहाँ मिलेगी? पढ़िये "भागवत" और देखिये भावना की विमलता! आप आपेसे बाहर हो जायँगे मस्तिष्क और हृदय के युद्ध में हृदय की जीत न होगी!! सारा हिन्दू जगत् जो पुराणों की शुद्ध भावनासे ग्रथित था; आज उच्छृङ्खल हो रहा है। इस उच्छृङ्खलता की निवृत्ति एवं हिन्दु जाति के प्राणसंचारी पूर्ण एवं विशुद्ध इतिहास के संकलन के लिये, आज "पुराणों" के अध्ययन की परम आवश्यकता है; क्योंकि विद्वन्मण्डल ने पुराणों को विरुदावलि, मानकर इसे इतिहास का अङ्ग मान ही लिया, मत्स्यपुराणसे आन्ध्रवंश का इतिहास खोजा गया; विष्णुपुराण से मौर्योंके इतिहास पर प्रकाश पड़ा एवं अग्नि वायु पुराण की अति प्राचीनता सब ने एक स्वरसे स्वीकार करली और अभी क्या जैसे जैसे समय बीतेगा अध्यवसायकी खोज होगी, पुराणों का इतिहासत्व सिद्ध होगा।

"भरत" आदि नृपगण का वृत्त वेदों और पुराणों में पाये जाने के कारण पुराण और वेद का सम्बन्ध स्थिर होता है और इससे उनका महत्व बहुत अधिक बढ़ जाता है। पुराणों की उपादेयता प्रत्यक्ष है। सूत का कर्त्तव्य बताते हुये पुराणों में कहा गया है—

स्वधर्म एव सूतस्य सद्भिर्दृष्टः पुरातनैः।
देवतानां ऋषीणाञ्च राज्ञाञ्चामिततेजसाम्॥
वंशानां धारणं कार्यं श्रुतानां च महात्मनाम्।
इतिहासपुराणेषु दिष्टा ये ब्रह्मवेद्रिभिः॥
वायु १-२१-२

भावार्थ यह है सूतोंका धर्म यह है कि वे देवता ऋषि अमित तेजवाले राजवंशों तथा बड़ी बड़ी विरुदावलियों की रक्षा करें जिनका वर्णन पुराणों में आया है। आधुनिक समाज के अनेक प्रश्न भी हल हो जांयगे और हमारा विश्वास है कि पुराणों के अध्ययन से व्यवहार चातुर्य एवं भावना जागृति के अतिरिक्त भावना की कमीसे

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

हिन्दू जाति में पारस्परिक वैमनस्यादि और जो भेदभाव बढ़ रहे हैं, वे भी बहुत कुछ सुधर जायंगे। पुराणों में अनेक अमूल्य रत्न भरे पड़े हैं जो समस्त संसार के लिये बड़े महत्वपूर्ण एवं उपयोगी हैं। जो लोग नहीं समझते या समझना चाहते उनके लिये "पुराण" क्या वेद भी अनावश्यक हैं। परन्तु जिन लोगों ने पुराणों का अध्ययन किया है, वे जानते हैं कि मानवी जीवन की सीमा उसकी सबलता एवं निर्बलता का विचार कर "पुराणों" ने ऐसा मार्ग दिखाया है कि जिससे हम अपना अन्तिम लक्ष्य प्राप्त कर सकते हैं। इसे आप स्वर्ग, गोलोक बैकुण्ठ, सुरधाम जो जी में आवे कहिये; बात एक ही है। हम अन्त में पुराणों की उपादेयता एवं ऐतिहासिकता की ओर शिक्षित जनता का ध्यान आकर्षित करते हैं।

अब वह समय आया है जब विज्ञान की ज्योति में सारे धर्मों की कड़ी समीक्षा होगी। पुराणों की–पुराणधर्म की–सफलता निश्चित है। मानव—समाज के जिस विकास के लिये उनकी आवश्यकता है वह सदा रहेगी ही, अतः पुराणों के सहारे हम अपना लाभ कर सकें यही समझ और अनुभव का तकाज़ा है। क्या हम विश्वास करें कि अङ्गरेजी पढ़े लिखे भाई भी इस प्रधान तीर्थ की ओर आने का कष्ट उठावेंगे और सच्चे सनातनी पुराणों का उद्धार कर धर्म की रक्षा करने में श्रम करेंगे। एवमस्तु।

पुराणों की गाथा।

[श्री अवन्तविहारी माथुर "अवन्त"]

बल वैभव का वर्णन, प्यारा, दुष्ट दलन की रागिनियां।
गाते गाते, हमें सुनाते, बीत गईं अगणित घड़ियां॥
इनमें उनकी गाथायें हैं माता की कठोर कड़ियां।
जिनने तोड़ तोड़ फेंकी थीं, पराधीनता की लड़ियां॥
आओ बैठें, सुनें परस्पर उन्हीं पुराणों की गाथा।
इनके सम्मानार्थ नवादें, हम अपना २ माथा॥

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

खास 'ब्रा० स' के 'पुराणांक' के लिये।

पुराण ही भारतीय इतिहास है.

(लेखक—श्री पं० मायादत्त जी पाण्डेय शास्त्री चन्दौसी)

किसी जातिको अनन्तकाल तक दलित या गुलाम बना देने के लिये उसका इतिहास नष्ट कर देना विजयी जाति का मुख्य ध्येय होता है। इसी ध्येय को कार्यरूप में परिणत करने पर वह यथार्थ में विजय का डङ्का बजा सकती है। इसी लिये अनेक विजेता लोग विजेय देश या जाति के बड़े २ ग्रन्थ-संग्रहालयों को नष्ट कर देते हैं, अमूल्य ग्रंथ रत्नों को जला २ कर अपनी जघन्य पिपासा शान्त करते हैं। कोई उनके इतिहासका अभिमान रखने वालों को बदनाम किया करते हैं। विशेष ऐतिहासिकों को दण्ड देते हैं और कुटिल कूटनीति के आचार्यों के द्वारा दो एक स्वार्थी विभीषणों की सहायता से मनमाना इतिहास घड़ते हैं उसकी प्रशंसाओं के पुल बांध कर अपने राज बल से उसका खूब प्रचार करते हैं। जिससे विजित जाति के रग रग में उसी प्रकार का भाव जागृत होउठे वह अपने प्राचीन गौरवको भूल जाय, पूर्वजोंको अशिक्षित असभ्य समझने लगे तथा किसी प्रकार शिर न उठा सके। अस्तु ठीक यही दशा भारतवर्ष की तथा भारतीय हिन्दू जाति की यवन राजत्वकाल से अब तक हुई।

× × × × ×

जाति एक शरीर है धर्म उसकी आत्मा है राजनीति उसकी बुद्धि है इतिहास उसके प्राण जातीय भाव मन है नाना प्रकार के अन्तर्जातीय भावों का संघटन मन की एकाग्रता है। इन सब के संयुक्त संवन्ध से जातीय कलेवर स्वस्थ या सुरक्षित कहलाया जाता है जाति जीवित कही जाती है अपनी ईश्वरदत्त अवधि तक देश रूपी लीला स्थली में स्वतन्त्र रह कर विहार करती है यही जानकर आर्य जाति को अर्वों वर्ष तक संसार में जीवित रखने के लिये महर्षियों ने धर्म शास्त्र, राजनीति और समाज शास्त्र को इतिहास के अन्तर्गत सम्मिलित कर पुराण ग्रंथों का निर्माण किया था, जिससे पुण्य के लोभ से आवाल वृद्ध शिक्षित अशिक्षित, स्त्री पुरुष सब ही सुनें पढ़ें और तदनुसार जातीय गौरव की रक्षा धर्माचरण करें। फल प्रत्यक्ष है, मुहम्मद गोरी तथा क्लाइव की करणी को विरले ही शिक्षित जानते हैं राम कृष्ण ध्रुव प्रह्लाद भीष्म युधिष्ठिर आदि को विरला ही अभागी भारतीय नहीं जानता होगा। अस्तु उन ही पुराणों के अट्ठारह बड़े २ संग्रह महर्षि कृष्ण द्वैपायन (वेद व्यास) ने संगृहीत किये हैं जो अब भी विद्यमान हैं और वेही भारतीय इतिहास भी हैं।

× × × × ×

इतिहास=(पुरावृत) सिलसिलेवार पुरानी कहानी का नाम है। इतिहास शब्द इतिह, इस निपात समुदाय (अव्यय) तथा 'आस—उपवेशने धातु से बना है। इतिह का अर्थ सिलसिलेवार वर्णन है धातु रूप से मिलकर यह अर्थ होता है कि—सिलसिलेवार कहानियों की स्थिति जिसमें हो उसे इतिहास कहते हैं। इतिहास शब्द का

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

अर्थ ही इतिहास की परिभाषा है इसका पर्याय वाची पुरावृत्तशब्द भी है। आर्य भाषा साहित्य के निर्माता महर्षियों की यह एक मुख्य विशेषता है कि किसी भी संज्ञा शब्द के अन्तर में उसके निर्दोश लक्षण को भर देते हैं।

जो परिभाषा इतिहास शब्द की संज्ञाशब्दार्थ किम्वा शाब्दिक लक्षण तथा प्रचलित इतिहास वस्तु के द्वारा होती है वही परिभाषा फलतः पुराण शब्द की भी है। पहिले जो बातें नवीन (वर्त्तमान) थीं वह पुराण कही जाती हैं। यह व्याख्या निरुक्तकार महर्षि यास्क की है।

प्रश्न-पुराणं कस्मात्=पुराण शब्द कैसे बनता है ? । (उत्तर) पुरानवं भवति-क्योंकि वह पहिले नवीन रहता है। अर्थात् जो सिलसिलेवार कहानियाँ आज पुरानी कही जाती हैं वे पहिले नवीन थीं इसी से उनके संग्रह को पुराण कहना उपयुक्त है। विदित होता है कि पूर्वोक्त अभिप्राय से धर्मशास्त्र राजनीति और समाजशास्त्र को इतिहास के साथ सम्मिलित कर देने के कारण ही इतिहास से पृथक् इस ग्रन्थ राशि का नाम पुराण भी पड़ा है। शाब्दिक लक्षण के अतिरिक्त पुराण की जो स्वतन्त्र परिभाषा है वह भी इतिहास के लक्षण से अधिकांश में मिलती है जैसे—

सर्गश्च प्रतिसर्गश्चवंशो मन्वन्तराणि च।
वंशानुचरितञ्चैव पुराणं पञ्चलक्षणम्॥

जिसमें महा प्रलय के अनन्तर का सृष्टि क्रम और जगत् के आदि पुरुष का वंश वर्णन, भिन्न भिन्न मन्वन्तरों की कथायें और मानव कुलों की सिलसिलेवार कहानियाँ ये पाचों बातें उल्लिखित हों उसे पुराण कहते हैं।

उपर्युक्त तुलनात्मक विचार करने से पुराण और इतिहास में कोई विशेष अन्तर नहीं रह जाता है। भारतीय दृष्टि से जो महाभारत तथा रामायण भारतवर्ष का इतिहास माना जाता है, उन्हें आद्यन्त पढ़ जाइये और पुराण ग्रंथों को भी पढ़ लीजिये कुछ विशेष भेद मालूम नहीं होगा। यदि भेद है तो इतना ही कि भारत वंशानुचरित के साथ एक युद्ध घटना को प्रधान रखे हुए हैं। पुराण पांचों बातों को बराबर प्रधान रखे हुए हैं। इसी से लौकिक अलौकिक दिव्य अदिव्य सभी प्रकार की बिभूति का उनमें वर्णन पाया जाता है। भक्ति सदाचार युक्त वर्णन दोनों में समान है। जीवको अमर मानकर जन्मान्तर दोनों ही मानते हैं। कर्मानुसार स्वर्ग नरक अपवर्ग महाभारत में और भागवतादि पुराण में भी बराबर है। आर्यों का मूल निवास दोनों ही से भारतवर्ष ही सिद्ध होता है। इतना ही नहीं पुराणों में आई हुई प्रत्येक कथायें कहीं अविकल रूप से कहीं छाया रूप से कहीं दृष्टान्त रूप से कहीं सांकेतिक प्रकार से कहीं २ संज्ञामात्र से महाभारत और बाल्मीकि आदिमें आ ही जाती हैं।

क्षत्रिय जाति की आदर्श वीरता, जगत् साम्राज्य, अद्भुत कला कौशल, महान् त्याग, आठों प्रकार की योग सिद्धियां, धर्म वीरता, आश्रम धर्मका पालन, प्रजा वात्सल्य, न्याय परायणता आदि का वर्णन पुराण तथा महाभारतादि ग्रंथों में समान रूप से है। इसीलिये महर्षि यास्क ने अपने वैदिक कोष के व्याख्यानात्मक निरुक्त ग्रंथ में पौराणिकों को ऐतिहासिक शब्द से याद किया है।

(प्र०) तत्कोवृत्रः (उ०) मेघइति नैरुक्ताः (त्वाष्ट्रो

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

असुर इत्यैतिहासिकाः। वृत्र कौन था इस प्रश्न पर कहते हैं कि निरुक्तकार मेघ को वृत्र मानते हैं और ऐतिहासिक लोग त्वष्टा के पुत्र एक राक्षस का नाम वृत्र मानते हैं। वृत्रासुर का वृत्तान्त पुराणों में ही है। इससे स्पष्ट ज्ञात होजाता है कि यास्क काल में पुराणों को इतिहास भी कहते थे।

× × × ×

उस समय भारत वसुन्धरा, वसुन्धरा ही थी, यह देश स्वर्गभूमि, स्वर्णभारत आदि पवित्र पदवियों से सुभूषित था। सर्व सम्पदाओं से सम्पन्न था, किसी प्रकार का अन्न वस्त्र का प्रश्न स्वप्न में नहीं आसकता था। स्वार्थ परायणता (खुदगर्जी) ईश्वर भक्ति के ढोंग, विषयों की दासता, फैसन की गुलामी, आदि जघन्य हानि प्रद दोषों का नाम तक नहीं था प्रत्युत सन्तोष सत्यनिष्ठा, निश्छल भक्ति, सादगी, सरलता, धर्मानुराग, देश प्रेम, आदि अच्छे ही गुण विद्यमान थे। देश प्रेम वह था जिसमें अहंकार तथा अविचार का नाम नहीं था, भारतीय जीवन सदाचारमय था सदाचार ही देशकी उन्नति का आधार समझा जाता था।

ऐसे समयमें भारतीय आर्य विद्वानों के सामने यही एक प्रश्न था कि "अपने कर्मों के अनुसार हर एक दशा में पड़े हुये मानव समाज को उन २ की प्राकृतिक परिस्थिति के अनुसार अनेक प्रकार के शुभ कर्मों के द्वारा एक परम सत्य तक पहुँचाना चाहिये। चाहे कर्तव्य मार्ग भिन्न हो किन्तु परिणाम एक हो, जिससे सब का मनुष्य जीवन सफल हो। अबोध जनता भी उस परम पिता से विमुख न हो सके; यही हुआ। त्रिकाल दर्शी निस्पृह महर्षियों ने उस समय की ऐतिहासिक घटनाओं के साथ २ आर्य राजा प्रजा के श्रुति स्मृति सम्मित आचरण भी अङ्कित कर दिये।

× + × ×

विदेशी चश्मा लगाकर यदि हम किसी कारण से पुराण ग्रन्थों को अपना इतिहास नहीं मानते हैं तो हमारा कोई इतिहास ही नहीं रह जाता है। फिर हम किसके आदर्श पर जी सकते हैं ? किस नींव पर देशका उद्धार कर सकते हैं ? किस बूते पर अपनी प्राचीनता और सभ्यता का अभिमान कर सकते हैं ? किस बल पर आर्यावर्त्त (भारत) को अपनी मातृ भूमि समझकर वन्देमातरम् का सुखद गान कर सकते हैं क्यों कि आधुनिक भारतीय गुलामी के इतिहास के अनुसार मुसलमान और ईसाइयों की तरह हम भी इस देश के आगन्तुक लुटेरे ही तो सिद्ध होते हैं ?

× × × ×

यदि मान लिया जाय कि महाभारत और रामायण तथा ब्राह्मण ग्रन्थ एवं उपनिषद् ग्रन्थ इतिहास हैं तो यह भी निश्चित है कि जिन दोषों को मढकर हम पुराणों को इतिहास नहीं मानना चाहते हैं उन्हीं दोषों से उक्त ग्रन्थ भी इतिहास नहीं होसकते हैं। क्या ब्राह्मण ग्रन्थ तथा महाभारतादि में अर्थवाद (अतिशयोक्तियां) नहीं है ? धार्मिक आचरण का वर्णन नहीं है ? पुण्य,पाप स्वर्ग, नरक, जन्मान्तर, कर्म बन्धन, ईश्वर भक्ति यज्ञ, जप, दान, तीर्थ आदि का वर्णन नहीं है ? क्या उनमें लिखित घटनाओं के साल सम्वत्

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

अंग्रेजी तरीके से लिखित हैं ? यदि ये बातें सब समान हैं तो—

"पुराण ही भारतीय इतिहास हैं" यह कहने पर हमें क्यों संकोच होता है। क्योंकि महाभारत, रामायण, ब्राह्मण ग्रन्थों से भी पता चलता है कि पुराण ग्रन्थ प्राचीन ही हैं। वेदव्यास ने द्वापरान्त में उनका वेदों की तरह अलग २ कर के संग्रह ही किया है।

आक्षेप—निराकरण।

यूरोपीय दृष्टिकोण से हमारे इतिहास पर जो आक्षेप किये जाते हैं; उनमें पहिला आक्षेप यह है:—

(१) भारतीय लोग इतिहास लिखना नहीं जानते थे क्योंकि पाश्चात्यों की सी ऐतिहासिक शैली पर लिखा हुआ उनका कोई ग्रन्थ नहीं मिलता है।

निराकरण—यह बिलकुल व्यर्थ सी बात है क्योंकि ऐसा हम भी तो कह सकते हैं कि यूरोपीयों को इतिहास लिखने का सऊर नहीं था क्योंकि उन का कोई ग्रन्थ हमारे से ढंग पर नहीं लिखा हुआ है। इसलिये कहना चाहिये कि भिन्न २ देशों में जहां स्वतन्त्र सभ्यता हुआ करती है, अपने २ ढंग की ही सब बातें होती हैं। हम यदि यूरोप वालों की तरह भोजन नहीं खाते तो क्या हम भोजन ही नहीं खाते हैं ? अतएव हमारे इतिहास का प्रकार हमारी सभ्यता तथा साहित्य की ही शैली से लिखा गया है।

आक्षेप नं० (२) भारतीय इतिहासमें साल संवत् नहीं हैं।

निराकरण—जिस प्रकार यूरोपीय विधि से लिखे हुए इतिहास में माह, तारीख, घंटा, मिनट नहीं लिखा हुआ है, उसी प्रकार हमारे इतिहास में सम्वत् नहीं तो क्या हानि है ? युग और युगांश तो लिखे ही हुये हैं। उस समय गणना शैली उसी प्रकार थी। यह भी बात समझने की है कि—अढाई हजार वर्ष की आयु वाली जाति का डेढ अरब वर्ष की आयु वाली जाति के तरीके से इतना अन्तर होना ही चाहिये। घोड़ा बारह वर्ष में जवान कहा जाता है तो हाथी पचास वर्ष में जवान कहा जाता है।

आक्षेप (३) भारतीय इतिहास धार्मिक विचारों से भरे पड़े हैं।

निराकरण—आर्य जाति तथा आर्यावर्त भूमि ही धर्मप्राण है इस लिये इसका इतिहास भी धार्मिक विचारों से भरा हुआ है। जो देश तथा जाति दूकानदार, स्वार्थी, निर्दयी, वहसी, डाकू, लुटेरे, हिंसकों से भरी रहती है; वहां अवश्य कोरी राजनैतिक चालों से भरा हुआ इतिहास लिखा जाता है।

आक्षेप (४) असंभव बातें है।

निराकरण—जो अबोध मनुष्य बिजुली की ताकतों को नही जानता और न तो उसने विद्युच्छक्ति से चलने वाले वायुयान, जलयान, बेतार के तार आदि विचित्र आविष्कारों को ही देखा या सुना हो, कालान्तर में केवल इतिहास में ही पढ़कर वह इन्हें भी असम्भव बता सकता है। इसी प्रकार बिजली से अनन्त गुण अधिक शक्ति रखने वाले आत्मिक बल सम्बन्धी इतिहासांश को अबोध जनता ही असंभव बतला सकती है। बुद्धिमान् नहीं। क्योंकि आत्मबल से प्राप्त हुई आठों सिद्धियों से क्या नहीं होसकता !!!

आक्षेप (५) प्रामाणिक बातें नहीं हैं।

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

निराकरण-उक्त ऐतिहासिक ग्रन्थों में कोई ऐसी बातें नहीं जो ऊह, प्रमाण, तर्क से रहित हों। विचार पूर्वक अध्ययन से सब समाधान होजाता है। इनके विषय में केवल पक्षपात से ऊटपटांग बातें सिखाई जाती हैं, जो केवल राजनैतिक चाल हैं। जिस चाल की पोल 'लार्ड मेकाले के पत्र अपने बाप के नाम' नामक पुस्तक से खुल जाती है।

अतएव प्रचलित 'भारतवर्ष का इतिहास' भारत की गुलामी का इतिहास है। वह किसी प्रकार हमारा इतिहास नहीं। उस में हिन्दुओं को बुरी तरह कुचला गया है। उस पर हमारे अनेक आक्षेप हैं। लेख बहुत बढ़ गया है, बारान्तर में उस की विस्तृत समालोचना पाठकों की सेवा में प्रस्तुत की जायगी।

खास 'ब्रा० स०' के "पुराणाङ्क" के लिये

पुराणों का सार—मर्म और समन्वय।

[अनुवादक-श्री पं० नन्दकिशोर जी शुक्ल वाणीभूषण-टेढ़ा उन्नाव]

प्रत्येक पुराण और उपपुराण की विषय-परम्परा भिन्न भिन्न रूप से परिवर्णित होने पर भी धर्म शिक्षा, लोक-शिक्षा, आचार-प्रतिष्ठा समाज श्रृंखला-रक्षा सभी पुराणों का मुख्य उद्देश्य है। और इस उद्देश्य के साधनार्थ, विविध दृष्टान्तों के उल्लेख के बहाने इतिहास पुरातत्व भूतत्व, दर्शन-तत्व, ज्योतिषतत्व एवं ज्ञान विज्ञान की आलोचना पुराणों में देखी जाती है। पुराण ग्रन्थों के लक्षण जब अभिन्न रूप से निर्दिष्ट हुये हैं, तब, भाव की अभिन्नता ही उनका मेरुदण्ड है, इसी से मूल में सभी पुराणों का प्रायः असामञ्जस्य नहीं देखा जाता है। ज्ञान भक्ति की शिक्षा देनाही पुराण साहित्यका लक्ष्य श्रुति-स्मृति विहित धर्म-सिद्धान्त को सहज-बोध्य बनाना ही पुराण साहित्य का ध्येय जान पड़ता है। धर्म-प्रचार हो पुराणों का अभीष्ट है। तब जो किसी पुराण में सत्व, का किसी पुराण में रज का, किसी पुराण में तमोगुण का,-किसी पुराण में विष्णु का, किसी पुराण में शिव का, किसी पुराण में ब्रह्मदेव का, किसी पुराण में पुरुष का, किसी पुराण में प्रकृति एवं किसी में गणेश का, किसी में सूर्य का किसी में शक्ति वा देवी या अन्य देवताका प्राधान्य परिवर्णित हुआ है, वह केवल-अधिकारि भेद से कर्तव्य-तत्व समझाने के लिये वर्णित हुआ है। सब मनुष्यों की धारणाशक्ति समान नहीं होती, स्वभाव या प्रकृति भी भिन्न २ रहती है, अतएव सब प्रकार की शक्ति तथा विभिन्न प्रकृति के उपयोगी बन कर ही पुराण ग्रंथ प्रकट हुये हैं। सृष्टि तत्व के सम्बन्ध में दर्शन शास्त्रों की आलोचना में जो मत प्रतिष्ठित हुआ है, स्मृतियों में भी जिसका समर्थन देखा जाता है, वही मत पुराणों में भी अविकृत रूप से विद्यमान है। किसी २ स्थान में रूपक का आश्रय लेने पर भी, मूल में वह एक ही तत्व निहित मिलता है।

दृष्टान्त के लिये पहिले विष्णु पुराण से सृष्टि सिद्धान्त उद्धृत करते हैं। पराशर मुनि कहतेहैं—"हे मैत्रेय! प्रलय के समय गुण-साम्य (सत्व,

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

रज एवं तमोगुण की निष्क्रिय अवस्था) तथा प्रकृति से पुरुष पृथक् रूप में अवस्थित होता है। सृष्टिकाल उपस्थित होने पर, परमेश्वर अपनी इच्छा के अनुसार प्रकृति और पुरुष में प्रविष्ट होकर उनको क्षोभित अर्थात् सृष्टि करने में उन्मुख कर देता है। किन्तु इसमें परमेश्वर की कोई क्रियावत्ता नहीं। जैसे गन्ध के निकटवर्ती होने मात्र से ही मन में चञ्चलता उत्पन्न होजाती है, वैसी ही सृष्टि-कार्य में परमेश्वर की क्षोभ जनकता है। पुनः सृष्टिकाल में, पुरुषाधिष्ठित उस गुण—साम्य में गुण-व्यञ्जन होता अर्थात् महत्तत्व-उत्पन्न होता है। महत्तत्व से वैकारिक अर्थात् सात्विक, तैजस अर्थात् राजस और भूतादि अर्थात् तामस, इस त्रिविध अहंकार तत्व की उत्पत्ति होती है। त्रिगुणात्मक होने से अहंकार भूतेन्द्रिय देवता के उद्भव का हेतु है। जिस प्रकार प्रधानतत्व द्वारा महत्तत्व का आवृत है, उसी प्रकार महत्तत्व द्वारा अहंकार तत्त्व भी आवृत है। तामस अहंकार के क्षुभित होने पर, अर्थात् कार्योन्मुख होने से, शब्द तन्मात्रा और उससे शब्द गुण विशिष्ट आकाश की सृष्टि होती है। फिर दोनों के परस्पर आवृत्त होने से आकाश क्षुभित होता और स्पर्श तन्मात्रा एवं उस से स्पर्श गुण विशिष्ट बलवान् वायु की उत्पत्ति होती है। इसी तरह फिर आकाश के वायु को आवृत करने पर रूप तन्मात्रा और ज्योति की उत्पत्ति होती है। वायु द्वारा ज्योति आवृत्त होकर, क्षुभित होती है, तब इस तन्मात्रा एवं उससे रसगुण विशिष्ट जल उत्पन्न होता है। यह जल ज्योति द्वारा आवृत्त होकर क्षुभित होता है इस समय गन्ध तन्मात्रा की सृष्टि होती एवं उससे ही फिर पृथिवी की उत्पत्ति होती है। फलतः, तामस अहंकार से इस भांति भूत तन्मात्रा की सृष्टि हुआ करती है। दश इन्द्रियां तैजस अर्थात् राजस अहंकार से उत्पन्न होती हैं, और दशों इन्द्रियों के दश अधिष्ठान देवता वैकारिक अर्थात् सात्विक अहंकार से उत्पन्न होते हैं।······इस प्रकार महत्तत्व से महाभूत पर्यन्त मिलित होकर एक अंड (ब्रह्माण्ड) उत्पन्न होता है। उससे ही सपर्वत द्वीप समुद्र, सदेवासुर मानुष, सज्योतिः लोक लोकान्तर उत्पन्न होते हैं देखो विष्णुपुराण का द्वितीय अध्याय!

श्रीमद्भागवत में विदुर को मैत्रेय ने जो सृष्टि तत्व सुनाया है, उसका भी मूल इसी प्रकार का है। मैत्रेय कहते हैं-"सत् रज तम इस गुणत्रय का स्वरूप प्रधान वा प्रकृति निर्विकार हुई थी। जीवका अदृष्ट प्रकृति का अधिष्ठाता महापुरुष एवं काल इन तीन कारणों से उसके संक्षोभित होने से, महत्तत्व उत्पन्न हुआ। महत्तत्व से अहंकार तत्व, उससे पञ्चतन्मात्रा, पञ्च महाभूत, ज्ञानेन्द्रिय एवं उनके पांच पांच अधिष्ठातृ देवता उत्पन्न हुये। तत्पश्चात् श्रीभगवान् के शक्तियोग से मिलित होकर भौतिक हैमाण्ड की सृष्टि हुई। उस अंड में भगवान् के अधिष्ठित होने पर उनके नाभि देश से एक कमल प्रकट हुआ। एवं उससे उत्पन्न होकर ब्रह्मा जी भगवान् की इच्छानुसार सृष्टि कार्य में प्रवृत्त हुये।" देखिये भागवत तृतीय स्कन्ध अध्याय २०।

शिवपुराण के मत में भी प्रकृति से महत्तत्व, महत्तत्व से अहंकार, अहंकार से पञ्च तन्मात्रा, पञ्च तन्मात्रा से पञ्चभूत एवं पञ्चभूत से पञ्च ज्ञानेन्द्रियां और पञ्च कर्मेन्द्रियां उत्पन्न होती हैं।

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

प्रकृति और पुरुष व्यतिरिक्त सब तत्व अचेतन हैं। प्रकृति, और पुरुष के सहित योग कर सर्व शुद्ध चौबीस तत्व होते हैं।" इस स्थल में सांख्य शास्त्र के मत से बहुत ऐक्य देख पड़ता है। वराहपुराण, में प्रकृति के वदले माया नाम निर्दिष्ट हुआ है। पुराण वक्ता कहते हैं—मूल शक्ति माया है; माया से महत्तत्व, महत्तत्व से अहंकार इसी तरह पर्य्याय क्रम से सृष्टि प्रक्रिया साधित हुआ करती है।

अग्निपुराण के मत से, "सृष्टि के पूर्व केवल अव्यक्त ब्रह्म विद्यमान था। दिन रात्रि, आकाश किसी का भी अस्तित्व नहीं था। अनन्तर परम पुरुष विष्णु ने प्रवेश कर प्रकृति को क्षोभित कर दिया तब प्रकृति से महत्तत्व, महत्तत्व से अहंकार अहंकारसे पांचतन्मात्रा, फिर पञ्च महाभूत एवं, महाभूतों से पञ्च ज्ञानेन्द्रियों और पञ्च कर्मेन्द्रियों आदि की उत्पत्ति हुई। सब पुराणों का उल्लेख आवश्यक नहीं। इतने से ही समझ लेना चाहिये कि पौराणिक मतों की मूल में अभिन्नता ही है। अग्निपुराण का सत्रहवां अध्याय ब्रह्माण्ड प्रकरण का दूसरा अध्याय, देवी भागवत के सत्रहवें स्कंध का बत्तीसवां अध्याय गरुड़ पुराण के पूर्व खण्ड का चौथा अध्याय द्रष्टव्य है। सामान्य प्रकार भेद के सिवा मूल में कोई भिन्नता नहीं, कहीं पर कुछ मतान्तर देख पड़ता है वह केवल प्रकार-भेद मात्र है। पुराणों में प्रलय के सम्बंध में भी विशेष मतानैक्य नहीं देख पड़ता। सृष्टि पदार्थ मात्र का संहार होने पर सत्व आत्मा में (ईश्वर में) लीन होता है और प्रकृति तथा पुरुष दोनों ही समधर्मी होकर अवस्थान करते हैं। तिल में तैल, दुग्ध में घृत की अवस्थिति की तरह तम और सत्वगुण में अव्यक्ताश्रित रजोगुण अवस्थित होता है। सृष्टि का सूक्ष्म तत्व इस प्रकार परिवर्णित होने पर भी, स्वयम्भू ब्रह्मा की उत्पत्ति मानकर उनके द्वारा सृष्टिकार्य साधित होने के सम्बन्ध में सब पुराणों का ही ऐकमत्य देख पड़ता है। सृष्टिप्रवाह अनन्त है, प्रलयकाल में वह सुप्त अवस्था में अवस्थित रहता है, प्रलयान्त में भगवान् की इच्छा से ब्रह्मा सृष्टि कार्य में लग जाते हैं। प्रथम सृष्टि स्वयम्भू की वा अपने आप ही संसाधित न होने से एवं उसके बाद की सृष्टि उसी स्वयम्भू-कृत न मानने से, परवर्ती सृष्टि तत्व का सामञ्जस्य-साधन दुरूह हो पड़ता है, उससे अतीत सूक्ष्म तत्व अल्पायु अल्पबुद्धि मनुष्य के ध्यान या धारणा में आता ही नहीं। जान पड़ता है, इसलिये ही आदि सृष्टि इस प्रकार निर्दिष्ट हुई है। एक ही विषय के वर्णन में पुराणों में जो असामञ्जस्य जान पड़ता है शास्त्र दर्शी विद्वान् कहते हैं, उसका कारण कल्प विवर्तन है। पुराणों के मत में-ब्रह्मा का एक दिन रात कल्प कहलाता है। तदनुसार चार सौ बत्तीस करोड़ लौकिक वर्षों में ब्रह्मा का एक दिन एवं इसी परिमाण से ब्रह्मा की एक रात्रि होती है। दिन के भाग में ब्रह्माण्ड की सृष्टि और विद्यमानता रात्रिकाल में उसकी लय प्राप्ति होती है। मन्वन्तर और युग आदि सब एक एक कल्प के अन्तर्भुक्त हैं। इस तरह तीस कल्पों में ब्रह्मा का एक मास, एवं बारह महीनों में उनका एक वर्ष होता है। मनुष्यों के तीस दिनों वा एक महीनामें जैसे अमावास्या-पूर्णिमा देखते है वैसे ही ब्रह्माके तीस कल्पों वा मासों के मध्य भी अमावस्या-पूर्णिमा है। ब्रह्मा के तीस कल्प वा दिन-रात्रि

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

के नाम हैं-श्वेतवाराह, नील, लोहित, वामदेव गाथान्तर, रौरव, प्राण, वृहत्, कंदर्प, सत्य, ईषाण, ध्यान, सारस्वत, उदान, गरुड़, कौर्म, नारसिंह, समाधि, आग्नेय, विष्णुज, सौर, सोम भावन, सुप्तमाली, वैकुण्ठ, आर्चिष, वल्मी, वैराज, गौरी, माहेश्वर, पितृ। इनमें पहिले पन्द्रह कल्प ब्रह्माका शुक्ल पक्ष, एव शेषोक्त पञ्चदश कल्प कृष्ण पक्ष कहे जाते हैं।

ब्रह्मा की आयु सौ वर्ष की है। पचास वर्ष अर्थात् अष्टादश सहस्र कल्प वीत चुके हैं इस समय एक्यावनवें वर्ष का पहला कल्प श्वेतवाराह है। एक एक कल्प में, एक एक मन्वन्तर में एक एक चतुर्युगी में, चक्रनेमि के परिवर्तन की तरह सृष्टि-प्रवाह घूमघाम कर फिर आजाता है जो अवतार, जो शास्त्र, जो सृष्टि, जो बीज, पूर्व कल्प में पूर्व मन्वन्तर में विद्यमान था, वही परकल्प में अन्य रूप से प्रकाशमान होगया। श्रुति स्मृति पुराणादि शास्त्र ग्रन्थ, प्रथम कल्प में भी मध्य कल्पमें भी थे, अब भी हैं। वराह, मत्स्य, कूर्मादि अवतार, देवदानव गंधर्व किन्नर, पशुपक्षी कीट पतंग, स्थावर जंगम, चराचर, सब कुछ था, और है। तब, कर्म-भेद से, काल भेद से, सबका सामान्य रूपान्तर मात्र होता है। इतना ही पार्थक्य है। आज तो वृक्ष शाखा-प्रशाखा-पत्र-पुष्प-फल से परिशोभित है, कुछ दिन बाद ऐसा अस्तित्व लुप्त होजाता है। किन्तु इससे वृक्ष का ध्वंस नहीं कहा जायगा। बीज रूप से वृक्ष विद्यमान है। फिर काल पाकर प्रकट ही होजायगा ठीक है, देश-काल-पात्र के प्रभावसे विकृतिवश नवीन वृक्ष से पूर्व वृक्ष का किसी अंश में सादृश्य नहीं मिलता, किन्तु मूलतः जिस वृक्षका जो बीज है उसका वैसा वृक्ष ही होगा इसमें कुछ संदेह नहीं, आम्र वृक्ष ध्वंस होने पर उसके बीज से आम्र वृक्ष ही उत्पन्न होता है नारिकेल वृक्ष की परिणति से दूसरे नारिकेल वृक्ष की ही उत्पत्ति होती है शास्त्रादि के सम्बन्ध में भी ऐसा ही समझना चाहिये। पूर्व कल्प में जो विषय जिस शास्त्र में जिस भाव से वर्णित हुआ था, परकल्प में भी स्थूलतः उसी भाव से वह विषय उद्भासित हुआ है तब जो सामान्य पार्थक्य दीखता है वह पार्थक्य-कल्प-प्रभाव मात्र है। किसी कल्प के किसी कार्य के सहित अन्यकल्प के किसी भी कार्य का सामान्य वैलक्षण्य घटा है तो उस के वर्णन में शास्त्रादि में भी वैसा वैलक्षण्य है। जो पण्डित शास्त्र का अनुशासन मानते हैं, वे इसी प्रकार शास्त्र की सामञ्जस्य-रक्षा करते हैं। शास्त्रोक्त ऋतु-विवर्तन का दृष्टान्त ही मन में आता है।—

"यथर्तावृतुलिंगानि नानारूपाणि पर्यये,
दृश्यन्ते तानि तान्येव तथा भावा युगादिषु"॥

पर्याय-क्रम से ऋतु की पुनरावृत्ति होने पर जैसे पूर्ववत् ऋतु-चिन्ह देख पड़ते हैं, वैसे ही युगादि में भी पूर्व-भाव-परंपरा की उत्पत्ति ज्यों की त्यों हुआ करती है।

(श्री दुर्गादास लाहिड़ी-पृथिवीर इतिहास वंगला ग्रंथ)

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

खास 'ब्राह्मण सर्वस्व' के 'पुराणांक' के लिये

स्कन्दपुराण का पुरुषोत्तम क्षेत्र ।

[लेखक-श्री. कामताप्रसाद जी जैन ऐम० ए० एम० आर० ए० एस० सम्पादक "वीर" अलीगञ्ज (एटा)]

पुराण ग्रंथों में विविध क्षेत्रों का वर्णन भारत के प्राचीन भूगोल को स्पष्ट करने के लिये वड़े काम का है। शायद ही कोई पुराण मिले जिससे भौगोलिक ज्ञान की प्राप्ति न होती हो। किन्तु इन हिन्दू पुराणोंमें स्कन्दपुराण मुख्य है। आज इस पुराण में जिस स्थान को पुरुषोत्तम क्षेत्र कहा है, उसका सामान्य परिचय श्री शशि भूषण चटरजी के मतानुसार यहां उपस्थित किया जाता है।

स्कन्दपुराण के द्वितीय भाग का पूरा का पूरा द्वितीय अध्याय पुरुषोत्तमक्षेत्र के वर्णन से भरपूर है। वहां क्षेत्र की सीमाओं का वर्णन इन शब्दों में दिया हुआ है।

अहो तत् परमं क्षेत्रं विस्तृतं दशयोजनैः ।
तीर्थराजस्य सलिलाद् उत्थितं वालुकाचितम्॥१२॥
नीलाचलेन महता मध्यस्थेन विराजितम् ॥ १३ ॥
× × ×
सागरस्योत्तरेतीरे महानद्यास्तु दक्षिणे ।
स प्रदेशः पृथिव्यां हि सर्वतीर्थफलप्रदः ॥ २१ ॥

अतः कहना होगा कि पुरुषोत्तम क्षेत्र वह स्थान है जो समुद्र से निकला हुआ है। और जिसके दक्षिण में समुद्र ही एवं उत्तर में महानदी है। वह दश योजन बड़ा लम्बा चौड़ा है। अब सोचिये ज़रा कि भारत में यह कौनसा क्षेत्र है ? इसमें वर्णित 'महानदी' पर ज़रा ध्यान दीजिये। यह निस्सन्देह ओड़ीसा की महानदी है जो पुरी से उत्तर में है। यह भी ख्याल कीजिये जैसे कि चटरजी महोदय कहते हैं कि पुरी के निकट समुद्र दक्षिण-पश्चिमकी ओर झुक गयाहै। इस झुकाव के कारण बङ्गाल की खाड़ी का समुद्र पुरी के दक्षिण पार्श्व को आ घेरता है। इस दशा में पुरुषोत्तम क्षेत्र पुरी तक विस्तृत ठहरता है ! परन्तु उत्तर में उसकी सीमा को महानदी ही मान लेना ठीक नहीं है; क्योंकि इस पुराण में एकाम्रवन को इस क्षेत्र की उत्तरीय सीमा लिखा है। यह एकाम्रवन आजकल का भुवनेश्वर माना जाता है। अतएव कहना होगा कि उक्त पुराण का यह पावन क्षेत्र उस काल में वर्तमान के ओड़ीसा प्रान्तवर्ती दक्षिण कटक और पुरी ज़िलों इतना था !

उक्त श्लोकों में नीलाचल पर्वत को उक्त क्षेत्र के मध्य में विराजित लिखा है। कटक जिले में इस नाम की पर्वतमाला आज भी मिलती है, जो दक्षिण कटक में समुद्रतट तक फैली हुई है। पुराण में भी इस पर्वत को 'सिन्धु-तीरे' लिखा है (सिन्धुतीरे तु यो ब्रह्मन् राजते नील पर्वतः) और यह क्षेत्र उस समय उत्कल प्रान्त में गिना जाता था (सुपुण्येचोत्कले देशे दक्षिणार्णवतोरयो) उत्कल ओड़ीसा का ही प्राचीन नाम है।

स्कन्दपुराण के इस एक उल्लेख से ही पुराण ग्रन्थों के भौगोलिक वर्णन का महत्व स्पष्ट है। वह बिल्कुल ठीक मिलता है। क्या ही अच्छा हो कि हिन्दी के विद्वान् पुराणों को हलकी दृष्टि से न देखकर उनके भौगोलिक आदि महत्व को जन साधारण के समक्ष उपस्थित करें। तथास्तु—

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

(खास पुराणांक के लिये)

पुराणों की उपादेयता।

(लेखक-साहित्याचार्य पं० रघुवर मिट्ठूलाल शास्त्री श्रीवास्तव्य ठक्कुरः, काव्य वेदान्त तीर्थ एम० ए० एम० ओ० एल०, प्रयाग वि० वि० ॥)

इतिहास-पुराणाभ्यां वेदं समुपबृंहयेत्।
बिभेत्यल्पश्रुताद्वेदो मामयं प्रहरेदिति ॥

यह उपर्युक्त श्लोक महाभारत (१।१।२६०) वायु पु० (१।२००) पद्मपु० (५।२।५०) तथा शिवपु० (५।१ ३५) में आता है। तात्पर्य यह है कि वेद का विस्तार (व्याख्यान) इतिहास और पुराणों के द्वारा करना चाहिए। वेद उस पुरुष से जिसने अधिक श्रवण (अध्ययन) नहीं किया है डरता है कि यह मुझ पर प्रहार करेगा भावार्थ यह है कि इतिहास और पुराणों की सहायता के बिना वेदार्थ अधूरा रहता है और जो पुरुष ऐसा अधूरा वेदार्थ करता है वह वेदों पर प्रहार करने का अपराधी है।

तथापि नाना मतों और सम्प्रदायों के जन्म स्थान भारतवर्ष में कुछ दिनों से एक ऐसा जन समुदाय उत्पन्न होगया है जो जनता को यही पाठ पढ़ाता है कि "मत पढ़ो पुराण, झूठी गप्प भरी है" और "हम तो वेदों के डङ्के बजाए जाएंगे" का थोथा हुल्लड़ मचाता है। एक साधारण हिन्दी जानने वाला पुरुष केवल ३-४ महीने के परिश्रम से शब्द रूपावली धातुरूपावली, समास और सन्धि का सामान्य ज्ञान प्राप्त करके इतिहास-पुराण विषय के समस्त ग्रन्थों को समझ लेने की योग्यता प्राप्त कर सकता है परन्तु वेदों का डङ्का बजाने वालों में ५ प्रतिशत तो क्या ५ प्रतिसहस्र भी ऐसे नहीं निकलेंगे जो वैदिक भाषा का भी ज्ञान रखते हों। फिर वेदार्थ समझने के लिए समस्त वेदाङ्गों तथा अन्य शास्त्रों का पूर्ण ज्ञान अपेक्षित है जिसके लिए १०-२० वर्ष चाहिये। यद्यपि वेदाध्ययन ब्राह्मण का निष्कारण धर्म है तथापि उसके लिये इतनी बड़ी तत्परता के अभाव से वर्तमानकाल में सच्चे वेदज्ञ अधिक संख्या में नहीं उत्पन्न होसकते। फिर जिस इतिहास-पुराण का पूर्णज्ञान हुए बिना कोई पुरुष यथार्थ वेदज्ञ नहीं होसकता वह सर्व साधारण की सम्पत्ति है, उस पर एकाधिपत्य का स्वत्व केवल ब्राह्मण मात्र या द्विजाति मात्र का नहीं है। अतः भारतीय संस्कृति (हिन्दुत्व-परम्परा) के ज्ञान और लक्षण के लिए चार छः महीने संस्कृत भाषा का अभ्यास करके समस्त वेदार्थ को सरल भाषा में प्रकट करने वाले पुराणों का अध्ययन प्रत्येक हिन्दू को सुगम है।

श्रीयुत प्रथमनाथ बनर्जी एम० ए० डी० एस० सी० अपनी पुस्तक "Public Administration in Ancient India" के पृष्ठ ५ पर लिखते हैं—

The Puranas appear to be works which were originally composed for the purpose of giving instruction to the less advanced sections of the community in all matters concerning this world and the next. Their great value from the historical stand point lies in

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

the fact that they contain a considerable amount of genuine historical tradition and preserve more or less correct lists of the various dynasties of kings who ruled in India from the earliest times until towards the close of the Hindu period of Indian history. To the student of political science the Agni Purana, which treats of politics in considerable detail, is specially important.

अर्थात् पुराण ऐसे ग्रन्थ हैं जिनका प्रणयन प्रारम्भ में (हिन्दू) जाति के उन जन समुदायों को जो अधिक उन्नत नहीं इस लोक और परलोक से सम्बन्ध रखने वाले सभी विषयों की शिक्षा देने के लिए हुआ था। ऐतिहासिक दृष्टि से उनका सर्वाधिक मूल्य (महत्व) इसलिए है कि उनमें पुष्कल मात्रा यथार्थ ऐतिहासिक ज्ञान की परम्परा की विद्यमान है एवं भारतवर्ष में प्राचीनतम काल से लेकर भारतीय इतिहास के हिन्दूकाल के अन्त तक राज्य करने वाले राजाओं के विविध वंशों की न्यूनाधिक विशुद्ध (सत्य) सूचियां सुरक्षित हैं। राजनीति के विद्यार्थियों के लिये अग्निपुराण जिसमें राजधर्म का सुविस्तृत विवरण है विशेष महत्त्वपूर्ण है।

इस उद्धरण में सूत्ररूप से पुराणों की उपयोगिता का संकेत किया गया है। हम इसी को वर्तमान लेख द्वारा विस्पष्ट समझाने का प्रयत्न करते हैं।

उदाहरण के रूप में हम अग्निपुराण को ही लेते हैं। यह पुराण वास्तव में सभी प्रकार के ज्ञान का भण्डार है और विद्वानों ने जो "एन्सा-इक्लोपीडिया" (विश्व कोष) का नाम इसे दे रक्खा है वह इस के विषयों को देखते हुए अत्यन्त उपयुक्त जँचता है। पूना के छपे हुये अग्नि पुराण में सब मिलकर ३८३ अध्याय और ११४५७ श्लोक हैं। प्रथम १६ अध्यायों में दश अवतारों का वर्णन है जिन में सप्तम राम (दाशरथि) की कथा अष्टम (अ० ५-११) रामायण के प्रकार से सात काण्डों द्वारा वर्णन कर के अष्टम कृष्णावतार के सम्बन्ध में (अ० १२-१५) महाभारत का कथानक भी दे दिया गया है। आगे के चार अध्यायों (१७-२०) में सृष्टि की उत्पत्ति के सम्बन्ध में मनु (स्वायंभुव) और कश्यप के वंशों का वर्णन है। अध्याय २१ से १०६ तक देव पूजा, देव-मंदिर-निर्माण, देवता प्रतिष्ठा, जीर्णोद्धार विधि और वास्तु विद्या Architecture का विषय है। अ० १०७ में स्वायम्भुव की सृष्टि को दिखलाकर आगे (अ० १०८-१२०) १३ अध्यायों में पौराणिक भूगोल का विषय दिया है और इसी सम्बन्ध में कुछ (गया पर्यन्त) तीर्थों के माहात्म्य और श्राद्धका विषय भी आगया है। अ० १२१ से १४० तक ज्योतिष शास्त्र तथा कुछ अन्य विद्याओं का वर्णन है। अ० १४१ से १४६ तक मन्त्रोषधादि (और देवतासिद्धि) का विषय है। अ० १५० में मन्वन्तर तथा वेदविभाग एवं १५१ में विविध जातियों के धर्मका निर्देश करके अ० १५२ से २१७ पर्यन्त स्मृतियों के विषय (आश्रमादि धर्म, प्रायश्चित्त, व्रत, दान, सन्ध्या-गायत्री) का निरूपण किया

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

गया है। यहां तक तो सामान्य पौराणिक विषयों का विस्तार हुआ। परन्तु जिन विषयों में अग्नि पुराण की विशेषता है उन (विषयों का अत्यन्त विशद समावेश आगे के १६६ अध्यायों में बड़ी सुगमता से किया गया है।

अध्याय २१८ से २६६ पर्यन्त राजधर्म और उससे सम्बन्ध रखने वाले अनेक उपयोगी विषयों का तथा अ० २७१ से अन्त तक नाना शास्त्रोंका विशद वर्णन है। यथा (२१८-१६) अभिषेक (२२०-२१) सहाय और अनुजीवी, (२२२) दुर्ग, (२२३-२५) विविध राजधर्म, (२२६-२८) उपाय, (२२६) स्वप्नाध्याय, (२३०-३३) शकुनादि, (२३४-४०) छः गुण, (२३५) राजा की दिन-रात्रि-चर्या, (२३६-३७) रणदीक्षा और श्रीस्तोत्र, (२३८-२४२) राजनीति, (२४२ ४४) पुरुष स्त्री लक्षण, (२४५) चामर, चाप, खड्गादि, (२४६) रत्न-परीक्षा, (२४७-४८) देवतास्थापन, वृक्षविद्या, [Botany], (२४६-२५२) धनुर्वेद, (२५३-२५८) व्यवहार [मुक़द्दमों का फ़ैसला], (२५६-२७०) वैदिक विधान-शान्त्यादि, (२७१) वेदशाखादि, (२७२) पुराणदानादि, (२७३-२७८) विविध राजवंशों का वर्णन, (२७६-३०२) आयुर्वेद [जिसके अन्तर्गत वृक्षों, गजों, अश्वों, गौओं इत्यादि का आयुर्वेद और विष चिकित्सादि भी है] (३०३-३२७) विविध देव-पूजनादि, (३२८-३३५) छन्दःशास्त्र (३३६) शिक्षा (वेदाङ्ग), (३३७-३४७) साहित्य शास्त्र [काव्य-नाटक-रसाऽलङ्कार-गुण-दोषादि], (३४८) एकाक्षरार्थ [कोष], (३४६-३५६) व्याकरण शास्त्र, (३६०-३६७) नामलिङ्गानुशासन [कोष], (३६८-३७६) सांख्य-योगादि [तथा प्रलय] (३७७-३८०) ब्रह्मज्ञान [अद्वैत], (३८१) श्रीमद्भगवद्गीतासार, (३८२) यमगीता, (३८३) अग्निपुराणमाहात्म्य॥

इस सूची से पाठकों को विदित हो जावेगा कि एक अग्निपुराण मात्र के पढ़ लेने वा ठीक २ सुन लेनेपर न केवल साधारण पौराणिक विषयों का किन्तु प्रायः सभी शास्त्रों के सभी विषयों का कितना व्यापक ज्ञान होसकता है जिससे ऐहिक वा पारलौकिक अभ्युदय तथा मोक्ष दोनों ही का मार्ग स्पष्ट और सुगम होजाता है एवं भिन्न २ विद्याओं की परम्परागत रक्षा भी पौराणिकों द्वारा सहज सिद्ध हो सकती है (क्योंकि जो सब शास्त्रों का पण्डित नहीं है वह पुराण सुनाने का अधिकारी भी नहीं हो सकता है)। यदि ये सब विषय एकत्र (पुराण में) न समाविष्ट कर दिये गए होते तो सर्वसाधारण हिन्दुओंको इन शास्त्रों का कुछ भी ज्ञान होसकना दुर्लभ ही नहीं असम्भव होता और उन शास्त्रों के अधिकारी तो साधारण ज्ञान तक के लिये अनेक वर्षों तक गुरु शुश्रूषा करने पर भी इतनी सरलता से सब विषय न समझ सकते जैसे एक महीने भर में अग्नि पुराण की कथा के श्रोताओं को सुलभ है। वास्तव में आर्यधर्म के गूढ़तत्त्वों का जनता में प्रचार करने और आर्यसंगठन करने के लिये पुराणों की कथाओं का सर्वत्र प्रचार होना ही एक मात्र साधन है जो हिन्दू मात्र के लिये परम हितकर है हाँ, यह परम आवश्यक है कि पुराण सुनाने वाले विद्वान् सब शास्त्रों के पण्डित और जनता में जीवन संचार करने तथा मनुष्यमात्र के हितैषी और ब्रह्मज्ञानी ही नियत हुआ करें।

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

इस प्रकार से इस लोक और परलोक सम्बन्धी अनेक उपयोगी विषयोंका समावेश न केवल अग्निपुराण में किन्तु न्यूनाधिक रूप से सभी पुराणों में हुआ है। यहां भिन्न २ पुराणों में इस प्रकार विषय प्रदर्शन को लेकर लेख का विस्तार करना अभीष्ट न होने से कुछ उदाहरण देकर ही इस बात को यहीं समाप्त किया जाता है। यथा अग्निपुराण के अन्तिम १६ अध्यायों का विषय विष्णुपुराण के अन्तिम (षष्ठ) अंश तथा अन्य अनेक पुराणोंमें आया है। विष्णुपु० के चतुर्थांश के २० अध्यायों में विविध राजवंशों का वर्णन करके अ० २१ २४ में महाभारतके पश्चात् होनेवाले भविष्यद् राजाओं का वर्णन किया गया है। गरुड़पुराण के प्रथम (आचार) काण्ड के अ० ५४ से ८१ तक प्राचीन भूगोल, ज्योतिष (जिसमें सामुद्रिक भी अ०६३-६५ में आगया है) रत्नादि के लक्षण परीक्षादि और तीर्थों का विषय तथा अ० १०८-११५ में नीतिशास्त्र अ० १४२-१४५ में दशावतार राम और कृष्ण चरितों और भारतेतिहास वर्णन के पश्चात् अ० १४६-२०४ तक वैद्यकशास्त्र का अतिविस्तृत करके अ० २०५-६ में व्याकरण, अ० २०७-२१२ छन्दःशास्त्र और अ० २२६-२४० में अग्निपुराण के अन्तिम १६ अध्यायों का पारलौकिक और मोक्षसम्बन्धी विषय दिया गया है मत्स्यपुराण अ० २१५-२४० में अत्यन्त विस्तार के साथ राजधर्म के अन्तर्गत सभी विषयों का वर्णन, एवम् अ० २४१-२४३ में शकुनशास्त्र और स्वप्नाध्याय तथा अ० २७१-७३ में भविष्य राजाओं का वर्णन है। पद्मपुराण के पातालखण्ड और उत्तरखण्ड में राम और कृष्ण का चरित बहुत विस्तार से वर्णित हुआ है। इसी प्रकार अनेक पुराणों में अनेक प्रकारके अनेक उपयोगी विषयों को सुरक्षित करने का प्रयत्न किया गया है।

जिस प्रकार वेद प्रारम्भ में एक था और व्यास द्वारा वही चार रूपोंमें विभक्त हुआ वैसे ही पुराण भी आदि में एक ही था जिसके मुख्य विषयों को लेकर अनेक प्रकार के अन्य महत्व पूर्ण विषयों का समावेश दृष्टि में रखते हुये अनेक प्रकार के पुराणों और उपपुराणों की रचना हुई है। यह पुराण पांच लक्षणों वाला था अर्थात् उसके मुख्य विषय पांच थे। यथा—

सर्गश्च प्रतिसर्गश्च वंशो मन्वन्तराणि च।
वंशानुचरितं चैव पुराणं पञ्चलक्षणम्॥

(ब्रह्माण्ड १। १। ३७-३८) (वायु ४। १०-११) (मत्स्य ५३। ६५) (कूर्म १। १।१२) (शिव ५। १। ३७) (गरुड़ १। २१५। १४) (भविष्य १। २। ४-५) (वाराह २। ४) इत्यादि।

अर्थात् (१) सृष्टि की उत्पत्ति (२) प्रलय और पुनः सृष्टि (३) राजवंशों का विवरण (४) मन्वन्तरों का वर्णन और (५) विविध राजवंशों के अन्तर्गत मुख्य मुख्य व्यक्तियों का चरित [वृत्तान्त] ये पांच लक्षण जिस ग्रन्थ वा जिन ग्रन्थों में विद्यमान हों उस ग्रन्थ वा उन ग्रन्थ विशेषों को पुराण कहते हैं।

इन पाँच विषयों में से (३) वंश और (५) वंशानुचरित का सम्बन्ध भारतवर्ष व जगत् के प्राचीनकालिक इतिहास से है। हम ऊपर श्रीयुत डा० प्रमथनाथ बनर्जी के उद्धरण द्वारा यह दिखला चुके हैं कि पुराणों में विविध राजवंशों की सूचियां यथार्थ हैं और अतएव उनका ऐतिहासिक दृष्टि से बड़ा महत्व है। श्रीयुत एफ्०

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

ई० पार्गिटर साहब ने पुराणों के सम्बन्ध में सराहनीय गवेषणा करके दो अत्युत्तम पुस्तकें ऐतिहासिक संसार की भेंट की हैं (१) दी पुराण टेक्स्ट आफ् दी डाइनेस्टीज़ आफ् दी कलि-एज (२) ऐन्श्येण्ट इण्डियन् हिस्टोरिकल ट्रैडिशन्। इनमें आपने ऐतिहासिक सत्य की दृष्टि से पुराणों के यथार्थ महत्व को सफलतापूर्वक स्थापन किया है। यहां हम द्वितीय पुस्तक के पृ० १२० से ब्रा० स० के पाठकोंको पुराणों और वेदों के राजवंशों का मेल दिखाते हैं।

"मुद्गल (अनुक्रमणिका भार्म्यश्व) ऋ०१० । १०२ । ५, ६ में वर्णित है। इन्द्रसेन ऋ०१०। १०२ । २ (तथा महाभारत ३।११३।१००६३) में तथा वध्र्यश्व का नाम ऋ० १० । ६६ । १ और ६ । ६१ । १ में आया है और १० । १०२ । १२ में भी "वध्रिणा युजा" शब्दों में उसका सङ्केत होसकता है ऋ० ६ । ६१ । १ के अनुसार दिवोदास इसका पुत्र था। ऋ० ४ । १५ । ४ में सृञ्जय का नाम आया है। ऋ० १० । ६६ । ५-६ में सम्भवतः च्यवन से अभिप्राय है और इसमें संदेह नहीं कि च्यवन का द्वितीय नाम पञ्चजन केवल पिजवन का अपपाठ मात्र है। ऋ० ७ । १८ । २२-२३ में उसके पुत्र सुदास का नाम "सुदाः पैजवनः" के रूप में आया है और वहीं मन्त्र २५ में कहा है कि "सुदाः" दिवोदास का पुत्र (अर्थात् वंशज) था। ऐतरेय ब्राह्मण (७। ३५) में कहा है कि 'सहदेव' सृञ्जय का वंशज था और ऋ० ४ । १५ । ७-१० में सोमक उसका पुत्र कहा गया है। आगे ऋ० ३ । ५३ । ६,११ १२,२४ और ६ । १६ । १६ से विदित है कि दिवोदास और सुदास् 'भरत' के वंशज थे इन सब सूक्ष्मताओं में वैदिक सूक्त पौराणिक वंश वृत्तान्तसे मेल खाते हैं। और इस विषय में वैदिक मन्त्र इतने अधिक हैं और इतने घने रूप से परस्पर सम्बद्ध हैं कि इस विषय में कोई सन्देह हो ही नहीं सकता कि ये वैदिक राजा लोग उत्तर पाञ्चाल राजा थे।

पुनः ऋ० १० । ६६ । २, ४, ६-१० में "वध्र्यश्व की अग्नि" का वर्णन होने से यह स्पष्ट है कि और उसका वंशज सुमित्रा (जो इस सूक्त का प्रसिद्ध ऋषि है) दोनों पौरोहित्य के अधिकारी थे। ऋ० १ । १३० । ७, १० से प्रसिद्ध है कि दिवोदास क्षत्रिय के कुछ वंशज ऋषि और ब्राह्मण हुए थे और ऋ० १० । १३३ का तो ऋषि सुदास् ही है। इन वैदिक वाक्यों से पौराणिक वंश वृत्तान्त के इस कथन की पुष्टि होती है कि मुद्गल के वंशज क्षत्रियत्व से युक्त ब्राह्मण "क्षत्रोपेता द्विजातयः" (अर्थात् ब्रह्मक्षत्रिय वा क्षात्र ब्राह्मण) थे। इसका विवरण इस पुस्तक के अ० २३ में (पृ० २४३ २५२ में और विशेषतः पृ० २५१ पर) होगा। (जहाँ वायुपु० ६६ । १६८-२०१ तथा २०६-७ (मत्स्यपु० ५० । ५-७ तथा १३-१४) (हरिवंश ३२ । १७८-४, तथा १७८६-६०) (ब्रह्मपु० १३ । ६७) (ऋ० १० । ६६ । २, ४, ६, १० और ८ । १०३ । २) इत्यादि के प्रमाण दिये गए हैं।

पौराणिक वंश वृत्तान्तों की सत्यता (यथार्थ ऐतिहासिकता) पार्गिटर साहब ने इस पुस्तकमें आगे के कई पृष्ठों तक बड़ी उत्तमता से अनेक गम्भीर युक्तिप्रमाणों द्वारा सिद्ध की है।

फलतः-जनता की शिक्षा और ऐतिहासिक महत्व की दृष्टियों से पुराणों की उपादेयता में किसी बुद्धिमान् मनुष्य को सन्देह नहीं होसक-

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

ता यह बात यहां तक के लेखसे स्पष्ट हो चुकी है

एतद्तिरिक्त इनसे और भी अनेक लाभ हैं। पुरातत्वान्वेषण में तो पुराण-ग्रन्थ एक अमूल्य सम्पत्ति का काम देते हैं। किसी विषय का निर्णय अन्तिम वा पूर्णरूप से तब तक नहीं दिया जा सकता जब तक उसमें यह बात भी यथोचित स्थान पर समाविष्ट करके तदुचित निगमन न निकाल लिया जावे कि इतिहास के भिन्न २ कालों में प्राचीन भारतीयों का विवाद ग्रस्त विषय के सम्बन्ध में क्या विचार था। एतद्विषयक ज्ञान की रूढ़ियों वा परम्परा की रक्षा पुराणों में जैसी कुछ की गई है वैसी अन्यत्र नहीं है। प्राचीन भूगोल पर ढेरों लेख और एक बड़ी पुस्तक निकल चुके हैं। यदि आज पौराणिक ग्रन्थ सामग्री उपलब्ध न होती तो इस विषय का जो कुछ ज्ञान आज हमको होसका है उसका सारांश भी अन्यथा प्राप्त हो सकना कठिन था। प्राचीन संस्थाओं का ज्ञान केवल नियम बनानेवाले धर्मशास्त्रों से नहीं होसकता क्योंकि उनमें केवल आदर्श पर दृष्टि रक्खी जाती है। परन्तु मनुष्य और उनकी संस्थायें यथार्थ में क्या और कैसी थीं इसके ज्ञान के लिये इन विषयों के वैयक्तिक वृत्तान्तों की ही आवश्यकता होती है। चाहें ये वृत्तान्त काल्पनिक भी हों परन्तु उनमें जनता के यथार्थ जीवन की ही पूर्ण छाया रहती है न कि धर्मशास्त्रों के समान आदर्शों की। इस प्रकार के जीवन का सच्चा फोटो देखने के लिये पुराणों की रक्षा नितान्त आवश्यक होजाती है और इन के अभाव की पूर्ति अन्य प्रकार से नहीं होसकती। अनेक जातियों की उत्पत्तिका निर्णय करने में यह भी देख लेना आवश्यक होता है कि पुराणों का क्या मत है। हां, उस मत का ऐतिहासिक मूल्य अन्य सब प्रमाणों के साथ लगाना भी उचित रूप से शेष रह जाता है।

ऐसे उपयोगी पुराणों को पढ़ सुन कर लाभ उठाने से जनता को जो लोग रोकते हैं वे आर्य-सन्तानों को उभयतो भ्रष्ट करना चाहते हैं और स्वयं भी अभागे हैं क्योंकि जैसा ऊपर कहा जा चुका है कि बहुत थोड़े परिश्रम से जितना लाभ पुराणों से सब कोई उठा सकता है उसकी प्राप्ति नाम मात्र वेदों के डङ्के बजाने से सर्वसाधारण को कदापि नहीं हो सकती। इदानींकाल में वेदों की भाषा और वेदाङ्गों का अध्ययन अत्यन्त दुष्कर है। इससे वञ्चित रहने वाले जनसाधारण यदि पुराणों के द्वारा सब किसी को लुटाये गए ज्ञान-धन से भी वञ्चित रहना चाहें तो यह उन का दौर्भाग्य ही है।

पुराण रचना काल के सम्बन्ध में अत्यन्त समुचित ऐतिहासिक विचार पार्गिटर साहब ने अपनी पुस्तक के अध्याय ४ (पृ० ४६–५८) में किया है जिसमें उन्होंने सिद्ध करदिया है पुराण की वा पुराणों की रचना का प्रारम्भ प्राचीन ब्राह्मण ग्रन्थों के काल में अवश्य हो चुका था। अतएव अथर्ववेद (११ । ७ । २४) छान्दोग्योपनिषद् (३ । ४ । १) शतपथ ब्राह्मण (११ । ५ । ६ । ८ और १३ । ४ । ३ । १२–१३) शाङ्खायन श्रौत सूत्र (१६ । २) आश्वलायन सूत्र (१० । ७) कौटिल्य अर्थशास्त्र (१ । ३ तथा १ । ५ और ५ । ६ एवं ५ । ३ तथा १३ । १) इत्यादि में पुराण और पौराणिकों का वर्णन मिलता है। आपस्तम्बीय धर्म सूत्र (अ० ३) में "भविष्यत्पुराण" का उल्लेख होने तथा अन्य युक्तियों से

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

सिद्ध है कि महाभारत युद्ध तक का वृत्तान्त तो वास्तविक "पुराण" का विषय था और उसके कुछ पश्चात्काल से इधर का वृत्तान्त "भविष्य" की कोटिमें आता है। ऐसा भविष्यत्पुराण विक्रम वा ईसा से कई सौ वर्ष पूर्व ही प्रचलित था।

वर्तमान भविष्यपुराण (श्रीवेङ्कटेश्वर प्रेस वाला) भी यद्यपि श्रीकृष्ण के पुत्र साम्ब के आख्यान से प्रारम्भ होता है जो भारत युद्ध के पश्चात् का वही समय है जब से 'भविष्यत्पुराण' का प्रारम्भ होना चाहिए तथापि यह पुस्तक आनुपूर्वी रूप से उस प्राचीन भविष्यत्पुराण से अवश्य भिन्न है। इसमें तो अकबर अवरङ्गजीव कलिकाता नगरी, ब्रिटिशपार्लियामेण्ट, बाइबिल और आल्हखण्ड का विषय एवं अंग्रेजी भाषा के कई शब्द, इत्यादि अनेक आधुनिक बातें समाविष्ट होचुकी हैं। इसी प्रकार स्कन्दपुराण के सह्याद्रिखण्ड में कई प्रकार के दाक्षिणात्य ब्राह्मणों के परस्पर विद्वेष से उनकी निन्दित उत्पत्ति जुड़ी है।

इससे विदित है कि पुराणों में प्रक्षिप्तांश भी बहुत है आज सौभाग्य से भारत और इंगलैण्ड की प्राचीन पोथियों के अनेक पुस्तकालयों में सहस्रों प्रतियां पुराणों की भिन्न २ समयों की लिखी रक्खी हैं। उनसे पुराणों के शुद्ध संस्करण निकाले जा सकते हैं जिनमें अन्त में प्रक्षिप्तांश भी एकत्रित कर रखना आवश्यक है क्योंकि ऐसे अमूल्य संग्रहों का एक अक्षर भी नष्ट करने के योग्य नहीं है।

ॐ शान्तिः! ॐ शान्तिः!! ॐ शान्तिः!!!

खास 'ब्राह्मण सर्वस्व' के 'पुराणांक' के लिये

पुराण-महत्व विवेचन।

(लेखक-श्री पं० रामनिवास शर्मा, सम्पादक 'सौरभ' झालरापाटन)

योरुप में शेक्सपियर ने जन्म लिया। विद्वन्मण्डली उसके गुणोंपर मोहित होगई। उस की प्रत्येक बात अण्वीक्षण दृष्टि से देखी गई। मानव विज्ञान और विश्व-विज्ञान से उस का नाता जोड़ा गया। मनोविज्ञान और समाजशास्त्र के तथ्यों से उसका सम्बन्ध बताया गया, परिणाम यह हुआ कि इङ्गलेण्ड को एक अद्वितीय महा पुरुष मिल गया। उसकी साहित्य सम्पत्ति जगत् की साहित्य सम्पत्ति हो गई। भाग्य से हमें भी व्यास मिले। उन्होंने हमें पुराण-ग्रंथ(१) दिये या व्यास रूप में अनेक प्रातः स्मरणीय ऋषि मुनि मिले उन्हों ने हमें पुराण साहित्य प्रदान किया। परन्तु हमने उनके तिल बराबर 'दोष' और 'त्रुटियों' को ताड़ बनाने की कोशिश की। उनकी अनन्त भलाइयां और महत्त्वपूर्ण दुर्लभ तत्त्व हमारी समझमें ही नहीं आये। Dryden के-"Errors like straws upoun the surface flow, He who seeks for pearls must dive below." अर्थात दोष घास फूस की तरह धरातल पर सहज ही में मिल जाते हैं, परन्तु मोती तो समुद्र तल में गोता लगाने से ही प्राप्त हो सकते हैं। गुणान्वेषण की यही विधि

टिप्पणी-(१, वैदिक और संस्कृत साहित्य में पु-

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

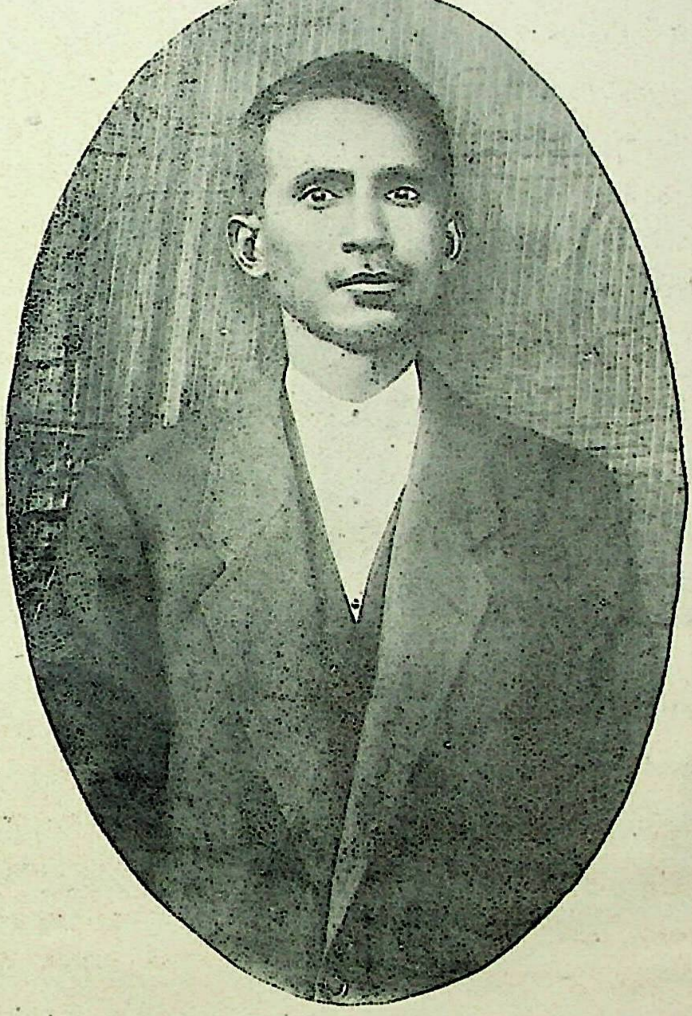

श्री पं० रामनिवास शर्मा सम्पादक 'सौरभ' झालरापाटन (राजपूताना)

ब्रह्मप्रेस इटावा।

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

है। परन्तु हमने इस पर ध्यान नहीं दिया। इस के साथ ही कुछ समय तक अनेक अनधिकारियों की कुप्रवृत्तियों का ज्वार भाटा भी आता रहा। उन्होंने वितण्डा और जल्प से काम लिया। वाद से वे सदैव दूर भागते रहे। उन्होंने नाम मात्र भी इस बात पर विचार नहीं किया कि वे "समालोचना के पूर्ण अधिकारी हैं या नहीं? वस्तु सर्व समालोच्य(२)है या रसिक(३)भावुकों के ही पान करने का पदार्थ है? पुराणों का भक्ति समुद्र जिसमें साकार निराकार के विवेचन द्वारा पृथ्वी और आकाश मिलाया गया है, सूक्ष्म की स्थूल के साथ अपूर्व एकता संघटित की गई है, खण्डन मण्डन का कहीं अवकाश नहीं, परन्तु आलोचना के घुनियों ने उसका खण्डन करने में काल्पनिक आधारों पर मूर्खता का नग्न नृत्य करने में ही आलोचना की चरितार्थता समझी। यही नहीं उन्होंने रुचि-वैचित्र्य, मानव-कल्पना और वर्णन-शैली के गूढ़ विज्ञान की ओर भी ध्यान नहीं दिया अर्थवाद (१) और परिसंख्या के तत्त्व को भी नहीं समझा। यहां तक कि स्वतः प्रमाणभूत वेदों के प्राकृतिक एवं सामाजिक शतशः कथा प्रसङ्गों के पल्लवित (२) और परिवर्तित अंशों तक को अन्यथासिद्ध प्रमाणित करने का उद्योग किया।

हम पुराणोंकी सदोषता, निर्दोषता का प्रश्न नहीं उठाना चाहते। हाँ इतना समझना और समझाना आवश्यक समझते हैं कि किसी वस्तु के समझने में वास्तविकता (Reality) आदर्श उपयोगिता, और इतिहासात्मक वर्णन परम्परा के मर्म को समझने के बाद ही किसी वस्तु के खण्डन मण्डन की ओर आकर्षित होना चाहिये इतने विचार के बाद एक तरह से उनके सदोष और निर्दोष होने का विवाद ही समाप्त हो जा-

---

राणों का नाम अनेक स्थानों पर आया है और अनेक व्यक्तियों ने इनके विषय में अनेक बातें लिखी हैं। उन में किसी के मतमें पुराण वेदोंसे पहले के हैं और किसी के मत में पीछे के। अथर्व संहिता, बृहदारण्यक और शतपथ ब्राह्मण के मतानुसार वेद और पुराण सब सामयिक हैं और ईश्वर के निःश्वास से एक ही साथ पैदा भी हुए हैं। छान्दोग्योपनिषद् के मत से इतिहास और पुराण पांचवां वेद है। किसी के मत में वेदों के पहले के पुराण और थे। मत्स्य पुराण के मत से सब से पहले केवल एक ही पुराण था। इसी एक से धीरे २ अठारह पुराण बन गये। "अष्टादशपुराणानां कर्ता सत्यवती सुतः"।इस मत से कृष्ण द्वैपायन ही पुराणों के कर्त्ता ठहरते हैं परन्तु ईश्वरचन्द्र विद्यासागर के मत में पुराण साहित्य के रचयिता अनेक व्यक्ति हैं।

(२) कवि सम्राट् ठा० रवीन्द्रनाथ के मत में "रामायणीय कथा" आरती करने योग्य है। इसी तरह उपलक्षण से पुराणोक्त चरित्र भी आरती के योग्य हैं।

(३) भागवतकार ने "पिबत भागवतं रसमालयं मुहुरहो रसिका भुवि भावुकाः।" इस पद्य खण्ड द्वारा भागवत रस पान करने के लिये रसिकों और भावुकों को ही आमन्त्रित किया है, परन्तु यहां इन लोगों ने "बिना बुलाये आये और बुरे गीत गाये" की कहावत चरितार्थ की। बलिहारी!

टिप्पणी १—इतिहासपुराणमपि व्याख्यातेनमार्गेण मन्त्रार्थवादमूलत्वात्प्रभवति देवताविग्रहादि प्रपञ्चयितुम्। शारीरिक भाष्य १, ३, ३२

२—वैदिक ग्रंथोंमें जिसकी सूचना है पुराणों में उसकी विस्तृति और परिणति देखी जाती है। हि० वि० को०

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

पता और समझ में आ जायगा कि अनेक विघ्न बाधाओं के बाद थोड़े से बचे बचाये संस्कृत साहित्य में पुराण (१) हमारी कैसी विलक्षण और दुर्लभ सम्पत्ति है ! क्या ये उपेक्षा की दृष्टि से देखे जाने योग्य हैं ! क्या इनका हमारे लिये कुछ भी उपयोग नहीं है ? फिर इनको छोड़कर हम रह क्या जाते हैं! हमारा तो यह ख्याल है कि यदि हम इनकी अन्वेषण(२) सम्बन्धी उपयोगिता पर ही ध्यान दें तो वह भी कम नहीं है। फिर आज कल तो वह समय है कि जिसमें पत्थर पढ़े जाते हैं। आकाश तत्व में विलीन तथ्यों के निकालने का स्वप्न देखा जाता है। इनसे चित्र और चरित्र लिखे जाते हैं। ऐसी दशा में साहित्यकी विशाल काय इस सम्पत्ति को हम कैसे भुला सकते हैं जिसमें कि हमारा भूत निहित है वर्तमान गुथा हुआ है और भविष्य के निर्माण की कुंजी सुरक्षित है इसके सिवाय पुराण प्राचीनता और अर्वाचीनता को मिलाने वाली एक मध्य-रेखा (३) है जो कि कई दृष्टियों से भारतीय इतिहास की आधार शिला होने का गौरव रखती है। इतना ही नहीं उन्होंने ही सर्व प्रथम जगत् के सम्मुख सुचारु और वास्तविक रूप में इतिहास शब्द की परिभाषा (४) भी रक्खी है। फिर हमारा और पुराणों का तादात्म्य सम्बन्ध है क्योंकि पुराणों के अधिकांश धार्मिक तत्त्व हमारे जीवन में ओत प्रोत (१) हैं। या यों कहें कि हमारे जीवन की दैनिक बातें पुराणोंमें गाई गई हैं। हमारे धार्मिक सामाजिक, और नैतिक व्रतोत्सवों पर ही विचार कीजिये, उनसे भी यह बात स्पष्ट होजायगी भला फिर इनसे बढ़कर हमारा और हमारे साथ सम्बन्ध रखने वाले जगत् का इतिहास क्या हो सकता है? या कमसे कम हमें इतिहास (२) निर्माण में इनसे अतिरिक्त कहां से इतनी सहायता मिल सकती है ?

उपयोगिता की बात को छोड़कर यदि मनोरञ्जन की दृष्टि से विचार करें तो पुराण वाग्देवी का क्रीड़ा-क्षेत्र है। आदर्श जीवन-चरित्रों की खान है। कल्पनाओं का सदा बहने वाला अद्भुत स्रोत है। भूगोल, खगोल, ज्ञान, विज्ञान, कला, साहित्य और दर्शन शास्त्र के तत्त्वों का भरापूरा समुद्र है। भाषा भावना और घटनाओं की त्रिवेणी है। अबभी हम इसमें स्नान कर स्नात-

१-जगत् की प्रथमावस्था का आरम्भिक वर्णन और सृष्टिक्रिया विवरण का नाम पुराण है।
ऐ० मा०

२-इदंवंशमहंपूर्वं भार्गवं ते महामुने।
निगदामि यथा युक्तं पुराणाश्रयसंयुतम् ॥
म० भा० १, ५, ६, ७

३-संस्कृत विंद् मुद्दर साहब।

(४)विख्यात ऐतिहासिक श्रीविनयकुमार सरकार।

(१)म०म० पं० श्रवणलालकृत 'व्रतोत्सव चन्द्रिका'।

(२) पुराण का अर्थ पुरातन है, पुराण कहनेसे आख्यायिका संवलित ग्रंथ विशेष समझे जाते हैं, पुराणों में इतिहास की परिभाषा में पांच बातें कही गई हैं। आधुनिक विद्वानों द्वारा किये गये ऐतिहासिक सब लक्षणों का समावेश होजाता है। महाभारत के मतानुसार इतिहास मोहान्धकार को दूर करने वाला और चक्षुओं को खोलने वाला है। इससे बढ़कर इतिहास का तत्त्व और क्या होसकता है। महाभारत में यह भी लिखा है कि पुराणों के द्वारा हमें प्राचीन विशेष व्यक्तियों और राजाओं के कर्म विक्रम, दान, माहात्म्य, आस्तिक्य, सत्य, शौर्य्य, दया और आर्जवादि का पता लगता है।

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

कोचित मनोरञ्जनसे अपने हृदय को प्रसन्न एवं मन को पवित्र कर सकते हैं और इसके साथ ही इस विस्तृत साहित्य के भाव-सहयोग से अपने आप को विकासोन्मुख रख सकते हैं, अपने मस्तिष्क को सु-संस्कृत बना सकते हैं।

यदि जीवन-सत्ता की दृष्टि को सामने रखें तो मालूम होगा कि हमारा जो कुछ अस्त व्यस्त या समुन्नत जीवन है उसकी आधार भूत शिला हमारे ये पुराण ही हैं। इनके ही कथा-पाठ से यह हिन्दू जाति अब तक जीवित है। इन्हीं से उसने कर्म्म, पुनर्जन्म और मुक्ति की बातें सीखी हैं। इन्हीं से उसने धर्म्म, अर्थ, और काम के पाठ पढ़े हैं। हिन्दू जाति का सादा जीवन और उसके उच्च दार्शनिक विचार इन्हीं के सदुपदेश का फल है। अन्तर्जातीय दृष्टि से अब भी पुराण अन्ताराष्ट्रीय साहित्य है। विश्व साहित्य के तत्वों से भी यह खाली नहीं है। इनके अनेक अंश किसी भी विश्व-विद्यालय के पाठ्य-क्रम में रखे जा सकते हैं और किसी २ रूप में रखे हुए भी हैं। यदि तुलनात्मक दृष्टि से विचार करें तो भी विस्तार में पुराण सर्वाधिक सम्मान में वेद सम्मित, अद्भुत कल्पना में सर्वोपरि और हमारे धार्मिक कृत्यों की दृष्टि से तो अपूर्व ही हैं। पाश्चात्य-साहित्य की तुलना में भी पुराण अपना खास स्थान रखते हैं। उदाहरणार्थ होमर (१) के काव्यों को ही लीजिये उनकी भाषा पुराणों की सी सुसंस्कृत न मिलेगी। इसी तरह मिल्टन के पात्र पुराणों के अनेक पात्रों से पात्र-निर्माणोचित श्रेष्ठता में गिर जाते हैं। इसके सिवाय भक्ति ज्ञान और वैराग्यकी धारा अविच्छिन्न रूप में कदाचित् ही कहीं इतने मौलिक रूप में मिलेगी। आदर्श अद्भुत और मनुष्योचित चरित्र के तो ये अनुपम कोष हैं। सर्ग (१) विसर्गादि वर्णन परम्परा तो इनके ही घर की बात है। ऐसी दशा में पुराण मौलिकता, भाषा कल्पना और धर्मकी दृष्टि से हमारे दैनिक स्वाध्याय (२) का विषय हो सकते हैं और होने चाहिये। उनका सहज ही में विधवा पुत्र की तरह अनादर करना एक महान् लाभ से अपने आप को वञ्चित रखना है। और उनके वेदमय ३) होने से वेदों तक का अनादर करना है। इस अनादर के कलङ्क से बचने का यही उपाय है कि हम पुराणोंके अध्ययन अध्यापन की शास्त्रीय-विधि की ओर ध्यान दें। अन्यथा परिणाम उलटा ही सिद्ध होगा।

इस लेख को समाप्त करते हुए अंत में हम दिग्दर्शन स्वरूप पुराणों की एक बात पाठकों के सामने रखना चाहते हैं। आशा है कि विज्ञ पाठकों के लिये रुचिकर होगी।

पुराणों के प्रधान वर्णनों में त्रिदेव-वर्णन भी एक प्रधान वर्णन है। उसमें विष्णु की प्रधानता है। इस विषय में व्यास की कल्पना पढ़िये। उनके चरित्र-निर्माण-कौशल पर ध्यान दीजिये।

टिप्पणी-१ म० मा० मी०, चि० वि० वैद्य

(१) सर्गश्च प्रतिसर्गश्च वंशो मन्वन्तराणिच।
वंशानुचरितञ्चैव पुराणं पंचलक्षणम्॥ वि० पु०
पृथ्वी विभाग, शातुक्रम, देशकाल परिणाम, भावीकथन इत्यादि पुराणों के विषय हैं।

(२) स्वाध्यायं श्रावयेत् पुराणान्यखिलानिच।
कु० भ० कृत तंत्रवार्तिक। मनु ३, २, ३२,।

(३) पुराणं वेदः सोयमिति। शतपथ।

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

चरित्र विषयक इतनी ऊंची कल्पना शायद ही कहीं जगत् में मिले। बात समुद्र मन्थन के समय की है। समुद्र के किनारे लक्ष्मीको पाने की इच्छा से विविध जातियों के प्रधान व्यक्ति बैठे हुए हैं उनमें से लक्ष्मी किसी को भी वरण करने योग्य नहीं समझती। वह किसी में कुछ और किसी में कुछ दोष पाती है। उसे वरण करने योग्य एक मात्र भगवान् विष्णु ही दिखाई पड़ते हैं। लक्ष्मी उन्हीं के गलेमें विजय-माला डालती हैं। लक्ष्मी विष्णु को क्यों चुनती है इसका रहस्य उसी के मुख से सुनिये। वह कहती है:—

"हरि नित्य सत्वगुणशाली हैं, वह दूसरे की अपेक्षा नहीं करते, प्राकृतिक गुण उनके पास आने का साहस नहीं कर सकते इनके निरपेक्ष होने पर भी अणिमादि गुण-समूह इनके आश्रित हैं; अतएव यही पुरुषोत्तम हैं—सर्वोत्तम हैं"।

यह है पुराणों के आदर्श देव, यह है उनका चरित्र वैभव और उदात्त व्यक्तित्व !!!

खास 'ब्रा॰ स॰' के "पुराणाङ्क" के लिये

पुराणों की भविष्योक्तियां।

[लेखक-श्री पं॰ नरदेव शास्त्री वेदतीर्थ (देहरादून, जेल में)]

(१)

पुराण के रचयिता चाहे व्यास हों चाहे अन्य कोई, पर पुराणों में हैं बहुत तत्त्व की बातें। पहले-पहले मैं भी ऐसा ही समझता था, कि 'पुराण-रचना व्यर्थ है' किन्तु अब हमारा मत है कि वे लुप्त होजायँ तो धर्मप्राण हिन्दुओं का एक बड़ा खजाना लुट जाय। ऐतिहासिक रीति से बोधप्रद, धार्मिक रीतिसे विवेचनात्मक दृष्टान्तोंको दृष्टिसे मनोरञ्जक वेदान्त की दृष्टिसे 'सा काष्ठा सा परागतिः' इस कोटिके पुराण हैं। समष्टिरूप से समस्त पुराणों पर विचार किया जाय तो परस्पर विरोध भी नहीं रहता, व्यष्टि दृष्टि से विचार करने वालों की विपरीत भावना हो सकती है; व्यष्टि दृष्टि विवेकी पुरुष की दृष्टि नहीं कहलाई जा सकती। ऐतिहासिक दृष्टि से कतिपय भ्रम उत्पन्न हो सकते हैं पाश्चात्य विवेचना की दृष्टि से परस्पर विरुद्ध घटना भी दिखाई जा सकती हैं, पर इस से पुराणों का महत्त्व कम नहीं हो सकता।

(२)

पञ्चतन्त्र में मूसा, कौआ, कछुआ, बिल्ली, हरिण, सियार, सर्प, मण्डूक, मगर, मच्छ, वानर आदि के मुखमें नीति-तत्त्व भरकर विष्णु शर्माने जो कार्यभाग साधा है उसको केवल इसीलिये व्यर्थ नहीं कह सकते कि मूसा, कौआ, कछुआ, आदि बोलना नहीं जानते थे इत्यादि पुराणों में ऐतिहासिक पद्धति से दृष्टान्त-सागर द्वारा गहन धर्म तत्वों को, वेद शास्त्रों के मर्मों को जिस सुलभता से साधारण से साधारण व्यक्ति को समझाने का प्रयत्न किया गया है, वह एक अपूर्व पद्धति है। इसलिये मैं प्रत्येक विद्वान् से प्रार्थना करूंगा कि चाहे वह श्रद्धा रक्खे या न रक्खे पुराणों को अवश्य पढ़े।

सुवर्ण के कणों को कोई इसलिये नहीं छोड़ देता कि उनमें मृत्तिका के कण भी हैं।

(३)

मैंने जब पुराण पढ़े सब तो नहीं, अधिक

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

संख्या में, मैं तो दंग रह गया। मुझे यह ख्याल आया कि स्वामी दयानन्द ने इनको "विषसंपृक्तान्नवत् त्याज्य" क्यों लिखा। मैंने सोचा कि उनका अभिप्राय यह है कि वेद शास्त्रों पर अधिक बल दिया जाय पुराणों के सर्वथा अग्राह्य अथवा सर्वथा निषेधमें तात्पर्य नहीं है निरुक्तने—

स्थाणुरयं भारहारः किलाभूत्।
अधीत्य वेदं न विजानाति योर्थम्॥

केवल वेदों को कण्ठस्थ रखने वाले, अर्थ न जानने वाले को "भारहार स्थाणु" लिखा है। कोई इससे यह अभिप्राय निकालते हैं कि वेदों का कण्ठस्थ करना ही व्यर्थ है। किन्तु निरुक्तका अभिप्राय यह है कि "अर्थ पूर्वक वेदाध्ययन में अधिक श्रेय है" इसी प्रकार स्वामी दयानन्द का अभिप्राय हमारी सम्मति से यही है कि केवल पुराणों में लिप्त रहकर वेदों की अनास्था में लगे रहने की अपेक्षा, पुराणज्ञानपूर्वक वेदाध्ययन करने में अधिक लाभ है। पुराणों में कहीं २ परस्पर विरोध भले ही दृष्टिगत हो कुछ लोग भले ही कतिपय अंशों को त्याज्य मानें किन्तु पुराणों का मुख्य भाग त्याज्य नहीं हो सकता मैं पूछता हूँ कि कौनसा विषय है जो पुराणोंमें नहीं आया महाभारत के कतिपय गूढ़ अंशों के कारण—

"यदिहास्ति तदन्यत्र यन्नेहास्ति न तत्क्वचित्।

इस कोटि के ग्रंथ को कौन मूर्ख त्याज्य समझेगा?

(४)

पुराण की भविष्योक्तियां एक-एक कर के हमारे सामने आ रही हैं इम उनके सत्यांश को अनुभव कर रहे हैं उनके कर्ताओं की स्थितप्रज्ञता, दूरदर्शिता पदे-पदे देखने को मिल रही है मुझसे कोई पूछे पुराणों में कितना त्याज्यांश है और कितना ग्राह्यांश? तो मैं यही कहूँगा कि लिखने वाले लिख गये तुम कौन हो यह प्रश्न करने वाले मेरे या किसीके ग्राह्य,अग्राह्य" कहनेसे होता ही क्या है? फिर यही कह सकता हूँ कि तीन चतुर्थांश तो अवश्य ग्राह्य है पर एक चतुर्थांशको 'अग्राह्य कहकर पुराणोंसे अलगकर डालने का मेरा अधिकार नहीं, किसी का भी अधिकार नहीं, अधिकार होने पर भी मैं इसे असंगत एवं अनर्थकारी समझता हूँ। धर्मतत्वों को सुन्दर दृष्टान्तों द्वारा समझाने की पद्धति, मनोरञ्जक भाषा, ऐतिहासिक संग्रह आदि के कारण मैं पुराणों को एक संग्रहणीय ग्रन्थमाला समझता हूँ। किन्तु किसी को भी केवल पुराणों में फंसे रहने की आवश्यकता नहीं है अर्थात् पुराणों के पूर्ण स्वाध्याय के बाद वेदशास्त्रों का अध्ययन भी आवश्यक है पुराण पूर्वक वेदाध्ययन का एक महान् लाभ यह है कि पुराणों की वेदानुकूलता प्रतिकूलता का विवादास्पद प्रश्न स्वयं हल हो जाता है। सारांश यह है कि—

वेदों के अध्ययन के बिना केवल पुराणों में पड़े रहना ऐसा ही है जैसे बीज की उपेक्षा करके बीज विस्तार रूप अन्न की आराधना करना।

वेद बीज है और पुराण उसका विस्तार। ऐसी दशा में बीज नाश होने पर उज्ज्वल भविष्य की आशा कैसे की जा सकती है?

(५)

भविष्योक्तियों के विषय में तो मैं यही कहूँगा कि न जाने ये भविष्य किस दिव्य दृष्टि से लिखे गये हैं। महाभारत में कलियुग के विषय में जो

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

जो लिखा है वह सब सामने आरहा है—पुराण और महाभारत खोल खोल कर देखिये लिखनेसे एक नया पुराण बन सकता है यहां तो संक्षेप में इतना कहा जा सकता है कि "पुराणोंमें इतना मसाला भरा हुआ है कि अज्ञ से अज्ञ पुरुष भी उनमें वर्णित कथा कहानियों द्वारा धर्म के उच्च से उच्च तत्व को वेद शास्त्रों के अध्ययन के बिना ही समझ सकते हैं"।

एक महत्व पूर्ण विचारणीय विषय यह है कि सब पुरुषों का वेदों एवं शास्त्रों का समझना कठिन ही नहीं असम्भव है, इसलिये कथा कहानियों के रूप में महापुरुषों की वंशावली के रूप में पुराणों में मनोरञ्जकता भर दी गयी है जिस से साधारण से साधारण व्यक्ति-नर नारी लाभ उठ सकते हैं।

ऐसी दशा में पुराणों की उपेक्षा करना उन को त्याज्य कहना अपनी मूर्खता का प्रमाणपत्र पेश करना है, पर साथ ही केवल पुराणों पर जोर देना उनकी आड़ में वेदों को छोड़ना, उन की उपेक्षा करना हिन्दु जाति के सर्वनाश का प्रयत्न करना है!

सारांश यह कि हिन्दुत्व का हित वेदों और पुराणों के एकत्रीकरण में है,द्विधाकरण में नहीं!

खास ब्रा० स० के 'पुराणांक के लिये।

क्या पुराण वेद मूलक नहीं हैं!

(ले० श्री पं० रामदत्त जी ज्योतिर्विद्, (भीमताल, नैनीताल)

"पुराण वेद मूलक नहीं हैं। और महर्षि वेदव्यास ने नहीं रचे, परस्पर विरुद्ध पौराणिक गाथाओं का वेदों में वर्णन नहीं है। अश्लीलता सृष्टि क्रम के विरुद्ध पौराणिक कथाओं पर विश्वास करना बुद्धिमानी नहीं है" इस प्रकार के आक्षेप इस समय चारों ओर से पुराणों पर किये जाते हैं। जनसाधारण की श्रद्धा पुराणोंसे हटाकर उनको नास्तिक बनाया जारहा है। गंभीर विचार से पता लगता है कि पुराणों की समस्त कथायें वेदमूलक हैं। और उनके प्रवक्ता भी महर्षि व्यास हैं अन्य कोई नहीं।

अष्टादशपुराणानां, कर्त्ता सत्यवतीसुतः।

महाभारतोक्त यह जनश्रुति लोक में प्रसिद्ध है। वेद के कई मंत्रों में पुराण शब्द विद्यमान है [पुराणं यजुषासह] ऐसी दशा में पुराण अवैदिक कैसे माने जासकते हैं! वैदिक गाथाओंका ही विस्तृत रूप से पुराणों में वर्णन है। इस कारण पुराणों की वेदमूलकता नहीं हट सकती। श्रीमद्भागवत के तृतीय स्कन्ध अ० १२। २७ में

'वाचं दुहितरं तन्वीं स्वयंभूर्हरतीं मनः'।

जिस प्रकार ब्रह्मा की पुत्री की कथा है उसी प्रकार ऋग्वेद में भी है। शतपथ ब्राह्मणों के प्रथम काण्ड तथा ऐतरेय ब्राह्मण पञ्चिका ३ कण्डिका ३३ में " प्रजापतिर्वैस्वां दुहितरमभ्यधावद्दिवमित्यत्र आहुः" प्रजापति ब्रह्मा ने अपनी दुहिता को स्वीकार करने की इच्छा की, इसी विषय को बृहदारण्यक उपनिषद् में भी कहा है। ऐसी दशा में या तो भागवत की कथा सत्य माननी पड़ेगी, अथवा ऋग्वेद शतपथ बृहदारण्यादि वैदिक ग्रन्थ भी वोपदेव रचित कपोल

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

कल्पित मिथ्या मानने होंगे। शतपथ के द्वितीय काण्ड में जिस प्रकार दक्ष प्रजापति और दिति के पुत्रों की कथा विद्यमान है उसी प्रकार भागवत तथा अन्य पुराणों में भी वर्णन की गई है। देवीभागवत में जिस प्रकार अहल्या-गौतम की तथा सुपर्ण की कथा मिलती है, ठीक उसी प्रकार शतपथ के तृतीय काण्ड में भी पाई जाती है च्यवन ऋषि और सुकन्या का चरित्र जैसा महाभारत में है तद्वत् ही शतपथ के चतुर्थ काण्ड में भी विद्यमान है शतपथ के त्रयोदश काण्ड में जिस प्रकार जनमेजय, परीक्षित, दुष्यन्त, शतानीक आदि की कथा वर्णित है उसी प्रकार इतिहास पुराणों में सर्वत्र उनका वर्णन मिलता है इसी प्रकार अन्वेषण करने पर और भी कथायें वेदों में मिलती हैं लेखवृद्धि के भय से अधिक नहीं लिखा, पुराणों का जितना अंश आजकल वेदों में नहीं मिलता है उतनी वेदों की शाखा इस समय लुप्त हैं। पुराणों में एक भी ऐसी कथा नहीं है जिसका मूलबीज,मंत्र ब्राह्मण रूप वेद में न हो। रहा अश्लीलता का दोष जो पुराणों में लगाया जाता है, वह वेदके भी अनेक मंत्रों में मिलता है, यथाः—

यस्यामुशन्तः प्रहराम शेपम्।

इस प्रकार अनेक वेद मंत्रों में भी अश्लीलता मिलती है। ब्राह्मणभाग को वेद न मान कर पुराण मानने में कोई प्रमाण नहीं, ऐतरेय, शतपथ, गोपथ आदि ब्राह्मणों को संसार में आज तक किसी भी ऋषि, मुनि आचार्य ने पुराण इतिहास नहीं माना। ईश्वर के निःश्वास से जिस प्रकार मंत्रभाग निकला उसी प्रकार ब्राह्मण भाग भी। महाभाष्य में पतंजलि ने ब्राह्मणों को वेद मानकर ही [पयोव्रतो ब्राह्मणः] इत्यादि उदाहरण दिये हैं। चरणव्यूह नामक ग्रन्थ में शौनक ऋषि ने भी ब्राह्मण ग्रन्थों को वेद मान कर ही उनका प्रतिपादन किया है ब्राह्मण पुराण नहीं माने, 'मंत्र ब्राह्मणयोर्वेदनामधेयम्'। सभी आचार्यों ने मंत्र ब्राह्मण दोनों ही को वेद माना है।

पुराण वेदमूलक हैं जिस प्रकार आम के बीज अथवा गुठली में पूरा आम्र वृक्ष गुप्त रूप से विद्यमान रहता है। वीर्य में जीव और बीज में वृक्ष के तुल्य ही पुराणों की कथा बीजरूप से वेद में मिलती है जो विषय मूल वेद में बीज रूप से विद्यमान थे उनका विस्तार बढ़ा कर महर्षि वेदव्यास ने व्याख्यान रूप से पुराण रचे वह पुराण तीन भाषाओं में विभक्त हैं। यथा लौकिक भाषा, अध्यात्म भाषा और विचित्र भाषा. इस रहस्य को न जाननेसे लोक व्यर्थ ही कुतर्क करते हैं। वेद स्मृति पुराणों में सभी विषय आध्यात्मिक, आधिदैविक, और आधिभौतिक तीन प्रकार से वर्णित हैं, यथा अध्यात्म में सप्त ऋषि शरीर के साथ सात इन्द्रिय माने जाते हैं, जैसे—

सप्त ऋषयः प्रतिहिताः शरीरे सप्त रक्षन्ति सदमप्रमादम्।

अर्थात् त्वचा, चक्षु, श्रोत्र, रसना, घ्राण, मन, बुद्धि ये सात ऋषि शरीर के साथ लगे हुये नित्य नित्य रक्षा करते हैं। आधिदैविक सप्त ऋषि अन्तरिक्ष में सात तारे ध्रुव की परिक्रमा करते हैं, आधिभौतिक सप्त ऋषि, इतिहास पुराणोक्त सात ऋषि हैं।

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

"कश्यपोऽत्रिर्भरद्वाजो, विश्वामित्रोथगौतमः।
यमदग्निर्वशिष्ठश्च अरुन्धत्या सहाष्टकाः॥"

इसी प्रकार अध्यात्म में जाठराग्नि की अगस्त्य संज्ञा है। "अगस्ति कुम्भकर्णं च" इस मन्त्र से आहार परिपाकार्थ प्रार्थना करने की लोक में प्रथा है। आधिदैविक अगस्ति मुनि दक्षिण भाग की ओर आकाश में एक नक्षत्र विशेष है। इसमें जल शोषण की सर्वोपरि शक्ति है। इसके उदय होते ही वर्षाकाल का अन्त और अस्त होने के अनन्तर मेघों का प्रादुर्भाव होता है। पाश्चात्य ज्योतिर्विद्याविशारदों ने सिद्ध किया है कि तीन सौ वर्ष में इस पृथ्वी पर अगस्त्य ऋषि का प्रकाश पहुँचता है। हमारे सौर जगत् के आदित्य से अधिक प्रकाशमान आग्नेय पिण्ड अगस्त्य नक्षत्र है। किसी सौर जगत् का वह सूर्य है। मेघों को और समुद्रादि के जल को शोषने की अगस्त्य नक्षत्र में अद्भुत शक्ति है। इसी हेतु पुराणों में अगस्ति मुनि के समुद्र शोषण की गाथा प्रसिद्ध है।

"कंह कुम्भज कंह सिन्धु अपारा,
सोखेउ सुयश सकल संसारा"।

यह तो पुराणों की अध्यात्म भाषा और विचित्र भाषा के उपाख्यान हैं। लौकिक भाषा में भारतीय सभ्यता का इतिहास पुराणों में भरा पड़ा है। सीता सावित्री अनुसूया आदि के पातिव्रत का आदर्श पुराणों ने ही संसार के सामने रक्खा। पृथु, हरिश्चन्द्र, रघु, दशरथ, जनक, युधिष्ठिरादि आदर्श राजर्षि वशिष्ठ, विश्वामित्र, गौतम, कपिल, भारद्वाज, गर्गादि ब्रह्मर्षियों का चरित्र पुराणों से ही ज्ञात हुआ। पुराणों पर कुठाराघात करने वाले सम्प्रदाय भी सभाओं में व्याख्यान देते हुए गला फाड़ फाड़ कर तुम अत्रि की सन्तान हो वसिष्ठ की सन्तान हो अर्जुन की सन्तान हो राम की सन्तान हो, भीष्म बनो भीम बनो प्रह्लाद और ध्रुव बनो इत्यादि कहा करते हैं,।

इन पुराण विरोधियों से कोई कहे कि अगर पुराण गपोड़े हैं तो ध्रुव प्रह्लाद रामकृष्ण भीष्म अर्जुन सभी कल्पित या असिद्ध होंगे इनके दृष्टान्त देकर क्यों धोखा देते हो। वेद ही से सीता सावित्री दमयन्ती की कथा सुनाओ जब हम बाइबिल को मानते ही नहीं तो आदम हव्वा, शैतान और फरिश्तों की कथा सुना कर संसार को धोखा देने का हमको क्या अधिकार है? इस प्रकार यह सिद्ध है कि पुराण गप्प नहीं, वेद मूलक हैं—पुराणों को हेय कहना वेदों की जड़ पर कुठाराघात करना है।

खास 'ब्रा० स०' के 'पुराणांक' के लिये।

पुराणों की पूर्णता।

(लेखक-श्री पं० प्रभुदत्त जी ब्रह्मचारी भूतपूर्व सम्पादक 'निगमागम चन्द्रिका' झूंसी 'प्रयाग)

मनुष्य आधिभौतिक पदार्थों की ओर जितना ही अधिक बढ़ता जाता है उसकी बुद्धि की सीमा भी उतनी ही अधिक संकुचित होती जाती है। ईश्वरीय नियमों के प्रति संदेह या अ-

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

विश्वास ही हमें भौतिकता की ओर ले जाता है। पुराणों में इस बात का उल्लेख है कि पहिले सतयुग में मनुष्यों की जीविका निर्धारित नहीं थी। वे अपने संकल्प से ही सभी वस्तुओं को पा लेते थे। जब समय के चक्र से लोगों की संकल्प शक्ति कुछ कम हुई तो वे वृक्षों से अपनी आवश्यकतायें पूर्ण करने लगे। वृक्ष ही उनके सम्पूर्ण मनोरथोंको पूर्ण कर देते थे। नानाभांति के फल मधु मेवा और भांति भांतिके खाद्य पदार्थ तथा पहिनने के वल्कल उन्हें वृक्षों से ही मिल जाते थे। लोगों के असन्तोष और अविश्वास के कारण वृक्षों की यह शक्ति कम होती गई और लोग कुदाल तथा हल लेकर खेती का काम करने लगे और वृक्षों की छाया से सन्तुष्ट न होकर अपने लिए घर बनाने लगे। पहिले सन्तानें बिना संसर्ग के केवल संकल्प से ही पैदा हो जाती थीं। ज्यों २ मनुष्यों में कामवासना बढ़ती गई त्यों ही त्यों संकल्प से सन्तान पैदा करने की शक्ति कम होती गई। अब तो संकल्प से सन्तान उत्पन्न करने की बात असंभव ही समझी जायगी। नूतन प्रकाश के पंडित तो इन बातोंको कोरी कल्पना ही समझेंगे। अभी बहुत दिन नहीं हुए जब अपने मृतक पतियों के साथ हमारी पतिव्रता माताएं हँसते हँसते जीवित ही चिता में जलकर भस्म होजाती थीं और अन्त समय तक उनके चेहरे पर जरा भी सिकुड़न नहीं पड़ती थी। छोटी २ बातों पर पतियों को परित्याग करके दूसरे पति को चुन लेने वाली हमारी आधुनिक महिलायें भला इस बात का कैसे अनुभव कर सकेंगी। आज से १०० वर्ष बाद तो ये बातें बिल्कुल ही असंभव समझी जावेंगी।

इसका कारण यह है कि पुरुष श्रद्धामय है। श्रद्धाके बिना कभी भी सच्चा ज्ञान नहीं प्राप्त हो सकता। इस अनेक वासनाओं के पुंजीभूत प्राणी के तर्क का महत्व ही कितना है! जो महानुभाव तर्कके द्वारा सत्यकी उपलब्धि करना चाहते हैं वे मानो मन सेर छटाकों से समुद्र के जल को तौलना चाहते हैं। अरे इस क्षुद्र और सीमित बुद्धि वाले मनुष्य के तर्क की पहुँच ही कहां तक? बिना श्रद्धा के तर्क अंधा है। पंगु है, बहरा है और है निरा जड़। वेदों में शास्त्रों में जब तक श्रद्धा न होगी तब तक उनके यथार्थ अर्थ को कोई कितना ही परिश्रम करे नहीं हा समझ सकता।

आजकल का वायुमण्डल श्रद्धाहीन है। कुछ नियमित समाजों पर दोष लगाया जाता है कि उन्होंने शास्त्रों पर से लोगों की श्रद्धा हटा दी, किन्तु उन समाजों के इने गिने सभासदों को छोड़कर अन्य लोगों की ओर ध्यान से देखिये, क्या वे सभी श्रद्धावान हैं? क्या उन सब का सत्शास्त्रों और धर्म के सभी कर्मों पर पूरा विश्वास है? यदि नहीं तो कहना पड़ेगा कि ये नूतन समाजें सम्पूर्ण समाज के भावों का प्रतिबिम्ब हैं *। जो साहसी पुरुष हैं वे खुल्लमखुल्ला

* हमारी सम्मति में भी ब्रह्मचारी जी का यह तर्क अपूर्ण है। हम यह मानते हैं कि शास्त्र एवं धर्म के प्रति अश्रद्धा का एक प्रधान कारण 'समय की गति' है, पर इन 'नियमित समाजों' का भी इसमें बहुत बड़ा भाग है। इन 'नियमित समाजों' ने अपने २ जीवन के प्रारम्भ में; शास्त्रश्रद्धा एवं रीति-परम्परा के प्रतिकूल जो

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

कहते हैं कि हम स्वर्ग, नरक, परलोक, पिंडदान, श्राद्ध, पातिव्रत, मूर्तिपूजा तथा पुराण स्मृतियों को नहीं मानते। जो दब्बू प्रकृति के हैं वे कहते हैं कि व्यर्थ में नक्कू बनने से लाभ ही क्या? पितृपक्ष में दो एक ब्राह्मण को भोजन करा देने से हमारा बिगड़ता ही क्या है। यह तो हम जानते हैं कि ब्राह्मण का खाया हुआ भला हमारे पितरों को कैसे मिल जायगा। मंदिर में हम कभी जाते ही नहीं। फिर मूर्तिपूजा के व्यर्थ खंडन से हमें क्या मिलेगा? इस प्रकार सम्पूर्ण समाज श्रद्धासे रहित होकर परलोक और परमात्मा का विश्वास खो बैठा है। शास्त्रों में नास्तिक की परिभाषा यह की है कि जो परलोक को न माने वही नास्तिक है। आज कितने लोग परलोक की बातों पर पूर्ण विश्वास करते हैं? ऐसे पुरुषों को हम आस्तिक कैसे कहें?

'अनुचित' प्रोपैगैण्डा किया है, क्या वह उपेक्षणीय है? सच पूछिये तो आज ये 'नियमित समाजें' अपने उस विष-वमन का फल स्वयं भोग रही हैं। इनके सदस्य इनके ही सिद्धान्तों पर अविश्वास कर रहे हैं। असल बात यह है कि जब मनुष्य किसी भी कारण से एकबार श्रद्धा-विहीन शुष्क तर्क पर आरूढ़ होजाता है; तो उसकी वृत्तियां बहिर्मुखी होजाती हैं और बहिर्मुखवृत्ति जन आस्तिक-पथ का अधिकारी नहीं, कारण आस्तिकता का सारा प्रासाद श्रद्धा की नींव पर स्थित है

इस प्रकार इससे इंकार नहीं किया जासकता कि इन 'नियमित समाजों' ने विष-वमन द्वारा श्रद्धाभाव के विनाश एवं जड़वाद के प्रचार से भारत के आस्तिक वातावरण को दूषित करने में अपनी शक्तियों का दुरुपयोग किया है। —सम्पादक।

वर्तमान समय में धर्मका जैसा ह्रास होरहा है उसे देखकर कौन ऐसा आस्तिक पुरुष होगा जो चिन्ता से तिलमिला न उठता हो। द्विज कहलाने वाले महानुभावों के १६ संस्कार होने तो अलग रहे हजार में शायद ही कोई एक ऐसा पुरुष मिलेगा जो सोलहों संस्कारों का यथाक्रम नाम बता सकेगा। 'वेदों का पढ़ना पढ़ाना' जो अपना 'मुख्य कर्तव्य' बताकर संसार में 'वेदों का डंका' पीटना चाहते हैं, उनमें से कितने अपने बच्चों को पहिले ही से वेदों की शिक्षा दिलाते हैं। सभ्य समाज में प्रतिष्ठित समझे जाने वाले महानुभाव इस बात को कब सहन कर सकेंगे कि उनके बच्चे मूंजकी मेखला बांधकर सस्वर वेदों की ऋचाओं को घोखें? यह सब समय का चक्र है। काल भगवान् की ऐसी ही इच्छा है· वे सदा अपना स्वरूप बदलते रहते हैं इसमें भी उनका कोई विचित्र विनोद ही छिपा होगा। जिसे हम अनुभव नहीं कर सकते?

इस श्रद्धाहीन वायुमण्डल का प्रभाव समाज के किसी भी बच्चे पर पड़े बिना नहीं रहता। थोड़ा पड़े चाहे बहुत, वायु मण्डल का असर सब पर ही पड़ेगा। यह दूसरी बात है, कि सत्समागम और पूर्व जन्मके पुण्यों के प्रभाव से वह कालान्तर में विलीन होजाय किन्तु एक बार तो वह अपना असर दिखावेगा ही।

पुराणों के विषय में आज कल के लोगों के विचित्र ही विचार है। आज से पांच सौ वर्ष पहिले समाज में पुराणों का अच्छा मान था, धीरे २ लोग पुराणों की तरफ से उदासीन होते गये। या यों कह दीजिये कि लोगों की श्रद्धा

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

कम होने से पुराणों का पठन पाठन बन्द सा होगया। जीविका के लिये श्रीमद्भागवत के पढ़ने का तो चलन बना ही रहा और वह किसी अंश में अभी तक बना है पर शेष सभी पुराणों का लोग नाम तक भूल गये। कबीर नानक दादू दयाल आदि आध्यात्मिक विचार वाले महानुभावों ने वेद पुराणों का एक प्रकार से खंडन ही करना शुरू कर दिया। इसका मतलब कुछ उनके बुद्धिहीन चेलों ने यह निकाल लिया कि वेद शास्त्रोंको पढ़ना ही न चाहिये। यद्यपि उन महात्माओं का यह मतलब कभी भी नहीं था, उन्हों ने पुराणों की बातों को प्रमाण माना है। इस बात को तो मैं दावे के साथ कह सकता हूँ कि कबीर और नानक साहब ने तो पुराणों का श्रवण खूब लगन के साथ किया होगा क्योंकि इनके प्रत्येक पद में पुराणों की आख्यायिकाओं का भाव भरा पड़ा है। वे इस त्रिगुणात्मक जगत् को असार अथवा मिथ्या बताते थे इसलिये वेद पुराण भी त्रिगुणात्मक ही हैं अतः ये भी मिथ्या हैं, बस यही उनका अभिप्राय था किन्तु इस अभिप्राय को समझने को कुछ बुद्धि चाहिये। इस लिये पीछे के बुद्धिहीन पन्थाइयों ने इन महात्माओं के वाक्यों का अनर्थ कर डाला। इतना सब होने पर भी वेद पुराणों के नाम पर लोगों की श्रद्धा बनी ही रही।

इसके बाद स्वामी दयानन्द सरस्वती ने तो खुल्लमखुल्ला ही पुराणों को अपठनीय और त्याज्य ठहराया और वेदों के भी उन्होंने अनोखे अर्थ किये। वेद शास्त्रों के पठन पाठन की क्षमता तो पहिले से ही नहीं थी पुराण भी अपठनीय ठहराये गये। स्मृतियों में बहुत से प्रक्षिप्त भाग बताये गये अब पढ़ने को रह क्या गया? पाश्चात्य विद्वानों की लिखी हुई किस्से कहानियों की पुस्तकें तथा कुछ सीमित बुद्धि वाले दार्शनिकों के अपूर्ण और ओछे विचारों के ग्रन्थ!! बस, उन्हीं के द्वारा हम सत्य का निर्णय करने चले। पाश्चात्य शिक्षा का आधार है मानवीय तर्क और वैदिक विद्या का श्रीगणेश होता है श्रद्धा से। दोनो में जमीन आसमान का अन्तर है। कुछ पाश्चात्य विद्वानों ने हमारे वेद शास्त्रों तथा पुराणों पर भी अपनी राय प्रकट की है। किन्तु श्रद्धाहीन पुरुष केवल तार्किक दृष्टि से उन आर्ष ग्रन्थों की कैसी आलोचना करेगा इसे पाठक स्वयं ही समझ लें। इसीलिये हम अपने शास्त्रों की सत्यता को पाश्चात्य लोगों के विचारों पर तौलने लगे। वेद शास्त्र और पुराणों में असली तत्त्व क्या है। इसे तो वे बिचारे जानते ही क्या? बस, ऊपरी बातों पर बहस होने लगी। वेदों की रचना किस सन् में हुई, वशिष्ठ कौन था, विश्वामित्र कब हुआ? उपनिषदों में धृतराष्ट्र का नाम आता है, इसलिये महाभारत से कितने दिन पीछे वह बनी होगी, पुराण किस ने बनाये, ऐसी ऐसी बाहरी बातों पर विचार होने लगा। बस, ये ही हमारे पठनीय विषय रह गये। यह किसी ने नहीं सोचा, कि भाई, कभी भी बने हों इससे ऐसा विशेष क्या लाभ, जरा ध्यान पूर्वक देखो तो सही, इनमें क्या है? यह देखने को तो संस्कृत के ज्ञान की आवश्यकता है, और ये विचार करने वाले महानुभाव संस्कृत शब्द कोष के सिवाय संस्कृत विद्या से कोरे थे। इसलिये फूल की महक को न पाकर ये पेड़ के ही ऊपर वाद-विवाद करते रहे

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

संतोष का विषय है, कि अब कुछ लोगों का विचार इस ओर गया है और वे पुराणों के विषय में उत्सुकता के साथ जानकारी प्राप्त करने का प्रयत्न कर रहे हैं। देखें, इसका परिणाम क्या होता है।

पुराणों के विषय में पहिले मेरा भी यही मत था, कि उनमें केवल इधर-उधर की गप्पें ही हैं। लिंग पुराण और गरुड़ पुराण आदि पुराणों की कथाओं के अवतरण देकर समालोचकों ने जो पुराणों की समालोचना की उनसे तो इन पुराणों की ओर से मुझे घृणा भी हो गई थी। अब जब इधर आकर कुछ भगवत् कृपा हुई और नियमित रूप से पुराणों का श्रवण मनन किया, तब तो मेरे विचार एक दम बदल गये। पुराणों के पुण्यालोक ने मेरे नेत्रों के अन्धकार को बहुत कुछ कम कर दिया। अब मैं यह दृढ़ता के साथ कह सकता हूँ, कि पुराण वेदों के भाष्य ही हैं। पुराण वैदिक धर्म के पूर्ण प्रतिनिधि ग्रन्थ हैं, उनके समान पूर्ण ग्रन्थ और कोई हो ही नहीं सकते। संसार में जितनी विद्यायें, हैं वे सभी पुराणों से निकली हैं। जो ज्ञान पुराणों में है, वही सर्वत्र है और जो पुराणों में नहीं वह कहीं नहीं, । मेरा अपना विचार है, कि केवल एक विष्णुपुराण ही सम्पूर्ण वैदिक धर्म के मर्म को प्रकट करने में समर्थ है। संसार की अच्छी से अच्छी बातें पुराणों में हैं और बुरी से बुरी बातें भी पुराणों में है। यदि उनमें बुरी बातें न होती, तो वे अपूर्ण कहलाते। क्योंकि इस संसार की स्थिति ही द्वंद्व से है। इसलिये अच्छी बुरी सभी प्रकार की बातें पुराणों में हैं पर अच्छी बातों को ग्रहण करने और बुरी बातों को त्यागने की शिक्षा भी पुराणों में दी गई है। यह विश्व त्रिगुणात्मक है। इसलिये पुराण भी त्रिगुणात्मक हैं। ६ पुराण सात्विक ६ राजस और ६ तामस हैं। तमाम पुराणों का दृष्टान्त देकर पुराणों की ओर से घृणा पैदा करने का प्रयत्न जो महानुभाव करते हैं वे जरा सात्विक पुराणों को भी तो पढ़ें। पुराण किसी एक प्रकार के विचारों वाले पुरुषों की बपौती तो हैं ही नहीं, वे तो प्राणीमात्र के लिये बने हैं। पुराणों के मत से वृक्ष लता, पर्वत, सिंह व्याघ्र और मनुष्य तथा देवता सभी सगे भाई भाई हैं। भगवान् कश्यप की जिस मनु स्त्री से मनुष्य उत्पन्न हुए हैं उन्हीं के द्वारा शेष १३ स्त्रियों से ये सभी जाति के प्राणी पैदा हुये हैं। इसलिये यह सम्पूर्ण लोक भगवान् कश्यप के द्वारा उत्पन्न हुआ है। इस लिये पुराणों में सभी प्राणियों के सम्बन्ध की सभी प्रकार की बातें होगी। क्यों कि रुचिवैचित्र्य होना तो प्रकृति का प्रधान धर्म है। इस लिये किसी एक बात को हम अच्छी समझते हैं उसे ही राजस या तामस प्रकृति के लोग बुरी समझते हैं। किन्तु पुराणों में यह कहीं भी नहीं कहा गया है, कि सात्विक गुण बुरा है। सात्विक गुण की प्रशंसा सर्वत्र ही की गई है।

यहां पुराणों के प्रत्येक विषय के ऊपर विचार करने का न तो समय है और न स्थान ही, किन्तु यह मैं फिर कहता हूँ कि पुराण सर्वतोभावेन पूर्ण ग्रन्थ हैं। वर्तमान समय में जो पुराणों की प्रतियां मिलती हैं, उनमें निश्चय ही बहुत सा अंश पीछे जोड़ा गया है, किन्तु जोड़ने वालों की

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

नीयत बुरी नहीं थी। इस लिये हम कह सकते हैं, कि वे अंश भी वेद शास्त्रों के सम्मत ही हैं। मेरा यह दावा नहीं है, कि मैं अब पुराणों के मर्म को भली भांति समझने लगा हूँ, किन्तु इतनी बात अवश्य है, कि अब मेरी पुराणों के प्रति श्रद्धा है और तर्क छोड़कर चिरकाल तक श्रद्धा का आश्रय ग्रहण करे रहूँगा तो कभी न कभी उनके मर्म को समझने में अवश्य सफल हूँगा। मेरा विश्वास है कि कोई भी पुरुष श्रद्धाके विना केवल अपनी बुद्धि से तर्कके द्वारा करोड़ों जन्मों में भी उन्हें नहीं समझ सकता। इस लिये पुराणों के समझने की जो कुंजी है, उसे मैं समझ गया हूँ, अब आगे प्रभु की इच्छा।

पुराणों के सम्बन्ध में हमें जो कुछ कहना था, सो कह चुके अब आपको संक्षेपमें हम यह बतावें कि पुराणों की कल्पनायें कितनी महान् हैं। यानी पुराणों ने सभी बात का अन्त कर डाला है। अर्थात् उससे आगे कोई और कल्पना कर ही नहीं सकता। पुराणोंमें संसार की, सृष्टि की प्रलय की, नाप की, तोल की, संख्या की तथा सभी बातों की कल्पना इतनी पूर्ण और अद्भुत हैं कि वे भगवान् वेदव्यास के मस्तिष्क को छोड़ कर और किसी के मस्तिष्क से निकल ही नहीं सकतीं। यहां हम दृष्टान्त के तौर पर पुराणों की काल-कल्पना को बता कर इस वक्तव्य को समाप्त करेंगे। पाठक देखेंगे कि भगवान् वेदव्यास ने काल की कल्पना कितनी विशाल बताई है।

काल यद्यपि नित्य, अपरिवर्तनशील और अपरिच्छेद्य है। उसके विभाग हो नहीं सकते। किन्तु प्राणियों ने अपने काम चलाने को उसकी कल्पना की है। वह कल्पना कितने विभागों में विभक्त की जा सकती है, इसे पाठक देखें।

पुराणोंमें "परमाणु" को सबसे छोटा बताया गया है। किसी भी चीज की गणना करने में सबसे छोटी संख्या परमाणु है। परमाणु उसे कहते हैं जिसके फिर विभाग न होसकें। वह इन चर्मचक्षुओं से नहीं देखा जा सकता। परमाणु अनुभवगम्य है। दो परमाणु मिलकर एक 'अणु' बनता है और तीन अणु का एक "त्रसरेणु" होता है (त्रसरेणु गवाक्ष में से छोटे छोटे जो धूलिकण दिखाई पड़ते हैं उनके समान होता है. तीन त्रसरेणु की एक "त्रुटि" (त्रुटि उसे कहते हैं, जितने काल में एक चुटकी बजे) १०० त्रुटि का एक "वेध"। तीन वेध का एक "लव" होता है। तीन लवका एक "निमेष" और तीन निमेष का एक "क्षण" कहाता है। पांच क्षण की एक 'काष्ठा' होती है। १५ काष्ठा का एक 'लघु' और १५ लघुकी एक 'नाड़ी' (नाड़ी को दंड भी कहते हैं) (दिन के घटने-बढ़ने से क्रमशः)६-७ दंड का एक प्रहर। और आठ प्रहर का मनुष्यों का एक रात्रि दिन होता है। १५ दिनों का एक पक्ष और दो पक्षों का एक मास होता है। दो मासों की एक ऋतु और तीन ऋतुओं का एक अयन (उत्तरायण को देवताओं का दिन और दक्षिणायन को देवताओं की रात्रि कहते हैं) दो अयनों का मनुष्यों का एक साल होता है।

जितने समयमें हम लोगों का एक वर्ष होता है। उतनी देर में देवताओं का एक दिन रात्रि ही होता है। इसी प्रकार के रात्रि दिनों से ३६० दिनों का देवताओं का एक वर्ष होता है, जिसे दिव्य वर्ष कहते

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

हैं। दिव्य वर्षों से चार हजार वर्षों का सतयुग, तीन हजार वर्षों का त्रेता, दो हजार वर्षों का द्वापर और एक हजार वर्षों का कलियुग होता है। एक युग के बीत जाने के बाद, फौरन ही दूसरा युग नहीं लग जाता, दोनों युगों के बीच में कुछ काल और लगता है,उसे सन्धि सन्ध्यांश समय कहते हैं। चारों युगों के सन्धि सन्ध्यांश का समय दिव्य वर्षों से इसप्रकार है। सत्ययुग का ८०० सौ वर्ष। त्रेता का ६०० वर्ष, द्वापर का चार सौ वर्ष और कलियुग का २०० वर्ष। इस प्रकार बारह हजार दिव्य वर्षों में चारों युग बीतते हैं। इन चारों युगों की चौकड़ी का नाम 'महायुग' है।

ऐसे महायुग जब ७१ बार बीत जाते हैं, तब एक "मन्वन्तर" होता है। एक मन्वन्तर के बीत जाने पर जब दूसरा मन्वन्तर लगता है, तब पहिले के मनु, प्रजापति, इन्द्र, सप्तर्षि और देवताओं के गण बदल दिये जाते हैं। वे सभी मनु, प्रजापति, देवता, इन्द्र और सप्तर्षि गण पदच्युत होकर या तो फिर की प्रतीक्षा करते हुए महर्लोक में चले जाते हैं, या अपने प्रारब्ध कर्मों के अनुसार अन्य लोकों की हवा खाते हैं। इस प्रकार ६ मनु इस कल्प में होचुके हैं। उनके नाम १ स्वायम्भुव, २ स्वारोचिष, ३ उत्तम, ४, तामस, ५ रैवत और ६ चाक्षुष हैं। वर्तमान समय में वैवस्वत मनु शासन करते हैं। इनके बाद सावर्णि, दक्ष सावर्णि, ब्रह्म सावर्णि, धर्म सावर्णि रुद्र सावर्णि, रौच्य और भौम ये सात मनु और होंगे। तब यह कल्प पूरा हो जायगा। इस प्रकार १४ मनुओं के ७१ के हिसाबसे ६६४ महा युग तो वह हुए और ६ संधि सन्ध्यांश में जोड़ लीजिये। इस प्रकार एक हजार महायुग का ब्रह्माजी का एक दिन होता है और इतनी ही बड़ी उनकी रात्रि। दिन में ब्रह्मा जी सभी चराचर जीवों की सृष्टि करते हैं और रात्रि में त्रैलोक्य की प्रलय करके सभी जीवों को अपने उदर में रख कर सो जाते हैं। यह उनका रोज का व्यापार है।

जिस प्रकार ब्रह्माजी का रात्रि दिन गिनाया गया है वैसे ही रात्रि दिनों से ३६० दिनों का ब्रह्मा जी का एक वर्ष होता है, ऐसे ही वर्षों से ब्रह्मा जी १०० वर्ष रहते है। १०० वर्षों के बाद दूसरे ब्रह्मा बदल दिये जाते हैं।

ब्रह्मा जी का जितना बड़ा दिन होता है वह विष्णु भगवान् की एक घड़ी ही होती है, ऐसी ऐसी १२ लाख घड़ियां बीत जांय तब उसे रुद्र भगवान् का आधा पल ही समझना चाहिये और ऐसे ही ऐसे पल एक अर्बुद (दस लाख) बीतें तब उसे अक्षर ब्रह्म कह सकते हैं। बस, यही अन्त है इससे आगे समय की कल्पना नहीं हो सकती।

अब आप ही, हिसाब लगावें। परमाणु अणु त्रसरेणु, त्रुटि, वेध, लव, निमेष, क्षण, काष्ठा, नाड़ी, दंड, प्रहर, दिन, रात्रि, पक्ष, मास, ऋतु, अयन, वर्ष, दिव्य वर्ष, युग, महायुग, मन्वन्तर, ब्रह्म दिन, विष्णु, घटिका, रुद्र-अर्ध पल और अक्षर ब्रह्म में कितना अन्तर है। आप जिसे १०० वर्ष की परमायु समझते हैं, वह अक्षर ब्रह्मरूपी महासागर में अपना क्या अस्तित्व रख सकती है? जब मनुष्य की सबसे बड़ी परमायु का यह हाल है, तब मनुष्य के दिनों की तो बात ही क्या बहुत से सूक्ष्म जीव ऐसे भी होते हैं जो हमारे

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

दिनों में अनेकों बार मरते और अनेकों बार जन्म लेते हैं। उनके समय का यदि हिसाब लगा ने बैठें, तो सचमुच हमारी बुद्धि विलीन होजाय यह सब उसी काल स्वरूप कल्याणकारी जनार्दन की क्रीड़ा है।

विचार—शील पाठक काल की इस पौराणिक कल्पना से पौराणिक कल्पनाओं, वर्णनों, इतिहासों, सारांशतः पुराणों की अद्भुत पूर्णता का अनुमान कर सकते हैं। सचमुच पुराणों की वर्णनशैली अपूर्व एवं अनुपम है और उनका उपहास करना अपनी पौराणिक अनभिज्ञता प्रकट करना है।

(खास 'आ० स०' के 'पुराणांक' के लिये)

शतौदना गौ।

ज्ञानाय, दानाय, च रक्षणाय। (सुभाषित)

(लेखक—श्री पं० गंगाप्रसाद जी अग्निहोत्री, जबलपुर)

इस समय भारत में जो भारतीय विद्वान् हैं, उनमें अधिक संख्या उन्हीं लोगों की है जिन लोगों ने संस्कृत के साहित्य का ज्ञान अंगरेजी भाषा में लिखी हुई पुस्तकों द्वारा प्राप्त किया है पाश्चात्य जगत् के जिन विद्वानों ने संस्कृत के साहित्य का अध्ययन कर उस पर अपने जो विचार अपनी जन्म भाषा में व्यक्त किये हैं, उन में ऐसे बहुत ही थोड़े लोग हैं जिन्होंने संस्कृत साहित्य के गुणों को मानकर आदर पूर्वक उन की प्रशंसा की हो। अधिकतर संख्या उन्हीं लोगों की है जिन्होंने अपने पांडित्य के बल से भारतीय साहित्य पर अनुचित आक्षेप ही किये हैं। उनके इन अनुचित आक्षेपों का परिणाम यह हुआ है कि भारतीय उनके ग्रंथों को पढ़ संस्कृत साहित्य के विषय में उन्हींकी संमति का अनुकरण करने लगे हैं। ऐसे ही भारतीय भारत के पुराण साहित्य के विषय में मनमानी बातें कहा करते हैं। हां! जिन भारतीयों में संस्कृत के महा ग्रन्थोंको पढ़ने तथा उन्हें समझाने की शक्ति होती है वे अंगरेजी में उन पर लिखी हुई टीका टिप्पणियों के झांसे में नहीं आते। यह बात निर्विवाद है कि साहित्य पर समय का बहुत अधिक प्रभाव रहा करता है। जिस समय जैसी वर्णन शैली प्रचलित होती है, उसी में उस समय के साहित्य का निर्माण किया जाता है। भारत का पुराण साहित्य जिस समय लिखा गया था, उस समय की शैली से इस समय की शैली भिन्न है। अतः यह कहना कि उस समय के लेखकों ने अमुक विषय का वर्णन ठीक रीति से नहीं किया सर्वथा अनुचित है। क्योंकि शैली और रुचि समय के अनुसार बदलती रहती है।

हमारे पुराण साहित्य का मनन पूर्वक अध्ययन करने से सुधी पाठक को यह बात ज्ञात होसकती है कि मनुष्य को अपना जीवन सुख सम्पन्न बनाने के लिये जिन–जिन सामाजिक, धार्मिक, राजनीतिक तथा आर्थिक उपायों की आवश्यकता हुआ करती है उनकी खोज भारत के गवेषणा–प्रिय लोगों ने आज से बहुत पहले ही करली थी। अपनी खोजों को काम में लाकर

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

उन लोगोंने भारतको संसार-समादृत बना दिया था। इस छोटे लेख में उनकी अन्यान्य खोजों की चर्चा न कर केवल एक ही खोज की चर्चा की जाती है, उनकी यह खोज ऐसी है जो संसार की सब खोजोंकी आदिजननी है। तात्पर्य्य उस खोज की सहायता से अन्यान्य खोजें की गयी हैं और आज भी की जाती हैं। आज कल की खोजों ने समय और परिश्रम की बचत तथा आय की वृद्धि भले ही की हो, पर वे उसका स्थान अपना नहीं सकी हैं।

ऊपर मैंने जिस खोज को इंगित किया है। उस का नाम है 'गौवंश की खोज'। भारतके प्राचीन विद्वानों को ज्यों ही ज्ञात हुआ कि गौ के दूध में ईश्वरने उन सब तत्वों को रख दिया है, जिनसे मनुष्य के शरीर के प्रत्येक अवयव की वृद्धि और पुष्टि होती है, त्यों ही उन लोगों ने गो के परिपालन की विशेष रूप से व्यवस्था की। उनकी इस व्यवस्था का परिणाम यह हुआ कि समूचा भारत शतौंदना गौओं से गवाढ्य होगया। उस के गवाढ्य होने से भारत में दूध और घी की नहरें बहने लगीं। साथ ही गेहूँ और चावल आदि की सात्विक भोज्यान्नों की उपज को बढ़ाने में सहायता देने वाले हृष्ट पुष्ट और दीर्घजीवी बैलों की संख्या बढ़ गयी। भारत में चारों ओर अन्न वस्त्र की इतनी सुविधा होगयी कि यहां के विद्वान् ब्रह्मविद्या जैसी शांतिस्थापक विद्या की खोज में लग गये और व्यापारीगण भारत की जनता को भोज्यान्न पूर्णमात्रा में देकर बचे हुए भोज्यान्नों और शिल्प निर्मित पदार्थों को विदेश भेजकर खासा धन कमाने लगे।

अत्यन्त खेद और लज्जा की बात है कि भारत के जिन आर्य्य विद्वानों ने गो वंश की खोज की उसके शास्त्रविहित परिपालन से अपने जीवन को धन्य बनाया तथा हम लोगों के लिये गो परिपालन को धार्मिक रूप देकर उसके परिपालन का आदेश दिया, जिसका उल्लेख हमारे पुराण साहित्य में यत्र तत्र पाया जाता है। उस की वर्त्तमान, विद्वान् धनवान् और सामर्थ्यवान् भारतवासी निन्द्य उपेक्षा कर भारत को गारत कर रहे हैं। गौ वंश को उन्नत करनेमें सांड़ तथा उसका उचित परिपालन अत्यन्त आवश्यक है। इस बात का पता ई० स० १६०८ में ज्यों ही अमेरिका के मिचगान नामक राज्य के लोगों को लगा त्यों ही उन्होंने सांड़ संघ की स्थापना की। ई० स० १६२७ तक इन सांड़ संघों की संख्या समूची अमेरिका में २२० होगयी। उसके सदस्यों की संख्या ६७५७ और उनकी संस्थाओं के सांडों की संख्या १००३ होगयी। इन संस्थाओं द्वारा परिपालित साँड़ों की सहायता से उस देश में पयस्विनी गौओं की संख्या बढ़ाई जारही है। भारत को पयस्विनी गौओंसे गवाढ्य बनाये रखने के अभिप्राय से ही हमारे पूर्व्वजों ने वृषोत्सर्ग की परिपाटी चलायी थी। पर असीम लज्जा की बात है कि आजकल उस परिपाटी को वर्त्तमान धर्मभीरु धनवान् लोगों ने नितांत हास्यास्पद कर रक्खा है।

अमेरिका के जिन गोतत्व पारखी लोगोंने उक्त २२० साँड़ संघों की स्थापना की है उनका कथन है कि लक्षणसंपन्न सांड़ जब तैयार किये जाते हैं और उनके द्वारा गौएं गर्भ धारण करती हैं तभी गौओं की दुग्धदायिता की मात्रा बढ़ती है। अन्यथा नहीं बढ़ती। इस सिद्धान्त को मानकर उक्त

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

साँड़-संघों के संचालक गण, अपने अपने संघ के सांडों को लक्षण संपन्न बनाने की चेष्टा सदा करते रहते हैं। जो गौ अधिक से अधिक दूध देती है और जिसका एक भी बच्चा नहीं मरता उसे सांड़ बनाने से वह लक्षण-सम्पन्न सांड़ बन सकताहै। "जीवत्वत्सायाः पयस्विन्याः वत्सो वृषभः कार्य्यः" संस्कृत के कौटिल्यकृत अर्थशास्त्र में उक्त बात लिखी हुई पायी जाती है। पर आजकल जो भारतवासी संस्कृत के अगाध पण्डित और सनातनधर्म के निष्कंप प्रेमी होने की पद पद पर घोषणा किया करते हैं, वे सब प्रकार समर्थ होने पर भी लक्षण सम्पन्न सांड़ प्रस्तुत करने की चिन्ता नहीं करते। जिन दो एक सज्जनों को वृषोत्सर्ग के रूपमें छोड़े हुये सांड़ों पर दया आती है वे मांग जांचकर थोड़ा सा धन बटोर लेते हैं और उसकी सहायता से, बूढ़े, रोगी तथा अनुपयुक्त सांड़ों की प्राणरक्षा कर अपने गोभक्त के होने का परिचय दिया करते हैं। ऐसे भोले भाले, गोभक्तों को समझ रखना चाहिये कि भारत के गोधन का सुधार और उत्कर्ष तभी सफल होगा, जब भारत के समर्थ गोभक्त शास्त्रविहित रीति से गो परिपालन सीखेंगे। जो थोड़े से लोग इस समय आंख मूंदकर अशास्त्रविहित रीति से गो रक्षा के नाम पर दरिद्र भारत का धन फूंक रहे हैं उनको समझ रखना चाहिये कि उनकी गो रक्षा की भावना तभी सफल होगी जब वे शास्त्र विहित गोपरिपालन की शिक्षा का प्रचार करेंगे इस काम को करने के लिये वे पूर्ण रूप से स्वतन्त्र और समर्थ हैं। पर न जाने क्यों वे लोग उचित रूप से गोपरिपालन करने की ओर ध्यान नहीं देते। इस समय भारत की सेवा का सब से निष्कंटक मार्ग गोपरिपालन की शिक्षा का प्रचार ही है। भारत की भलाई का यह सबसे उत्तम और फलप्रद उपाय है। जहां दस-दस साल के लड़के और लड़कियां तक अमेरिका में उस उपाय का अवलम्बन कर, अपने देश को सुख-समाधान-सम्पन्न बना रहे हैं वहां, भारत के बड़े बड़े नेतृत्वाभिमानी इसकी घोर उपेक्षा कर रहे हैं। "किमाश्चर्यमतः परम्?"

भारत के लिये यह बड़े सौभाग्य की बात है कि अभी तक भारत में सनातनधर्म के प्रेमी लोग विद्यमान हैं और उनके पास इतना धन भी अभी तक बना हुआ है जिसकी सहायता से वे भारत में गोपरिपालन की शिक्षा का अमेरिका की भांति प्रचार कर भारत के गोधन का यथेष्ट सुधार और उत्कर्ष कर सकते हैं। भारत के जो विद्वान् अपनी विद्वत्ता को, धनवान् अपने धनको और सत्ताशाली अपनी सत्ता को भारत के गोधन के सुधार और उत्कर्ष में खर्च करेंगे वे ही भारत के सच्चे हित मित्र हो सकेंगे आशा है कि भारत के सच्चे हित मित्र मेरी इस प्रार्थना की ओर यथेष्ट ध्यान देने की कृपा करेंगे।

अब वह समय आ गया है जब भारत के विद्वानों को अपनी विद्वत्ता का खर्च विवाद में न कर जनता में गोपरिपालनकी शिक्षा के प्रचार में करना चाहिये, धनवानों को अपना धन कौंसिल-प्रवेश जैसे अजागलस्तन सदृश कामों में खर्च न कर उसे गोसाहित्य के प्रचार जैसे सात्विक दान में खर्च करते रहना चाहिये। शक्तिशाली पुरुषों को अपनी शक्तिका दुरुपयोग अपने देश भाइयों को लूटने में नहीं करना चाहिये;

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

उन्हें उचित है कि वे अपनी शक्ति का सदुपयोग अपने किसान भाइयों में गोपरिपालन की शिक्षा का प्रचार करने में करें। जो भारतीय इस समय नानाप्रकार के व्यवसाय कर धनवान् बने हैं जो भारतीय अपनी विद्वत्ता का व्यवसाय कर धनवान् बने हैं, उनके लिये यह अत्यन्त लज्जाकी बात है कि वे अपने सात्विक भोज्यान्न और गव्य पदार्थों की उपज की कमी के कारणों को खोजने तथा उन्हें दूर कर, उनकी वृद्धि करने की ओर उपेक्षा कर रहे हैं। उनकी यह लज्जा तब और भी दुःखद प्रतीत होती है जब यह सुना जाता है कि पीढ़ियों से गवामिषभोजी होते आये हुये लोग अपने देश की गौओं को शतौदना बना रहे हैं और अनन्त कालसे गोभक्त कहे जाने वाले भारतीय भारत के गोधन की उपेक्षा कर उसे पतित और विकलांग बनाकर कसाइयों द्वारा कटवाते जा रहे हैं।

(ब्रा० स० के 'पुराणांक के लिये)

पुराणों की विशेषता।

(ले० श्री पं० बल्देवप्रसाद जी मिश्र B. A. LL. B. M. R. A. S. नायब दीवान, रायगढ़ स्टेट)

पुराणों में यद्यपि प्राचीन इतिहास भरा पड़ा है फिर भी वे इतिहास-ग्रंथ नहीं। वे तो इतिहास का सहारा लेकर धार्मिक तत्वों को समझाने वाले रूपकोंके भाण्डार हैं। गहन अनुभव अथवा तर्क द्वारा सिद्ध किये हुये सूखे दार्शनिक तत्वों की ओर सर्व साधारण की रुचि नहीं होसकती। वेदान्त-प्रतिपाद्य निर्गुण ब्रह्म के बदले सगुण लीलामय विशिष्ट अवतार ही की ओर उनकी श्रद्धा विशेष होगी। जैसे २ उनकी बुद्धि का विकास होता जायगा वैसे ही वैसे वे अनुभव करते हुये निर्गुण ब्रह्म के रहस्य तक पहुँच जावेंगे। परंतु प्रारंभिक अवस्था में तो उनकी श्रद्धा जागृत करने तथा आत्मकल्याण की ओर उनका उत्साह बढ़ाने के लिये यही लीलायें चाहिये, कथायें चाहिये, स्वर्ग नरक के वर्णन चाहिये देवी देवताओं के चरित्र चाहिये; प्रतिमाओं के हाल और पूजा अर्चाकी विधियां चाहिये। यही कारण है कि वेद-वेदान्त-प्रतिपाद्य धर्म की अपेक्षा पुराण प्रतिपाद्य धर्म ही का सर्व साधारण में विशेष रूप से प्रचार होसका है।

पुराणों की रचना श्रुति और स्मृति के आधार पर ही हुई है। परन्तु इतना होते हुए भी वे इस प्रकारकी कहानियों से पूर्ण हैं कि उनसे धार्मिक तत्व बड़ी सरलता के साथ सामान्य मनुष्यों को विदित कराये जासकते हैं। बस अधिकारियों के अनुसार उन तत्वोंको समझाने वाला भी चाहिये। रावण के दशमुख और गधेका सिर वाली कल्पना कितनी आकर्षक है, लेकिन समझाने वाला ही यह समझा सकता है कि यहां मुख का अर्थ है इन्द्रियां, जिनके द्वारा विषयों का उपभोग होता है और गधे के सिर का अर्थ है बुरी बुद्धि इसी प्रकार गणेश जी की विशाल बुद्धि का परिचायक हाथी का सिर है। आकाशवत् गंभीरता तथा विशालता का परिचायक भगवान् विष्णु का नीलवर्ण है। नीर क्षीर विवेक बुद्धि का परिचायक भगवती सरस्वती का वाहन राजहंस है

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

इत्यादि । यह केवल कपोलकल्पना नहीं, पुरञ्जयोपाख्यान लिखकर स्वयं भागवतकार ने ही स्पष्ट कर दिया है कि गूढ़तम तत्त्वों का परिचय इसी प्रकार रूपकों द्वारा दिया जाता है। वेदों में भी क्या "द्वा सुपर्णा सयुजा सखाया समानं वृक्षं परिषस्वजाते" आदि लिखकर यही रूपक वाली बात नहीं बताई गई है ? पुराणों के इन रूपकों को ही न पहिचान कर कई अल्पबुद्धि आलोचक लोग कह दिया करते हैं कि पुराणों में गपोड़बाजी भरी है और वे अनर्गल असम्भव और असभ्य घटनाओं के घर हैं सच बात यह है कि ऐसे ही लोगों ने पुराणों को बदनाम कर रखा है।

इन रूपकों की बातें छोड़ पुराणों में भी अनेक उपयोगी विषय भरे पड़े हैं। उनका पहिला उपयोगी विषय है प्राचीन इतिहास । वे लोग भयङ्कर भूल करते हैं जो पुराण कथित प्राचीन वंशविस्तार आदि को कपोलकल्पित कहानियां मानते हैं। इनमें अपूर्व ऐतिहासिक तत्व भरा हुआ है जिसके वास्तविक अनुसंधान की (Research की) बड़ी भारी आवश्यकता है। पार्जिटर सरीखे कुछ आंग्ल विद्वानों ने तथा मिश्र-बन्धु सरीखे कुछ भारतीय सज्जनों ने इस ओर ध्यान दिया है परन्तु इन इने गिने व्यक्तियों का प्रयत्न ही पर्याप्त नहीं। इस ओर तो प्रायः सभी इतिहास प्रेमियों को झुक पड़ना चाहिये। इनके गम्भीर अध्ययन से केवल प्राचीन भारत पर ही प्रकाश न पड़ेगा वरन् असीरिया, बेबिलोनिया, इजिप्ट आदि प्राचीनतम सभ्यता के केन्द्रों के साथ भारत के सम्बन्ध की भी बहुत सी बातें जानी जासकेंगी। चौधरी धनराजसिंह बी० ए० इत्यादि के प्रयत्न इस विषय में विशेष उल्लेखनीय हैं।

जिस प्रकार पुराणों में इतिहास का विषय महत्वपूर्ण है उसी प्रकार भूगोल का भी विषय है। सात प्रकार के रत्नों के सात समुद्र रूपकों की कोटि में हटाये जा सकते हैं। परन्तु इन दो चार रूपक के वर्णनों के कारण संभाव्य भौगोलिक स्थानों को भी कपोलकल्पित मानकर इस विषय में कोई अनुसंधान न करने की कसम खा जाना कोई बुद्धिमत्ता नहीं।

पुराणोंका दूसरा महत्वपूर्ण विषय है धर्माधर्मनिरूपण और भक्ति मार्ग का सम्यक् प्रवर्तन। जो बात स्मृतियों आदि में रूखे ढंग से कही गई है वही यहां उदाहरण सहित बता दी गई है। यदि स्मृतियों में प्रत्येक देश काल पात्र का विचार नहीं किया गया तो यहां वह बात आप अवश्य पा सकते हैं।

यदि वहां कोई विषय अप्रकट रह गया है तो यहां उसके उदाहरण ढूंढ़कर आप तत्त्वका निर्णय अथवा उस समय की सामाजिक व्यवस्था का निर्णय आसानी से कर सकते हैं। मनुष्यों की प्रकृति के अनुसार सात्विक राजस और तामस देवी देवताओं का प्रचार हुआ। पञ्चतत्वों के अनुसार पञ्चदेव पूजा चली। त्रिगुण के अनुसार त्रिदेवों का विषय चला। तैंतीस करोड़ भारतीयों के आदर्श रूप तैंतीस करोड़ देवता रक्खे गये। हरएक के लिये एक २ स्वतंत्र आदर्श कितना ज़बरदस्त व्यक्तिस्वातंत्र्य है। सब को एक ही डण्डे से हांकने की चेष्टा नहीं की गई। क्योंकि जिस धर्म में रुचि वैचित्र्य को स्थान ही

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

नहीं वह धर्म ही किस काम का ? अपने यहां तो कहा गया है:—

धर्मं यो बाधते धर्मः न स धर्मः कुधर्म तत्।
अविरोधी तु यो धर्मः स धर्मः सद्भिरुच्यते ॥

तथा च—

यं पृथग्धर्म्मचरणाः पृथक्फलहितैषिणः।
पृथग्भावैः समर्चन्ति तस्मै धर्मात्मने नमः ॥

इस प्रकार की अनेकता होते हुए भी एकता विद्यमान है। वह नहीं त्यागी गई। वैराग्यशील मुमुक्षु, शङ्करही को परमात्मा मानकर बाकी सब को उनका रूप अथवा उनकी कलायें समझें। अनुरागशील भक्त चतुर्भुजी विष्णु ही को सब कुछ मान कर शङ्करजी आदि को उनकी कलायें मान सकता है। यह सब भावना का भेद है, रुचिविभिन्नता का भेद है, अपनी २ प्रकृति और समझ का भेद है। तत्व तो एक ही है। उस तत्व तक पहुँचने के लिये जितने प्रकार के सरल से सरल साधन हो सकते थे उन सबका निदर्शन कर देना ही पुराणोंका प्रधान विषय है। विभिन्न मार्गों और उन्हीं के अनुसार विभिन्न कथानकों का उल्लेख देखकर पुराणों को परस्पर विरोधी बताना सरासर मूर्खता है।

पुराणों का तीसरा महत्वपूर्ण विषय है आदर्श स्थापन। यदि पुराण न होते तो सीता सावित्री अनसूया आदि के समान सतियां हमें कहां मिलती ! अङ्गद हनुमान् अर्जुन भीम आदि के समान वीर कहाँ मिलते, हरिश्चन्द्र, युधिष्ठिर, शिवि, दधीचि, भगीरथ इत्यादि के समान अटल निश्चयशील सज्जन कहां मिलते ? पापियों को भी निराश न होने का संदेश सुनाने वाले गज, गीध गणिका अजामिल आदि जीव कहां मिलते ? बड़े बड़े कवियों और लेखकों के लिये उत्तम से उत्तम कथानक कहां मिलते ? यदि पुराणों का महत्व देखना है तो इन विषयों की ओर देखा जाय।

साहित्य, सङ्गीत, ज्योतिष, वैद्यक इत्यादि का पूरा २ विवरण इन पुराणों में पाया जाता है। शुद्धि सरीखे वर्तमानकालीन महत्वपूर्ण प्रश्न के साधक-बाधक प्रमाण भी इन पुराणों में खोजे जा सकते हैं। हमारी धार्मिक एवं सामाजिक व्यवस्था कैसी थी, कैसी है और कैसी होनी चाहिये इन प्रश्नों के निर्णय में भी पुराणों का साधन बहुत दूर तक काम आ सकता है। ये वे भाण्डार हैं जिनमें अनेकानेक अमूल्य रत्न भरे पड़े हैं और खेद है कि हम लोग उन रत्नों के इच्छुक होकर भी इन रत्न कोषों की ओर से एक दम उदासीन रहा करते हैं।

बात यह है कि आजकल पुराण पढ़ने का काम अधिकांश में ऐसे लोगों के हाथ जा पड़ा है, जो स्वतः ही उन पुराणों का महत्व नहीं समझते। हिन्दी में सुखसागर पढ़कर वे समझ लेते हैं कि श्रीमद्भागवत का रहस्य उन्हें विदित होगया। व्रजविलास और व्रजविहार की कथायें पढ़कर वे श्रीकृष्ण चरित पर लेक्चर झाड़ना आरम्भ कर देते हैं। रासलीलाके समय श्रीकृष्ण द्वारा समझायी जाने पर गोपियों ने कहा है:—

मैवं विभोऽर्हति भवान् गदितुं नृशंसं,
संत्यज्य सर्वविषयांस्तव पादमूलम्।
भक्ता भजस्व दुरवग्रह ! मात्यजास्मान्,
देवो यथादिपुरुषो भजते मुमुक्षून्।

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

यत्पत्यपत्यसुहृदामनुवृत्तिरङ्ग !
स्त्रीणां स्वधर्म इति धर्मविदा त्वयोक्तम्।
अस्त्वेवमेतदुपदेशपदे त्वयीशे,
प्रेष्ठो भवांस्तनुभृतां किल बन्धुरात्मा। आदि॥

यह हाल पढ़कर चित्त आनन्द से गद्‌गद होजाता है और भक्त गोपियों तथा भगवान् श्री कृष्ण के प्रति आपही आप अपूर्व भक्ति उमड़ पड़ती है। हिन्दी अनुवादों में यह बात कहाँ? इसीलिये आधुनिक कथावाचकों के हाथ में पड़कर पुराणों का महत्व नष्ट भ्रष्ट होजाता है। यह तो हुआ आदर्श चरितों का हाल। इसके अतिरिक्त इतिहास, भूगोल, धर्मशास्त्र, साहित्य सङ्गीत, ज्योतिष आदि शास्त्र तथा इसी तरह के और दूसरे विषय जो पुराणों में आये हैं वे पुराणवाचक महोदयों को स्वतः ही नहीं विदित रहते तब वे इनका रहस्य ही क्योंकर समझा सकते हैं? इन सब से बढ़कर तीसरी बात यह है कि पुराणवाचकों ने पुराणों का असली अभिप्राय उलटा ही समझ रखा है और पूरा पुराण ग्रंथ अक्षरशः पढ़जाना ही उन्हें नितान्त अभीष्ट रहा करता है। चाहे इस तरह का पाठ श्रोताओं को रोचक हो चाहे न हो। परिणाम यह होता है कि संस्कृत से अनभिज्ञ श्रोता लोगों को ऐसे पुराण श्रवण में कोई रुचि नहीं रह जाती और अन्ध श्रद्धालु स्त्रियों तथा ऐसे ही कुछ इने गिने पुरुषोंके सिवाय और कोई भी पुराण नहीं सुनना चाहता।

स्वयं पुराणों के मनन से ही विदित हो जायगा कि श्रोताओं की इच्छानुसार और उनके प्रश्नों के अनुसार पुराणवाचकों ने मूलकथा में हेर फेर किया तथा घटाया बढ़ाया है। स्वयं भागवत ही को लीजिये। वह आदि में चार श्लोकों में ही कही गई थी। फिर ब्रह्मा जी ने जरा अधिक बढ़ाकर नारद जी को सुनाया। आखिर वही कथा इतनी बढ़ाई गई कि एक दम ७ दिन में पूरी हुई क्योंकि परीक्षितजी उस कथा को श्रवण करने में अपनी अवधि के सात दिन व्यतीत करना चाहते थे। दूसरे पुराणों का भी ऐसा ही हाल है। तब क्या इससे यह नहीं प्रकट होता कि आजकल के व्यास लोग भी श्रोताओं की रुचि और प्रवृत्ति तथा सुविधा के अनुसार उन कथानकों में घट बढ़ करके उन्हें वस्तुतः उपयोगी बनादें। मूल ग्रंथ ज्यों का त्यों रहे परन्तु उसके भावार्थ में सङ्कोच अथवा विस्तार खुशी से किया जासकता है। यह ज़रूरी नहीं कि अपना नियत समय मूल ग्रंथ के आद्योपान्त पाठ ही में बिता दिया जाय। जब कि देश इस समय विविध प्रकार के प्रगतिशील प्रश्नों को सुलझाने में लगा हुआ है तब यदि व्यास जी इसी प्रसङ्ग की कथाओं को महत्व देना छोड़ कर मोहिनी माया, चीरहरण लीला, अर्धनारीश्वर चरित आदिकी कथाओंमें हाथ पैर मटकाया करें तो वे देश को अपना शत्रु तो बना ही लेंगे, परन्तु साथ ही सर्वसाधारण के मन में पुराणों के प्रति भी द्वेष ही उत्पन्न कर देंगे।

सनातन धर्म प्रेमियों का यह परम कर्तव्य है कि वे एक तो अच्छे अच्छे विद्वानों को आर्थिक सहायता देकर उनके द्वारा पुराणों पर युक्तिपूर्ण विवेचनायें लिखवावें और दूसरे एक ऐसी परीक्षाका प्रबन्ध करें जिसे पास किये बिना कोई भी व्यक्ति पुराण पढ़ने का अधिकारी न समझा जावे। साथही वे यह देखते रहें कि केवल चरित्रवान् अनुभवी व्यक्ति ही व्यास गद्दी पर बैठाये जाते हैं। दूसरे नहीं। जब तक यह व्यवस्था न होगी तब तक हमारा पुराण-प्रेम किसी प्रकार सार्थक नहीं कहा जा सकता।

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

(खास "ब्रा० स०" के "पुराणांक" के लिये)

पुराणों पर एक दृष्टि।

(ले० श्री पं० विश्वेश्वर नाथ जी "रेऊ" साहित्याचार्य, M. B. A. S. जोधपुर)

शायद ही कोई धार्मिक हिन्दू ऐसा हो जो पुराणों के नाम से अभिज्ञता न रखता हो हमारे शास्त्रों में उप पुराणों को छोड़कर महा-पुराणों का संख्या १८ मानी गई है।

स्कन्द पुराण[1] में लिखा है:—

तत्र शैवानि शैवञ्च भविष्यञ्च द्विजोत्तमाः।
मार्कण्डेयं तथा लैङ्गं वाराहं स्कान्दमेव च॥
मत्स्यमन्यत्तथा कौर्मं वामनञ्च मुनीश्वराः।
ब्रह्माण्डं च दशेमानि त्रीणि लक्षाणि संख्यया॥
... .
विष्णोर्हि वैष्णवं तच्च तथा भागवतं तथा।
नारदीयं पुराणञ्च गारुडं वैष्णवं विदुः॥
ब्राह्मं पाद्मं ब्रह्मणो द्वे अग्नेराग्नेयमेककम्।
सवितुर्ब्रह्मवैवर्त्तमेव मष्टादशस्मृतम्॥

अर्थात् १ शिव, २ भविष्य, ३ मार्कण्डेय, ४ लिंग, ५ वाराह, ६ स्कन्द, ७ मत्स्य, ८ कूर्म, ९ वामन, और १० ब्रह्माण्ड ये दश पुराण शिव की महिमा का वर्णन करते हैं। इनकी श्लोक संख्या ३, ००, ००० है।

१ विष्णु, २ भागवत, ३ नारदीय, और ४ गरुड़ ये चार पुराण विष्णु की महत्ता का गान करते हैं। १ ब्रह्म और २ पद्म ये दोनों पुराण ब्रह्मा की श्रेष्ठता का प्रतिपादन करते हैं। इसी प्रकार अग्नि पुराण में अग्नि की और ब्रह्म वैवर्त में सूर्य की महिमा दिखलाई गई है।

परन्तु उसी पुराण के केदारखण्ड में लिखा है:—

अष्टादश पुराणेषु दशभिर्गीयते शिवः।
चतुर्भिर्भगवान्ब्रह्मा द्वाभ्यां देवी तथा हरिः

अर्थात्-अट्ठारह पुराणों में से दस में शिव की, चार मे ब्रह्मा की, दो में देवी की, और दो में विष्णु की महिमा का वर्णन है।

फिर विद्वान् लोग उपर्युक्त शिवसे सम्बन्ध रखने वाले १० पुराणों में से पद्म और वाराह पुराण का सम्बन्ध विष्णु से अग्नि पुराण का सम्बन्ध शिव से और ब्रह्माण्ड, ब्रह्मवैवर्त, मार्कण्डेय, भविष्य और वामन पुराण का सम्बन्ध ब्रह्मा से मानते हैं।

इसके अलावा कुछ विद्वान् वायु और शिव पुराण को और कुछ वायु और ब्रह्माण्ड पुराण[1] को एक ही पुराण के अंश मानते हैं। तथा भागवत के स्थान में देवी भागवत को महापुराण में स्थान देते हैं।

शास्त्रों में पुराण का लक्षण इस प्रकार दिया है:—

सर्गश्च प्रतिसर्गश्च वंशो मन्वन्तराणि च।
वंशानुचरितं चैव पुराणं पञ्चलक्षणम्॥

अर्थात्-जिसमें आदि सृष्टि का, बाद की सृष्टि का, (देवताओं आदि के) वंशों का, १४ मनुओं के समय का, और सूर्य और चन्द्रवंशी नरेशों का हाल हो उसे पुराण कहते हैं।

परन्तु नारदीय, वामन, आदि कुछ पुराणों

(१) शिव रहस्यखण्ड, रुद्भव काण्ड

(१) मि० पार्जिटर का मत है कि वायु और ब्रह्माण्ड पुराण पहले एक ही थे।

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

में इन लक्षणों की अव्याप्ति सी नजर आती है।

आगे पुराणों की प्राचीनता के विषय में ऐतिहासिक दृष्टि-कोण से विचार करते हैं:—

अलवेरूनी ने, जिसका समय वि॰ सं॰ १०८७ (ई॰ स॰ १०३०) के करीब था, अपने यात्रा विवरण में पुराणों का उल्लेख किया है।

बाण के 'हर्ष चरित' में जो वि॰ सं॰ की सातवीं शताब्दी के उत्तरार्ध (ई॰ स॰ की सातवीं शताब्दी के पूर्वार्ध) में बना था 'पवन-प्रोक्त पुराण' का उल्लेख है। इससे शायद वायु शिव या ब्रह्माण्ड पुराण का तात्पर्य हो।

'मलिन्द पन्हो' नामक बौद्ध ग्रन्थ से, जो शायद विक्रम की तीसरी शताब्दी में बना था उस समय पुराणों का विद्यमान होना पाया जाता है।

कौटिल्य के अर्थ शास्त्र में, जो मौर्यकाल (वि॰ सं॰ से २४० वर्ष पूर्व के आस पास) में बना था लिखा है:—

पुराणमितिवृत्तमाख्यायिकोदाहरणं धर्मशास्त्रमर्थशास्त्रं चेतिहासः (अधि १ अध्या॰ ५ प्रकरण २७)

इससे उस समय भी पुराणों का विद्यमान होना पाया जाता है। वेद-वेदांगों में 'पुराणों' का उल्लेख होने से पुराणों की प्राचीनता बहुत अधिक बढ़ जाती है। और धार्मिक हिन्दुओं की दृष्टि में, जो वेदों को अपौरुषेय मानते हैं, तो फिर कुछ अधिक कहने की आवश्यकता ही नहीं रहती। नीचे इस प्रकार के कुछ प्रमाण दिये जाते हैं। शतपथ ब्राह्मण में लिखा है:—

तानुपदिशति पुराणं वेदः सोयमिति किञ्चित्पुराणमाचक्षीतैवमेवाध्वर्युः। (१३। ४। ३। १३)

अर्थात्-अध्वर्यु उनको पुराण ही वेद है ऐसा उपदेश देकर पुराण का कुछ भाग सुनाता है।

अथर्ववेद में लिखा है:—

इतिहासस्य च वै स पुराणस्य च गाथानां च नाराशंसीनां च प्रियं धाम भवति य एवं वेद।

(का॰ १५ अनु॰ १ प्र॰ ६ मं॰ १२)

अर्थात्-जो ऐसा जानता है वह इतिहास, पुराण, गाथा, और नाराशंसी का प्यारा होता है।

इन सब अवतरणों से स्पष्ट प्रकट होता है कि हमारे यहां पुराणोंका अस्तित्व बहुत प्राचीन काल से चला आता है।

मत्स्यपुराण में लिखा है:—

पुराणमेकमेवासीत्तदा कल्पान्तरेऽनघ।
त्रिवर्गसाधनं पुण्यं शतकोटि प्रविस्तरम्॥

(अध्याय॰ ५३ श्लो॰ ४)

अर्थात्-पहले पुराण एक ही था। यह कहां तक ठीक है, इस विषयमें निश्चितरूप से तो कुछ कहना कठिन ही है। परन्तु एक पुराण के श्लोकों या उसके भावों को दूसरे पुराण में देख कर ऐसा सन्देह करने की गुंजाइश अवश्य प्रतीत होती है। मि॰ एफ॰ ई॰ पार्जिटर का मत है कि यद्यपि मत्स्य, वायु, अथवा ब्रह्माण्ड, आदि पुराण पहलेसे ही विद्यमान थे, तथापि कलियुग के राजवंशों का वर्णन उन सबमें भविष्य पुराण से ही लिया गया है। इसकी पुष्टि में उन्होंने उक्त पुराणोंके कुछ वचन उद्धृत किये हैं। यथा:—

"तान्सर्वान् कीर्तयिष्यामि भविष्ये कथितान्नृपान्"

अथवा—

"भविष्येते प्रसंख्याताः पुराणज्ञैः श्रुतर्षिभिः।

परन्तु आज कल मिलने वाले भविष्य पुराण की वह ऐतिहासिक उपयोगिता बिलकुल नष्ट हो गई है। हां, मत्स्य, वायु और ब्रह्माण्ड पुराण में अब भी बहुत कुछ ऐतिहासिक सामग्री मिलती है।

हर्ष का विषय है कि पाश्चात्य विद्वान् भी, जो सब पुराणोंको आधुनिक और निरर्थक मानते

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

थे, अब उनकी प्राचीनता और उनमें से कुछ में दिये ऐतिहासिक विवरणों को अङ्गीकार करने लगे हैं। फिर यह तो मानना ही होगा कि समय समय पर लोगों ने पुराणों में मनमानी बातों का समावेश कर उनका रूप बहुत कुछ बदल दिया है और इसीसे उनके असली रूप का दर्शन दुर्लभ होगया है। यद्यपि उनमें के बहुत से उपाख्यान वेदों में वर्णित घटनाओं को आलङ्कारिक रूप दे कर ही लिखे गए थे तथापि अन्य अनेक स्थानों पर साम्प्रदायिकता के कारण बड़ी गड़बड़ कर दी गई है। साथ ही पुराणों की प्राचीनता को कायम रखने के लिये पिछले लेखकों ने अपने समय की मत अथवा वर्तमान बातों को भी भविष्यत् का रूप देकर उनमें घुसेड़ दिया है। पुराणों का अध्ययन करने वालों को ऐसी बातों को ढूंढ निकालने में विशेष कठिनता न होगी। कलियुग में होने वाले राजवंशों का वर्णन भी इसी का एक उदाहरण समझना चाहिये।

वायुपुराण में एक स्थान पर लिखा है।

अनुगङ्गा प्रयागं च साकेतं मगधान्स्तथा।
एताञ्जनपदान्सर्वान् भोक्ष्यन्ते गुप्तवंशजाः॥

अर्थात्–गङ्गा के नजदीक के प्रदेशों पर प्रयाग में, साकेत में, और मगध में गुप्त वंशियों का राज्य होगा।

परन्तु वास्तव में देखा जाय तो यह श्लोक गुप्त राज्य का समय अथवा उसके बाद ही उक्त पुराण में जोड़ा गया होगा।

इसी प्रकार वाराहपुराण में रामानुज सम्प्रदाय के भाष्यों का स्कन्द पुराण में जगन्नाथ माहात्म्य का, और कूर्म पुराण में तान्त्रिकमत का समावेश भी पीछे से ही किया गया। फिर यद्यपि श्रीमद्भागवत में कहीं भी राधा का उल्लेख नहीं हुआ है तथापि देवी भागवत में उसके चरित्र को स्थान दिया गया है। स्कन्दपुराण के रेवाखण्ड में सत्य नारायण कथा का उल्लेख न होने पर भी उसके कर्त्ताने उसे उसका अंश लिख मारा है।

व्यास और सूत के साथ ही अर्वाचीन लेखकों की कृपा के कारण पुराणों में और भी ऐसी अनेक बातें ढूंढने से मिल सकती हैं।

आगे विद्वानों के विचारार्थ एक उपाख्यान उद्धृत करते हैं:—

अवद्रप्सो अंशुमतीमतिष्ठदियानः कृष्णो दशभिः सहस्रैः।
आवत्तमिन्द्रःशच्याधमन्तमपस्नेहितीर्नृमणाअधत्त ॥१३
द्रप्समपश्यं विषुणे चरन्तं मुपह्वरे नद्यो अंशुमत्याः।
नभोनकृष्णमवतस्थिवांसमिष्यामिवोवृषणोयुध्यताजौ १४
अधद्रप्सो अंशुमत्या उपस्थे धारयत्तन्वं तित्विषाणः।
विशो अदेवीरभ्याचरन्तीर्बृहस्पतिना युजेन्द्रः ससाहे१५।

(ऋग्वेद, मं० ८, अ० १०, सू० ८६)

सायणाचार्य ने इन मंत्रों का अर्थ इस प्रकार किया है:– कृष्ण नामक असुर, जो बड़ा तीव्रगामी था और दश हजार असुरों के साथ अंशुमती नदी के तीर पर रहता था इन्द्र ने उसके पास पहुँच विज्ञान से जल के भीतर रहने वाले (अथवा जगत् को डराने वाले शब्द को करने वाले) उस कृष्ण की सेना और उसको मार डाला।

इन्द्र बोला, हे देवताओ! उस शीघ्रगामी कृष्ण को, जो विकट स्थान में विचरण करता है और आकाश में सूर्य के समान अंशुमती नदी के छिपे स्थान में (अर्थात् जल में) रहता है, मैंने देखा। इसलिये हे देवताओ! मैं चाहता हूँ कि तुम उससे युद्ध करो।

इसके बाद इन्द्रने बृहस्पति के साथ उस द्रुतगामी कृष्णके, जो अंशुमती (१) नदीके तीरपर

(१) अंशुमान् सूर्य का नाम है और यमुना सूर्य तनया मानी गई है।

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

दीप्यमान था और जो अपने शरीरको शत्रुओं से अजेय रखता था (अथवा जो खा पीकर पुष्ट हो रहा था) पास पहुँच उसकी आती हुई उस दुष्ट सेना को मारडाला। आगे सायणाचार्य ने लिखा (१) है:—

'तमवधीदित्यर्थः प्रसंगादवगम्यते' ॥

अर्थात् प्रसङ्ग से जाना जाता है इन्द्रने कृष्ण को भी मार डाला। इसी प्रकार भागवत के दशमस्कन्ध के २४ वें और २५ वें अध्यायों में 'गोवर्धन पूजन'की कथा लिखी है। उसमें लिखा है:- कृष्ण के कहनेसे नन्दादिकों ने इन्द्र की पूजा को छोड़कर गोवर्धन पर्वत की पूजा की। उस समय जो बलि दी गई थी उसे स्वयं कृष्णने ही दूसरा वृहत् रूप धारण कर ग्रहण किया था। इसी से क्रुद्ध होकर इन्द्र ने गोप लोगों को नष्ट करने के लिये सांवर्तक मेघों को गोकुल पर प्रलयंकरी वृष्टि करने की आज्ञा दी।

परन्तु जब उस वृष्टि को देखकर गोप लोग घबराने लगे तब कृष्ण ने गोवर्धन पर्वत को हाथ पर उठाकर उन लोगों को उसके नीचे छिपा लिया। इस प्रकार बराबर सात दिन बीत जाने पर इन्द्र का गर्व खण्डित होगया।

हमारी प्रार्थनाहै कि उपर्युक्त दोनों उपाख्यानों में प्रत्यक्ष विरोध * होते हुये भी कहाँ तक सादृश्य दिखाई देता है इस पर विद्वान लोग विचार कर अपना मत प्रकट करने का कष्ट स्वीकार करें।

मि० पार्जिटर का मत है कि पुराण पहले पहल प्राकृत भाषा और खरोष्ठी अक्षरों में लिखे गये थे।

परन्तु इसके लिये जो प्रमाण दिये हैं वे इतने ज़ोरदार नहीं हैं कि उन पर तर्क करने की गुंजाइश ही न हो। यह तो निर्विवाद ही है कि समय २ पर अनेक लोगों ने अपनी रचना चातुरी के नमूने पुराणों में प्रविष्ट किये हैं। ऐसी हालतमें कहीं २ छन्दोभङ्ग के दोषों, सन्धि-दोषों प्राकृतिक प्रयोगों, आदि को देखकर उनका सर्व प्रथम प्राकृत में बनाया जाना मान लेना कुछ अधिक संगत प्रतीत नहीं होता। इसी प्रकार पुराणों की किसी हस्त लिखित पुस्तक में 'अशोक' के स्थान पर 'अयोद' लिखा देखकर यह मान लेना कि पहले पहल खरोष्ठी लिपि में ही पुराण लिखे गये थे कहां तक युक्तिसंगत है, इस पर विद्वान् स्वयं विचार कर सकते हैं। हमारी समझ में खरोष्ठी के सिवाय अन्य लिपियों में भी लेखक दोष से 'श' का 'य' पढा जाना सम्भव है। यही हाल अन्य उदाहरणों का भी हो सकता है।

(१) ऋग्वेद संहिता, पृ० ४१५

* हमारी सम्मति में इन उपाख्यानों में विरोध क्या विरोधाभास भी नहीं है। वैदिक उपाख्यान का सम्बन्ध कृष्णासुरसे है एवं पौराणिकका पूर्णावतार,भगवान् श्रीकृष्ण से। दोनों उपाख्यानों में अंशुमती (यमुना) के तट का वर्णन दोनों को एक करने में सक्षम नहीं है। यमुना के तट पर देहली एवं मथुरा दोनों ही बसे हैं, पर इन दो नगरों के एककरण-कल्पना का क्या अर्थ ? इन दोनों उपाख्यानों की विभिन्न-विषयता का प्रमाण वे स्वयं हैं। जहा असुर कृष्ण का इन्द्र द्वारा वध हुआ है, वहां भगवान् कृष्ण के द्वारा इन्द्र को शिकस्त हुई है। लेखक इतिहास के अन्वेषक हैं। क्या वे भगवान् कृष्णके इन्द्र द्वारा वध की अनैतिहासिक घटना को कुछ महत्व दे सकते हैं ? क्या इतिहास में केवल नामसाम्य के कारण ही प्रत्यक्ष विरोध सिद्ध किया जा सकता है ! नहीं "पल्लव-ग्राहि पाण्डित्यं" वाले कुछ पाश्चात्य विद्वान् ऐसी शंकाएं करें तो करें, पर भारतीय विद्वान् भी उनके आधार पर इन तर्कों के जालमें फंस जाय तो "किमाश्चर्यमतः परम्" ! —सम्पादकः

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

श्री गणपति-वन्दन।

(रचयिता-सुकवि श्री पं० ब्रह्मदत्त शर्मा जी "शिशु" देववन्द)

जो ओ३म् अज, आनन्द मय, आद्यन्त उपमा-धाम है।
जो दिव्य वपु मंगल-सदन, जय-सिद्धि-युत, अभिरामहै !!
जो विघ्न-नाशन, प्रेम-मय, गणराज, पूरण-काम है।
पद-पंकजों में उस पिता के कोटिवार प्रणाम है !!

× × ×

ओ विश्व-हित रंजित-हृदय, पर-सौख्य-रत वसु थाम है।
जो नय-प्रवर्तक, कर्म मय होता हुआ निष्काम है !!
आकार-हीन सदैव जो, तप-ज्ञेय एक अनाम है।
उस प्रेम-वश साकार को "शिशु" कोटिवार प्रणाम है !!

सुनहले स्वप्न।

[लेखक-प्रोफेसर रामकुमार जी वर्मा 'कुमार' एम० ए० प्रयाग विश्वविद्यालय ॥]

निशा के उज्ज्वल प्रातःकाल,
तुम्हारा किस प्राची ने कहाँ
किया है रंग कर प्यार दुलार
शून्य में दृश्यों के रच जाल
लगा नश्वरता-वन्दनवार,

[२]

नींद-नभ के अस्थिर पर्जन्य
उड़े किस ओर, चले किस ओर
सजा कर इन्द्र-धनुष के रंग
सुप्ति में भी बन कर चैतन्य
छिपाकर पलकों में निज अंग,

[३]

रजनि के सज्जित रंजित हार
तरल हो और सरल-आकार
टूटते बनते बारम्बार
कौन है स्वर्णकार सुकुमार
किया करता है निशि शृंगार,

[४]

चारु चितवन के चंचल चित्र,
चुरा कर रंग चले यह चाल
आ गये तम में तुम पथ भूल
दीखते हो तुम कुसुम विचित्र
खिला करते हो जो निर्मूल,

[५]

हृदय-उपमान अरे गतिमान
वायु झोंका दे दो इस भांति
स्वर्ण-पंखों से उड़ सविराग
उसी झोंके में गूंजे गान
वही हो नश्वरता का राग,

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

पग-स्पर्श

रचयिता-श्री रामानुज दयालु जी B. A. L L. B. सम्पादक'त्यागी'

तुम वहि पार खरे तट पै विराजो देव,
कैसे तव चरन हमारे हिये ठहरैं ?
नाव न करारे, नहिं नाविक निहारौं कोऊ,
सलिल गंभीर ऐसो लखि सूर दहरैं ॥
सूझ न उपाव एकौ, जतन बनाऊं कौन,
जल पै जो विजय-पताका मम फहरैं ?
एक ब्यौत, बीन लै बजाऊं गंत जासों तेरे
पग टकरायँ, मेरे गीतन की लहरैं ॥

'ब्राह्मण-सर्वस्व' के खास 'पुराणांक' के लिये,

विजय-पथ ।

[लेखक-कविवर श्री पं० ब्रह्मदत्त जी शर्मा 'शिशु' देवबंद]

(मार्कण्डेय-पुराणान्तर्गत श्री सप्तशती के आधार पर)

आजकल आर्य-जाति के धार्मिक-सिद्धान्तों, की आलोचना करते हुये आलोचक महाशय, उस ज्ञानारुणोदय-स्वर्ण-काल की अनुभूति या तद्-गम्य सूक्ष्म-सात्विक मनो-वृत्तियों द्वारा उस परम-पावन सुरम्य स्थल पर कितनी पहुँच रख सकते हैं, इसका प्रमाण उनका वर्तमान का वातावरण आधुनिक-शिक्षा प्रणाली तथा उपस्थित मनो-विकास के साधन दे सकते हैं।

आर्य-जातिके प्राञ्जल-सिद्धान्तों के अनुयायी आज भी उनको उस ही रूप में अवलोकन कर उन पर उस ही प्रकार आचरण ला रहे हैं जैसा कि वे पूर्व में थे, आलोचक का ऐसा समझना भी उसकी सुबुद्धि की असामर्थ्य ही को प्रगट करता है। क्योंकि उत्थान और पतन के चक्र पर निरन्तर मनन करने वाला पुरुष इस सिद्धान्त से वञ्चित नहीं होसकता कि जब किसी देश का उत्थान होता है, तो उसका मनोबल, सद्-असद् विवेक-दृष्टि, आत्म-स्फूर्ति, सूक्ष्म-विषय प्रवेशिका-बुद्धि इत्यादि उस उपस्थित विकासालोक में होती हैं। परन्तु जब पतन-काल होता है, तो ये ही बातें तमोगुणाच्छादित होजाती है। भारत-वर्ष जो कि पूर्व पूर्णालोक में था युग-चक्र क्रम से ह्रास की ओर होता चला आरहा है। आज इस चौथे युग में उसकी वे शक्तियां जो उस

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

काल में प्रवुद्ध थीं समष्टि रूपसे प्रस्तुत हैं। तब वह उन स्वर्ण-सिद्धान्तों को जो उसने शारीरिक (सामाजिक) मानसिक (नैतिक) धार्मिक (आध्यात्मिक) तीनों स्थितियों में सम्यक् विकसित-रूप से अवगत किये थे आज किस प्रकार पालन कर सकता है। हाँ! भारतीय उन्नति पथ के उनही नियमों को जीवन में परिचालित करके यदि कोई व्यक्ति या देश चाहे, तो आज भी उस दिव्य-सृष्टि का अनुभव कर के उत्थान पा सकता है। परन्तु उन सिद्धान्तों की आलोचना का अधिकार हमें उस समय तक नहीं है।

जब तक कि हम पूर्वजों सा संयमी तपोनुष्ठित-जीवन बनाकर तथा साम्प्रदायिक-दृष्टि-त्याग कर सद् तत्व द्रष्टा के जिज्ञासु न बन जांय क्योंकि स्वानुभवी सत्तत्त्व मानवकी 'दृष्टि' और एक बुद्धि-द्वारा काल्पनिक लहरों के भाव की दृष्टि में भूतल और आकाश जैसा अन्तर है। कारण कि आज तक कोई भी मनुष्य बुद्धि-ज्ञान की सीमा नहीं लगा सका। हां! इतना अवश्य कह सका है कि यह बात मेरी बुद्धि से बाहर है किन्तु उसके इस कथन में कोई ऐसा प्रमाण नहीं कि उसकी बुद्धि पूर्ण विकसित है या उस की बुद्धि से परे कुछ नहीं। तब उस विकास के विशाल जाज्वल्यमान पर्वत शृङ्ग पर आसीन हुए तत्व-द्रष्टा मानव के अनुभूति वाक्यों की आलोचना, पृथ्वी पर रेंगने वाला मनुष्य यदि करे तो यह अज्ञता के अतिरिक्त और क्या कहा जा सकता है? हमारी अनुभूति में पुराण के विरोधी लोग इस ही कोटि में हैं। यह सच है कि वर्तमान की अन्तर-निष्क्रिय रूढियों ने पौराणिक-दिव्य-सत्य को छुपा डाला है। परन्तु इसका यह अर्थ नहीं कि हम उस दिव्य अस्त्र को जो अबोध पुरुषों के हाथ में निकम्मा होगया हो तिरस्कार की दृष्टि से उसको और अनुपयोगी सिद्ध करने लगें। आवश्यकता है उसका विकृत वाह्य स्वरूप ठीक करके उसका सदुपयोग करने की। पुराण ऐहिक और पारलौकिक दिव्य ज्ञान के भाण्डार हैं। उनमें चमत्कृत उज्ज्वल रत्न हैं। हमें उन्हें ग्रहण करना चाहिये। हमें अन्तर-दृष्टि से उनमें प्रवेश करना चाहिये। क्योंकि हम किसी महात्मा का वाह्य-दृष्टि से, इस प्रकार वर्णन कर सकते हैं कि वह दयालु है, वह पवित्र है, दृढ़ प्रतिज्ञ है। परन्तु वह क्यों दयालु है? क्यों पवित्र है? क्यों दृढ़ प्रतिज्ञ है? यह प्रगट नहीं कर सकते। उसके अन्तरतम हृद्-प्रदेश में जो अद्भुत सृष्टि है, सत्यालोक है, अनन्त-आनन्द-सिन्धु की तरङ्गें जो उसको सतत-प्लावित कर रही हैं, क्या हम वाह्य-दृष्टि से देख सकते हैं? कदापि नहीं। तब हमें भाषा, शाब्दिक तथा सामाजिक रूढियों की परिमित-दृष्टि से उठकर पुराणों का निदिध्यासन और मनन करना चाहिये। हम भी आज सभ्य पाठकों के सामने एक ऐसे ही विजयी-दिव्य-सिद्धान्त की व्याख्या करेंगे, जो कि आर्य्य-जाति के जीवन का अनुपमेय विजय-मंत्र था, और है। वह सिद्धान्त है-'शक्ति-पूजा'।

शक्ति का स्वरूप।

शक्ति-पूजा के विषय में वर्णन करने से पहिले हम शक्तिका स्वरूप निरूपण करते हैं। जब हम शक्ति रचना पर अन्तर-दृष्टिसे विचार करते हैं तो हमारे अन्तस्तर पर अद्वैत-तत्त्व की झांकी होती है, जोकि अखिल विश्व का आधार तथा सञ्चालक है पुनः वही अद्वैत-तत्व दो स्वरूपों में

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

विभाजित होजाता है, एक निष्क्रिय, दूसरा गतिमान् क्रियाशील। जिस प्रकार पूर्ण–योगी मानव संसार का कार्य करता हुआ भी कर्म से भिन्न तथा मुक्त रहता है। उस ही प्रकार वह अ-द्वैत–तत्व अखिल-ब्रह्माण्ड का परिचालन करता हुआ भी अखण्ड आत्मयोग से अकर्त्ता रहता है। उस अकर्ता को ही हम योग–दृष्टि से कूट-स्थ, अचल, ध्रुव इत्यादि कहते हैं। और उसकी वह व्यावहारिक–सत्ता जो विश्व सञ्चालन करती है उसको हम 'शक्ति' कहते हैं। जिस समय वह अपनी शक्ति को जितनी परिणाम में चाहें अक्रिय तथा अविकसित करते हैं तब हम कहते हैं कि 'वह' योग निद्रामें शयन कर रहा है 'वह' योगनिद्राशायी अच्युत ही शास्त्रीय परिभाषा में 'आधार' है और 'वह' सृष्टिसञ्चालिका शक्ति ही आधेय है। जिस प्रकार पुरुष से पुरुषार्थ भिन्न नहीं है उसही प्रकार 'शक्तिमान्' से शक्ति भिन्न नहीं। संसारकी रचयित्री, पालिका, संहारिणी शक्ति उस ही की है। मानवों को ऐहिक लघु आनन्द में बलात् आकर्षण कर बद्ध करने वाली वही शक्ति है और परमार्थिक महत् आनन्द प्राप्ति कराकर मुक्ति का कारण भी वही है * आर्य-शास्त्र बतलाता कि संसार रचयिता-ब्रह्मा के अग्रभाग से धर्म उत्पन्न हुआ और पृष्ठ भाग से अधर्म। यह कितना गहरा रहस्य उद्घाटन है। धर्म और अधर्म कितने सन्निकट मिले हुये हैं। अर्थात् एक मनुष्य का अग्रभाग धर्म और पृष्ठ भाग अधर्म। सारांश अधर्म का अस्तित्व धर्म के विपरीत है। इस ही प्रकार उस एक शक्ति के ही दो स्वरूप हो जाते हैं। एक 'विद्या' और दूसरी 'अविद्या'। इस ही लिये शक्ति-ग्रंथ श्री सप्तशती में इसको वर्णन किया है कि वह 'विद्या' नित्य मुक्तिका (ऐहिक या पारलौकिक) कारण है और वही अविद्या स्वरूपा संसारबन्धन का कारण है। विषय स्पष्ट है कि उस शक्ति के उन्मुख होकर चलना विजय प्राप्त कराने वाला है और विपरीत आचरण करना बन्ध (दासत्व) का कारण है। इस ही हेतु शक्ति-ग्रन्थ बतलाता है कि जिसने (व्यक्ति या देश ने) कल्याणात्मिका त्रिभुवनेश्वरी शक्ति का आराधन नहीं किया उसके लिये मुक्तिस्वातन्त्र्य और स्वराज्य कहाँ ?

वह महाशक्ति उस निराकार अद्वैत तत्व की है, इस लिये वह भी निराकार और अद्वैत ही है हम इन आंखों से उसको देख नहीं सकते। तब हम विचारते हैं कि यह संसार क्या है ? कहां से आया ? इसका उत्तर शक्ति ग्रन्थ देता है कि वह शक्ति बीजरूपा है और यह (जगत्) उस-का विकास है। उत्तर यथार्थ है। संसार देख रहा है कि बट का बीज कितना नन्हा होता है और उसके ही अन्तर से कितना बड़ा बट वृक्ष उत्पन्न होता है। हम पूछते हैं कि यह इतना बड़ा वट वृक्ष कहां से आया ? वटाङ्कुर में ही से न !

बस इस प्रकार यह संसार बीज रूप शक्ति का ही स्वरूप है। पुनः जब उस बटबीज के रूप को अवलोकन करते हैं तो वह तीन रूपों में द्वि-

---

* सा विद्या परमामुक्ते–र्हेतु भूता सनातनी।
संसारबंधहेतुश्च सैव सर्वेश्वरेश्वरी ॥
अध्याय १ श्लोक ४४ सप्तशती

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

खाई देता है। एक—स्थूल वृक्ष रूप, दूसरा—सूक्ष्म बीज रूप, तीसरा—अंकुरस्थ क्रियाशील जीवन रूप। बस इस प्रकार ही उस महाशक्ति के तीन स्वरूप हैं। अर्थात् "अपरा—परा—परमा।" "अपरा" स्थूल रूप यह जगत् 'परा" बीजरूप जगत् का सूक्ष्म रूप वीर्य, 'परमा" स्थूल और सूक्ष्म दोनों सृष्टि का क्रियाशील सर्वाधार जीवन तत्व। यह है उस महाशक्ति के स्वरूप का सिद्धान्त रूपसे सार्वभौमिक निरूपण। अब हम शक्ति के उस स्वरूप का जो भक्तों के दुःख दलनार्थ "अपरा" रूप में जगती पर प्रकट हुआ वर्णन करते हैं।

जब मनुष्य और देवगण अपनी परिमित शक्ति से उस दुराचार को न हटा सके जो महासत्य के विपरीत था, तब उन्होंने अपने व्यक्तित्व को विस्मृत करके उस अपरिमित अखण्ड शक्ति से योग किया, उसकी आराधना की। * उस समय जो महाशक्ति का 'अपरा" स्वरूप प्रगट हुआ उसने ही अधर्म का विनाश कर धर्म को स्थापन किया। उस महाशक्ति के उस रूप का जो नामकरण किया गया वही भारत में यत्र तत्र पूजित है। इस प्रकार अनेक वार शक्ति का प्रादुर्भाव हुआ है। और उस महाशक्ति के अनेक स्वरूप हैं। परन्तु हम उनमें से केवल तीन स्वरूपों का ही वर्णन करेंगे।

हम देखते हैं कि संसार में तीन † कार्य हो रहे हैं, रचना, पालन, विनाश, रचना कार्य की अधिष्ठात्री देवी को शक्ति-ग्रन्थ में "ब्राह्मी"शक्ति नाम दिया गया है। और पालयित्री को 'वैष्णवी' तथा संहारिका शक्ति को 'माहेश्वरी"। यथार्थ में यह महाशक्ति एक है, परन्तु कार्य रूप से उसके त्रिधा स्वरूप हैं। उस महाशक्ति के भक्त लोगों ने यथासमय इन ही स्वरूपों में से किसी का आह्वान कर उसका प्रादुर्भाव किया है। किन्तु विशेष रूप से दनुजदलविदारिणी भक्तभय हारिणी माहेश्वरी शक्ति का ही प्रादुर्भाव हुआ है।

"शक्ति" के प्रादुर्भाव की पद्धति कितनी वैज्ञानिक तथा रहस्यपूर्ण है यह विचारणीय व माननीय है। जिस समय कि महिषासुर ने सत्य के विरुद्ध संसार में उत्पात मचा रक्खा था और कोई भी मानव या देवता उसको समर में परास्त करने की शक्ति नहीं रख सका। तब उस अद्वैत—तत्व के उन त्रिरूपों के साथ (जो त्रिधा शक्ति के आधार हैं) अन्य देवताओं ने भी अपनी २ अन्तर शक्ति को जागृत किया। * और देवगणों की वह प्रबुद्ध शक्ति एकत्रित होकर एक दिव्य स्त्री के स्वरूप में प्रगट हुई। यह कितना यौगिक सत्य है! कितना वैज्ञानिक चमत्कार है!! उस अन्तःशक्ति समूह से विद्युत् के समान आभावाली सिंह वाहिनी दैवी-शक्ति प्रादुर्भूत हुई जिसने त्रिलोकी को चमत्कृत कर दिया। वह कितनी सुन्दर है! कैसी ब्रह्मचर्य की विमल

* इत्थं यदा यदा बाधा दानवोत्था भविष्यति।
तदा तदावतीर्याऽहं करिष्याम्यरिसंक्षयम्॥
श्लोक ५१ अध्याय ११ सप्तशती।

† त्वयैतद्धार्यते विश्वं त्वयैतत्सृज्यते जगत्।
त्वयैतत्पाल्यते देवि त्वमत्स्यन्ते च सर्वदा॥
अ० १ श्लोक ७६ सप्तशती।

* अतुलं तत्र तत्तेजः सर्वदेवशरीरजम्।
एकस्थं तदभूत्नारी व्याप्तलोकत्रयं त्विषा॥
अ० २ श्लोक १२ श्री सप्तशती।

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

कान्ति चन्द्रमुख मण्डल पर छिटक रही है ? कितनी वीरता मिश्रित अनुपम शान्ति है ? कैसे कमल जैसे करुणा-पूर्ण तेजोमय नेत्र हैं ? उसके विशाल-करों में विद्युदाभामय चक्र तथा सूर्य प्रभ इव खड्ग दमक रहा है । ओह ! वह साक्षात् शक्ति का अवतार है । भाषा उसके वर्णन में, अशक्त है पर वह जहां असुर-दल संहारिणी है, वहां जगज्जननी वात्सल्यमयी मां* है । अहा ! कैसा मधुर मां का प्यार है ? ओह ! ऐसी समर्थ वैभव पूर्ण मां के होते हुये चिन्ता कैसी ? मां को प्रसन्न करो और त्रिलोकविजयी कवच धारण कर स्वतन्त्रता, मुक्ति, स्वराज्य प्राप्त करो । यह कैसे हो सकेगा ? शक्ति की आराधना से ।

शक्ति-पूजन ।

सभ्य पाठक ! आज आप लोग शक्ति के दिव्य—पथ का चाहे जितना विकृत स्वरूप देख रहे हों परन्तु उससे इस मूल केवल सत्य सिद्धान्त में दोष नहीं आ सकता । आज आचार्यों के अभाव में साधारण जनता केवल उसके वाह्य स्वरूप को ही देख पाती है और वह भी केवल रूढ़ि मात्र । इस ही कारण से जनता की आन्तरिक जीवन जागृति तथा मनोवल का विकास नहीं हो पाता ।

एक समय था कि 'गीता' के विषय में जन साधारण की धारणा थी कि 'गीता' संसार से वाहर के वैरागी लोगों के पढ़ने की पुस्तक है । परन्तु आज 'गीता' कर्त्तव्य पथ का विमल ज्ञान देने वाली सामाजिक, नैतिक तथा धार्मिक एक अद्वितीय पुस्तक मानी जा रही है । यह ही बात शक्ति-ग्रन्थ की "सप्तशती" की है । वह आज एक साम्प्रदायिक ग्रन्थ समझा जा रहा है और एक जातिविशेष के उदर-पोषण की पुस्तक । परन्तु यह घोर अज्ञता वैषयिक-ज्ञान की हीनता मानव जीवन की अविकसित तथा संकुचित दृष्टि के अतिरिक्त और कुछ नहीं । शक्ति-ग्रन्थ संसार को दिव्य सन्देश दे रहा है कि इस ओर आओ और ऐहिक या पारलौकिक जैसी चाहो 'विजय प्राप्त करो । शक्ति की आराधना में सबसे प्रथम शक्ति आराधक के लिये है—

कवच ।

अब हम कवच के रहस्य में प्रवेश करने का प्रयत्न करेंगे । युद्ध-भूमि में जाते समय वीर लोग जो अपने शरीर पर लोह निर्मित वस्त्र पहिनते हैं वह कवच (ज़र्रह वख़्तर) कहलाता है । यह वाह्य शस्त्रास्त्रों से स्थूल शरीर का रक्षक है। परन्तु शक्ति-पथ का कवच, स्थूल और सूक्ष्म दोनों शरीरका रक्षक होता हुआ भी किसी धातु या प्राकृतिक पदार्थ का बना हुआ नहीं है । वह है सत्य-संकल्पी इच्छा-शक्ति का कवच । यों तो इच्छा सब प्राणियों में विद्यमान है किन्तु उसका यथार्थ प्रादुर्भाव ऐसा नहीं है । यह इच्छा शक्ति ही प्राकृतिक-आपत् प्रहार, तथा आलोक-पथ से भ्रांत करने वाली अयथार्थ-दृष्टि को निवारण करने वाली सम्यक् दर्शिका है। हम इस इच्छा-शक्तिको दो प्रकार से जागृत कर सकते हैं। एक स्वात्माश्रय (Direct) दूसरा माध्यम द्वारा

* या देवी सर्वभूतेषु मातृरूपेण संस्थिता ।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमोनमः ॥
दुर्गा सप्तशती ।

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

(Indirect) पर-आत्माश्रय। * स्वात्माश्रय-अति कठिन दुःसाध्य है। हम इसे साधना की प्रारम्भा-अवस्थाका एक स्वरूप भी कह सकते हैं। परन्तु पर-आत्माश्रय, सरल सुखकर और सुसाध्य है।

इस इच्छा-शक्ति के जाग्रत करने के मार्गों की मूल रङ्ग-भूमिका आधार एक ही है। परन्तु साधकों के लिये भिन्न-स्वरूप में भासता है। जिस प्रकार स्वात्माश्रय इच्छाशक्ति को जागृत करने के लिये व्यक्तित्व 'अहं' को अखण्ड परिपूर्ण शक्ति में लय करनेकी आवश्यकता है उस प्रकार ही पर-आत्माश्रय इच्छा-शक्ति को प्रबुद्ध करने के हेतु भी अपने आपको विस्मृत कर पर-आत्म तत्व ही देखना होता है। एक में "सर्वोऽहं" दूसरे में "सर्वंइदम्" दृष्टि का आधार है।

शक्ति-ग्रंथ में पर आत्माश्रय इच्छा-शक्ति से शरीर मन, बुद्धि प्राण, शरीरस्थ सप्त धातुएं, नेत्र शिर, त्वक् आदि इन्द्रियां तथा पित्तादि दोषों तक को कवच पहिनाया जाता है। शक्तिके नित्य के आराधन में सबसे प्रथम शरीर यन्त्रके प्रत्येक कल पुर्जे को उस महाशक्ति के दिव्य-चरणों में बैठ कर (पर-आत्माश्रय) इच्छा शक्ति से सुरक्षित करना होता है। हमारा 'पर' शब्द से अभिप्राय अपने से भिन्न से है। † अतएव पर-आत्माश्रय इच्छा शक्ति की अधिष्ठात्री देवी का स्वरूप हमें भुला न देना चाहिए। हम शक्ति पथ के विजय पथावलम्बी हैं हमारे इन नेत्रों के सामने महा-शक्ति का स्वरूप सर्वदा रहना चाहिए और वह दिव्य रूप, दर्शनमात्र से ही हमारे रक्त में स्फूर्ति, समूल उत्साह जीवन उमंग शक्ति का सञ्चार करने वाला हो। हमारे विचार में शक्ति ग्रंथ में वर्णित निम्नाङ्कित स्वरूप उस महाशक्ति का अद्वितीय अपरा-स्वरूप है। उस अनन्त-शक्ति की इस परमोज्ज्वल दिव्य मूर्ति का ध्यानस्थ होकर दर्शन कीजिये। कैसा अद्भुत है:—

† 'विद्युद्दामसमप्रभां मृगपतिस्कन्धस्थितां भीषणां।
कन्याभिः करवाल खेटविलसद् हस्ताभिरासेविताम्॥
हस्तैश्चक्रवरालिखेटविशिखां चापं गुणं तर्जनीम्।
बिभ्राणामनलात्मिकां शशिधरां दुर्गां त्रिनेत्रां भजे॥

विजय का मूल मन्त्र।

श्री शक्ति ग्रन्थ में शक्ति स्वरूप, शक्ति गौरव तथा शक्ति स्तव के अतिरिक्त देवासुर-संग्राम नामक रहस्यका वर्णन किया गया है। इसमें ही लौकिक व पारलौकिक विजय का मूल-मन्त्र पौराणिक-भाषा में सन्निहित किया गया है। पाठक आओ! इस रहस्य को समझें और मनोनीत विजय प्राप्त करें।

---

* एक मनुष्य के घर में भयानक सर्प रहता है और वह उससे सर्वदा शङ्कित रहता है। एकबार उसको कोई महात्मा एक यन्त्र देते हैं और कहते हैं कि तुम इसको गले में बांधलो तुम्हारे पास कहीं भी सर्प न आसकेगा वह आदेशानुसार अटल विश्वास पूर्वक ऐसा ज्ञानालोक पूर्वक करता है इस विश्वास में निहित जो शक्ति है हम उसको ही पर-आत्माश्रय इच्छा शक्ति कहते हैं। और यदि वह स्वतः अपनी धारणा में (ज्ञानालोक पूर्वक) यह दृढ़ विश्वास रक्खे कि मेरे पास सर्प नहीं आ सकता उसको ही स्वात्माश्रय इच्छा-शक्ति कहते हैं।

* चितिरूपेण या कृत्स्नमेतद् व्याप्य स्थिता जगत्।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः॥
श्री सप्तशती.

† अर्थः—अपने से अभिप्राय-व्यक्तिगत 'अहं' से है

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

जगन्नियन्ता की इस सृष्टि में आसुरी और दैवी दो सम्पत्तियाँ विद्यमान हैं। आसुरी प्रकृति के मनुष्य-स्वार्थ परायण उदर-पोषण रत, इन्द्रिय लोलुप, सांसारिक-विषय रमणशील, मद्यपान रत तथा हिंसा-वृत्ति वाले होते हैं। वे सर्वदा दूसरों की सम्पत्ति पर लार टपकाते हुए पर अधिकार हरण करने के लिये सर्वदा उद्यत रहते हैं। परन्तु दैवी सम्पत्ति के मानव इससे विरुद्ध प्रकृति के होते हैं। यह प्रकृति विरोध दोनों में परस्पर के युद्ध का कारण होता है। यह युद्ध दो प्रकार का है। एक समष्टि रूपसे और दूसरा व्यष्टिरूप से। संसारमें समष्टिरूप देवासुर संग्राम सर्वदा होता रहता है। प्रत्येक मानव के-अन्तर जगत् में, सत्य और असत्य का इन्द्रिय वश्यता और आत्म स्वातन्त्र्य का, मोह और विश्व-प्रेम का विषयासक्ति और अनासक्ति का राग और विराग का क्रोध और क्षमा का स्वार्थ और परार्थ का मैं और तू का स्वतंत्रता और विधि--विहीन स्वतन्त्रता विशृङ्खलता का, हिंसा और अहिंसा का ज्ञान और अज्ञान का उसकी (मनुष्य की) मनोवृत्तियों के-विकासानुकूल युद्ध होता रहता है इसमें एक गुण दैविक है और दूसरा आसुरिक। इस आभ्यन्तर के युद्ध की विजय पर ही वाह्य संसार में आसुरिक या दैविक शासन होता है। यह वाह्याचरण ही व्यष्टि रूप युद्ध का कारण होता है। दैविक-प्रकृतिका समाज चाहता है कि संसार से असुर राज्य विनष्ट होकर देव राज्यकी स्थापना हो उसका विस्तार हो। संसार में निर्मल सुख वीर योग्या शान्ति, सत्य धारण विश्व-प्रेम, अहिंसा और पवित्रता आदि गुणों का आधिपत्य हो। परन्तु आसुरी प्रकृति वालों की अभिलाषा इसके विरुद्ध होती है। यह युद्ध आज भी विद्यमान है। और देव समाज अपने अधिकार से च्युत है। आज संसार में हिंसा वृत्ति, स्वार्थपरायणता अनाचार, मद्यपान, कामान्धता, मांसाहार आदि बातों का आधिक्य है। आज मद्यपी सभ्य है स्वार्थसाधक बुद्धिमान् है कामेच्छा को उन्नत रूप देकर लिखने वाला शास्त्रज्ञ है। प्रजा का सर्वस्व हरण करके अपने सुख के लिये कोष भरने वाला राजा है। प्रजा जिस प्रकार रक्तहीन होकर अस्थि पञ्जर मात्र रह जाय वही राजनीति है। क्यों ? इस ही लिये कि आसुरिक भावों की जय है और असुर-राज्य है। बर्तमान भारतीय अहिंसामय युद्ध आसुरिक बल के प्रतिकूल ही आरम्भ हुआ है। भारत की विद्यमान परिस्थिति के लिये यह उपयुक्त कहा जा सकता है। परन्तु "विजय" उस अनन्त शक्ति की अधिष्ठात्री देवी दुर्गा माँ की प्रसन्नता से ही प्राप्त होगी। जब तक कि भारत उस महामहिम शक्ति की प्रेरणा में नहीं आएगा तब तक गताधिकार की प्राप्ति असम्भव है। तब इसका उपाय क्या है ? क्या हमें अमेरिका और रूस आदि की स्वतन्त्रता प्राप्ति के साधनों का अनुकरण करना चाहिये ? नहीं २। वह अन्तर सत्य-शून्य हैं। हमारी और उनकी स्वतन्त्रता में आकाश पाताल का अन्तर है। हमारी स्वतन्त्रता प्राप्ति का लक्ष्य है विश्व प्रेम, अन्तर साम्यवाद, परमार्थ प्राप्ति, निर्भय सुख का विस्तार। परन्तु उनकी स्वतन्त्रता का अर्थ है व्यक्तिगत (एक देशीय) प्रेम, वाह्य का कृत्रिम समता, स्वार्थसाधन। तब हमारा और उनका एक साधन कैसा ? अतएव भारतीय

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

आदर्श की पवित्र रङ्गभूमि का प्रतिष्ठित अभिनय है—एक * हृदय होकर (संगठित होकर) उस अनन्त सुगुप्त शक्ति का प्रादुर्भाव करने के लिये आन्तरिक प्रार्थना और सुविवेक क्रियात्मक शक्ति-पूजा का प्रचार।

तब आओ! भारत की पावन-भूमि की अधिष्ठात्री देवी विश्व-विजयिनी शक्ति जगज्जननी दुर्गा माँ को आराध्य बनाकर उसके "पर" शक्ति स्वरूप को प्राप्त करें। पुनः मुक्ति स्वरूपा मां स्वतः हमें ऐहिक व पारलौकिक स्वतन्त्रता प्रदान करेंगी। निःसंशय शक्तिग्रन्थ इस का साक्षी है।

"तया विसृज्यते विश्वं जगदेतच्चराचरम्।
सैषा प्रसन्ना वरदा नृणां भवति मुक्तये॥"

* हृताधिकारास्त्रिदशास्ताभ्यां सर्वे निराकृताः।
महासुराभ्यां तां देवीं संस्मरन्त्यपराजिताम्॥
(श्री सप्तशती)

खास 'ब्रा० स०' के "पुराणाङ्क" के लिये

स्वर्ण संकलन।

अग्नि-पुराण में अलंकार-शास्त्र।

('माधुरी')

(लेखक—श्री पं० बटुकनाथ शर्मा)

हमारे यहां अठारह पुराण और उतने ही उपपुराण हैं। परन्तु उन पुराणों और उपपुराणों का अध्ययन और अनुशीलन करने वाले आज कल बहुत कम हैं। उनके हरएक मर्म और तत्त्व को न जानने के कारण उन्हें पढ़े या सुने बिना ही, बहुत से लोगों की यह धारणा हो गई है, कि पुराण आदिमें केवल असम्भव गप्पें ही भरी पड़ी हैं। यह धारणा कहीं २ तो इतनी प्रबल देख पड़ती है कि लोग किसी भी निर्मूल बात को सुनकर 'यह तो पुराणों की कथा है' कह बैठते और पुराणों को बदनाम करते हैं। साधारण लोगों की कौन कहे बड़े २ प्राच्य विद्या विशारद भी शिला लेखोंसे टकराते हुये इस विषय के ज्ञान से बिलकुल कोरे नजर आते हैं। मेरा मतलब यह नहीं है कि इस विषयमें कुछ लिखा ही नहीं गया। दो एक विद्वानों ने इस सम्बन्ध में अच्छी खोज और परिश्रम किया है। विद्वद्वर चिन्तामणि विनायक जी वैद्य और पर्जिटर साहब ने पुराण सम्बन्धी खोजमें बड़ा काम किया है। वैद्य जी से तो हिन्दी संसार भी परिचित हो चुका है। उनकी 'महाभारत-उपसंहार' नामक पुस्तकका 'महाभारत मीमांसा' नामक हिंदी अनुवाद अभी प्रकाशित हुआ है। पर्जिटर साहब की 'Dynasties of Ali age' नाम की पुस्तक प्रसिद्ध ही है। आपकी दूसरी पुस्तक 'Ancient Indian Tradition' भी थोड़े दिन हुए निकली है। पुराणों के आधार पर उन्होंने बहुत सी ऐतिहासिक बातें खोज निकाली हैं। दोनों महाशयों का ध्यान अधिक करके ऐतिहासिक खोजमें ही लगा था। उनके विषयों

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

पर पूर्ण रूपसे ध्यान देनें का न उनको अवकाश था न प्रयोजन। किन्तु विषय समझना भी तो आवश्यक है। इसी उद्देश्यको आगे रखकर एक पुराण के एक विषय पर कुछ लिखने के लिये आज मैंने लेखनी उठाई है।

मुख्य विषय पर आने के पहले पुराणों से सम्बन्ध रखने वाली कुछ साधारण बातें समझ लेना अच्छा होगा।

वेदों को समझना जब कठिन होने लगा, उनके बहुत से विषय जब गूढ़ रहस्यों का रूप धारण करने लगे, तब ऐसे ग्रन्थोंकी आवश्यकता हुई जो उन विषयों को विस्तृत रूप से समझा दें। वेदों की भाषा बोलचाल की भाषा से भिन्न हुई। उसके समझने वालों की संख्या कम होने लगी। उन समझने वालों में भी मत-भेद होने लगा। तब ज्ञान का द्वार बन्द सा होने लगा। ऐसे समय में ऐसे ग्रन्थों की आवश्यकता हुई जो वैदिक ग्रन्थों को लुप्त होने से बचावें। भाषा बदल गई थी, समाज के विचार और आचार भी परिवर्तित हो रहे थे। इसी लिये तदनुरूप ग्रन्थ बनाना ही समुचित समझा गया। ऐसे अवसर पर उक्त आवश्यकता की पूर्त्ति के लिये, जो ग्रन्थ लिखे गए उन्हींका नाम पुराण है। वे वैदिक धर्म का उच्छेद करने के लिये नहीं, उसको पुष्ट करने के लिये रचे गये थे महाभारत में स्पष्ट लिखा है—

"इतिहासपुराणाभ्यां वेदं समुपबृंहयेत्।
बिभेत्यल्पश्रुताद्वेदो मामयं प्रहरिष्यति॥"

पुराण शब्द बहुत प्राचीन है। वेदके ब्राह्मण ग्रन्थों में भी इसका प्रयोग मिलता है। पुराणों की प्रामाणिकता तो प्राचीन समय में निर्विवाद थी। बाल की खाल निकालने वाले बड़े २ दार्शनिक भी अपने मत को पुष्ट करने के लिये 'इति पौराणिकाः' कह कर इन्हीं की शरण आते थे। इतना ही नहीं पुराणों को चौदह विद्याओं में स्थान दिया गया, वे वेद और धर्म के स्थान कहे गए—

"पुराणन्यायमीमांसा धर्मशास्त्रांगमिश्रिताः,
वेदाः स्थानानि विद्यानां धर्मस्य च चतुर्दश।"

पुराण कब निर्मित हुए, यह कहना मुझ अल्पबुद्धि के लिये बहुत ही कठिन है। संस्कृत साहित्य समय निरूपण में मत भेद बना ही रहेगा, उसका सर्ववादिसम्मत होना कदापि सम्भव नहीं होता। पर्जिटर साहब का कहना है कि वर्त्तमान पुराण पालि-भाषामें रचित बौद्ध ग्रन्थों के संस्कृत रूप हैं, और शायद उन पाली ग्रन्थों के मूलाधार कोई लुप्त संस्कृत ग्रन्थ रहे हों। पर्जिटर साहबका उक्त अनुमान बहुत अंशों में ठीक भी हो सकता है। यदि वह ठीक ठहरा, तो यह मानना ही पड़ेगा कि ये पुराण और उप पुराण बौद्ध काल के पीछे लिखे गये हैं। किन्तु इसी आधार पर यह कहना, कि इनकी रचना गुप्त काल के पीछे हुई है, युक्तिसंगत नहीं जान पड़ता। जिस समाज का चित्र इन पुराणों में मिलता है वह अवश्य ही हज़रत ईसा के कई शताब्दी पहिले का जान जान पड़ता है। अस्तु यहां इस विषय पर अधिक कहना अनावश्यक और अप्रासंगिक भी होगा। समय का झगड़ा छोड़कर अब यह देखना चाहिये कि उनमें क्या क्या लिखा है। उनमें क्या २ लिखा है, यह न कहकर 'उनमें क्या नहीं लिखा है' यही कहना

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

उचित होगा। महाभारत की तो प्रतिज्ञा ही है।

"यदिहास्ति तदन्यत्र यन्नेहास्ति न तत् क्वचित्।"

मुझे तो पुराण पुराने समयकी Reference Book मालूम पड़ते हैं। आज कल कितनी ही इनसाईक्लोपीडिया या विश्वकोष देखने में आते हैं, जिनमें हरएक विषय पर लेख लिखे मिलते हैं उसी तरह पुराणों में भी उस समय के उपयोगी विषयों का पूरा २ वर्णन मिलता है। पुराणों में भी दो पुराण विशेष करके उल्लेख के योग्य हैं, एक भागवत और दूसरा अग्निपुराण। भागवत को तो अच्छी तरह 'दर्शन और धर्मों का विश्वकोष या इन्साइक्लोपीडिया कह सकते हैं। इसी तरह अग्निपुराण को (Encyclopaedi a of Secular loarngs) कह सकते हैं।

अग्निपुराण पढ़ते समय मुझे कुछ 'ऐडीशन' के 'स्पैक्टेटर' का ख़याल होने लगा। उसमें उन्होंने लिखा है कि "Ploto" ने विद्यार्थियों को मृत्युलोक में पहुँचाया"। और उन्होंने उन उन विद्याओं को घर घर पहुँचाया" यही बात यहां भी, उससे भी अधिक प्रामाणिकता के साथ कही जा सकती है। जो बातें वेदों वेदाङ्गों और शास्त्रोंमें दबी पड़ी थीं, उनको पुराणकर्त्ताने सर्वसाधारण तक पहुँचाने का प्रयत्न किया।

अग्निपुराण में बहुत से विषय हैं। उनमें से मुझे केवल एक विषय-अलंकार शास्त्र-देखना है उक्त पुराण में ग्यारह अध्यायों में ३३६ वें अध्याय से ३४६ वें अध्याय तक, यह विषय कहा गया है। यहां पर अलंकार शास्त्रकी भी दो एक बातें कह देना आवश्यक मालूम पड़ता है।

अलंकार शास्त्र भी एक प्राचीन और प्रधान विषय है। राजशेखर कवि ने अपने "काव्य मीमांसा" ग्रन्थ में इसको पंद्रहवीं विद्या और वेद का सातवां अङ्ग कहा है, अर्थात् इसे विद्या और वेदाङ्गवत् माना है। संस्कृत के अलंकार ग्रंथोंका महत्व हिन्दी के अलकार ग्रन्थों से नहीं समझा जा सकता। थोड़े दिन हुये, एक हिन्दी के दिग्गज पण्डित से मेरी भेंट हुई। वह तो अलंकार के नाम ही से चिड़ते हैं। बात चलने पर उन्हों ने यहां तक कह दिया कि "मेरी चले, तो मैं इन ग्रन्थों को गङ्गा जी में बहा दूं।" उनका चिढ़ना कुछ कुछ ठीक भी है; क्योंकि हिन्दी आलंकारिक अपनी सब शक्ति बहुत करके नायक नायिका भेद ही में लगा देते थे। किन्तु संस्कृत का अलंकार शास्त्र, सच पूछा जाय, तो एक 'दर्शन' है। इसको रस दर्शन या सौन्दर्यविज्ञान कह सकते हैं। काव्य—मीमांसा और नाट्य शास्त्र में इसकी उत्पत्ति के बारे में बहुत कुछ कहा गया है। इसके आदि-आचार्य भरतमुनि हैं। इस समय जितने ग्रंथ मिलते हैं उनमें नाट्य शास्त्र और अग्नि पुराण को छोड़कर भामह का काव्यालंकार ही सबसे प्राचीन है। अग्निपुराण का समय निश्चित करना कठिन काम है। किन्तु इसमें जिस रीति से अलंकार शास्त्र का प्रतिपादन हुआ है, उससे इसकी प्राचीनता साफ झलकती है। अब आगे मैं अग्निपुराण के आलंकारिक विषय को उठाकर उस पर विचार करता हूँ।

प्रथम वाक्य जिसमें इस विषय का श्रीगणेश हुआ है, यह है,-"काव्यस्य नाटकादेश्च अलंकारान् वदाम्यथ," जहां तक समझ पड़ता है यहां अलंकार शब्द का प्रयोग वामनाभिमत सौन्दर्य के अर्थ में ही किया गया है। अन्यथा अलंकार शब्द अनुपयुक्त होगा। 'अलंकार' शब्द

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

के दो अर्थ हैं, एक "अलंक्रियते अनेन" इस व्युत्पत्तिसे अलंकारोंके लिये (Figures of Speech) शब्द और दूसरा "अलंक्रियते-इति" इस व्युत्पत्ति से सिद्ध होकर सौन्दर्य के लिये Beauty शब्द प्रयुक्त होता है। इसी प्रसंग में एक बात यह याद रखने के लायक है कि बड़े बड़े आलंकारिकों ने यही अर्थ समझ कर इस शास्त्रका नाम अलंकार शास्त्र रक्खा है। इससे अलंकार शास्त्र करीब करीब (Aesthetu) के अर्थ में आ जाता है।

आगे काव्य की परिभाषा भी बड़े महत्वकी है। वह है- 'इष्टार्थव्यवच्छिन्ना पदावली काव्यम्।" काव्य की जितनी परिभाषायें आजतक हुई हैं वे तीन श्रेणियों में रक्खी जा सकती हैं। पहली वे हैं, जिनमें शब्द और अर्थ दोनों पर जोर दिया गया है। दूसरी वे हैं जो काव्य को वाक्य-रूप बतलाती हैं। तीसरी वे हैं जिनमें पद ही पर अधिक जोर दिया गया है। दूसरी और तीसरी श्रेणी की परिभाषाओं में अन्तर केवल इतना ही है कि एक योग्यता आदि से युक्त पद समूह को काव्य कहती है और दूसरी केवल पद-समूह को। अग्निपुराण की ऊपर दी हुई परिभाषा तीसरी श्रेणी के अन्तर्गत होती है इसी श्रेणी में महाकवि दण्डी और पण्डितराज जगन्नाथ की परिभाषायें भी आ जाती हैं। दंडी तो अपने काव्यादर्श में बिलकुल यही परिभाषा देते हैं। पण्डितराज जगन्नाथ अपने रस गंगाधर ग्रन्थ में जो परिभाषा देते हैं वह ठीक इसी की छाया मालुम पड़ती है। वह काव्य को 'रमणीयार्थ प्रतिपादकः शब्दः काव्यम्' कहते हैं।

परिभाषा विचार के अनन्तर काव्य विभाग भी ध्यान देने योग्य है। अद्यावधि जहां तक देखने में आया है काव्यों के विभाग के तीन क्रम हैं।

(१) पहिले क्रममें नाटक ही पूर्ण समझा जाता है। नाटक में चार अंग माने जाते हैं। वे चार अंग हैं—पाठ, गीत, अभिनय और रस। इस क्रम के अनुसार जो पाठ कहा जाता है, वही गद्य-पद्यमय काव्य है। इस मत के आचार्य भरत मुनि हैं।

(२) दूसरे क्रम के अनुसार काव्य के तीन भेद किये जाते हैं। गद्य, पद्य, और मिश्र। मिश्र में ही नाटक आदि रख दिये जाते हैं। इस मत को दण्डि आदि आचार्यों ने माना है।

(३) तीसरे क्रम में काव्य पहिले दो भागों में विभक्त किया जाता है। ये भाग हैं दृश्य और काव्य। दृश्य विभाग में नाटकके सब भेद रख दिये जाते हैं। इस विभाग विचार के बाद अग्निपुराणान्तर्गत काव्य विभाग देखने से साफ मालूम होता है कि अग्निपुराण का काव्य विभाग हमारे द्वितीय क्रम के अन्तर्गत होता है। यहां कहाहै–

"गद्यं पद्यं च मिश्रं च काव्यादि त्रिविधं मतम्।"

(अ० ३३६ श्लोक ८)

जैसा हम ऊपर कह चुके हैं यही क्रम दण्डी ने भी अपने काव्यादर्श में माना है समझ पड़ता है इस क्रम का आरम्भ अग्निपुराण ही से हुआ, और पीछे के आचार्यों ने उसे माना। अग्निपुराण में यह विषय अवश्य दण्डी, भामह-आदि के पहिले का है। अग्नि पुराण में भरतमुनि का नाम छोड़कर और किसी का नाम नहीं मिलता।

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

इसके विपरीत भामह और दंडी के ग्रंथों से कितने ही आलंकारिकों की अपूर्व स्थिति मालूम होती है। यहां गद्य काव्य का अपूर्व विभाग मिलता है—

"आख्यायिकाकथाखण्ड कथा परिकथा तथा;
कथानिकेति मन्यन्ते गद्यकाव्यञ्च पञ्चधा।"

ये पांच विभाग दंडी और भामह के ग्रंथों में नहीं मिलते। वे लोग गद्य काव्य के दो ही भेद मानते हैं—कथा और आख्यायिका। वल्कि दंडी तो उन दोनों को भी एक करना चाहते हैं। दंडी और भामह ने कितने ही श्लोक अग्निपुराण से अविकल, जैसे के तैसे, उठा लिये हैं। यहां जो रस का निरूपण मिलता है, वह विलकुल पीछे के ध्वनिवादियों का नहीं है। दंडी ने तो रस का नाम ही नहीं लिया। इन सब वातों से स्पष्ट विदित होता है कि अग्निपुराण का काल दंडी से वहुत पहले है। दशरूपक में नाटक के दश ही विभाग माने गये हैं; किन्तु यहां २७ भेद किये गये हैं। ये ही सत्ताइस भेद रूपक और उपरूपक नाम के दो वर्गों में रखकर, विश्वनाथ कविराज ने अपने साहित्यदर्पण में एक और भेद वढ़ाकर दिखलाया है। उनके नाम ये हैं—

"नाटकं सप्रकरणं डिम ईहामृगोऽपि वा;
ज्ञेयं समवकारश्च भवेत् प्रहसनं तथा।
व्यायोग भाणवीथ्यङ्कत्रोटकान्यथ नाटिका;
सट्टकं शिल्पकः कर्णा एको दुर्मल्लिका तथा।
प्रस्थानं भाणिका भाणी गोष्ठी हल्ली शकानिच;
काव्यं श्रीगदितं नाट्यरासकंरासकं तथा।
उल्लाप्यकं प्रेक्षणं च सप्तविंशतिरेव तत्।"

अग्निपुराण का रस-निरूपण भी विलक्षण ही है। यहां का यह एक वाक्य "वाग्वैदग्ध्य प्रधानेऽपि रसएवात्र जीवितम्।" कई प्रधान ग्रन्थों में मिलता है। यह उदाहरण ही इसका प्रमाण है कि वे लोग भी अग्निपुराण को रस-विषय का प्रामाणिक ग्रन्थ मानते थे। किन्तु यहां जिस रीति से रस की उत्पत्ति कही गई है वह निराली ही मालूम पड़ती है। काव्यप्रकाश में जिस तरह रसवाद पर मतभेद दिखाया गया है, उससे साफ मालूम पड़ता है कि रस सभी मानते थे, केवल उसकी उत्पत्ति और आस्वादन के प्रकार में मतभेद था। विभाव, अनुभाव और व्यभिचारियों के संयोग से इसकी निष्पत्ति होती है, यह भरत का कहना सभी आचार्यों को माननीय था; किन्तु यह संयोग कैसा है, और कैसे होता है, ये ही झगड़े की वातें थीं। इन्हीं सब वातों का विचार काव्य प्रकाश, साहित्य-दर्पण और रसगंगाधर में किया गया है। किन्तु इस वात का दार्शनिक समझौता, एक आधुनिक 'साहित्यसार' को कुछ अंशों में छोड़कर, अग्निपुराण के समान किसी भी प्रकाशित ग्रन्थ में पूर्णरूप से नहीं मिलता। अग्निपुराण में इस विषय का निरूपण इस प्रकार है—

"अक्षरं परमं ब्रह्म सनातनमजं विभुम्;
वेदान्तेषु वदन्त्येकं चैतन्यंज्योतिरीश्वरम्।
आनन्द सहजस्तस्य व्यज्यते स कदाचन;
व्यक्तिः सा तस्य चैतन्य चमत्काररसाह्वया।
आद्यस्तस्य विकारो यः सोऽहंकार इति स्मृतः;
ततोऽभिमानस्तत्रेदं समाप्तं भुवनत्रयम्।
अभिमानाद्रतिः सा च परिपोषमुपेयुषी;
व्यभिचार्यादि सामान्याच्छृंगार इति गीयते।

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

तद्भेदाः काममितरे हास्याद्या अप्यनेकशः,
स्वस्वस्थादि विशेषोत्थपरिघं.षस्वलक्षणाः।
सत्त्वादिगुणसन्तानाज्जायन्ते परमात्मनः;
रागाद्भवति शृङ्गारो रौद्रस्तैचण्यात् प्रजायते।
वीरोऽवष्टम्भजः सङ्कोचभूर्बीभत्स इष्यते;
शृङ्गाराज्जायते हासो रौद्रात्तु करुणो रसः।
वीराच्चाद्भुतनिष्पत्तिः स्याद्बीभत्साद्भयानकः;
शृङ्गारहास्यकरुणारौद्रवीरभयानकाः।
वीभत्साद्भुतशान्ताख्यः स्वभावाच्चतुरो रसाः॥

इन श्लोकों ने ही बहुत सा स्थान ले लिया, अब इनकी व्याख्या करके मैं और स्थान लेना नहीं चाहता। किन्तु दो एक बातें फिर भी कह देना आवश्यक है। अन्तिम भाग के बारे में कुछ कहने की आवश्यकता नहीं, क्योंकि भरतमुनि ने भी चार ही रसों से शेष चार रसों की उत्पत्ति बतलाई है। यहां ध्यान देने लायक बात यह है कि आनन्दस्वरूप परब्रह्म की अभिव्यक्ति ही का नाम चमत्कार या रस है। यही बात 'रसो वैसः' इत्यादि उपनिषद्वाक्यों से भी ध्वनित होती है।

उसका पहला विकार अहंकार है। अहंकार से अभिमान और उससे रति उत्पन्न होती है। वह पुष्ट होकर शृङ्गार-रस का रूप धारण करती है। यही बात आधुनिक मानसशास्त्रसे भी थोड़े से अंश में दिखाई जा सकती है।

जहां Consciousness (चेतना) का Emotion (भाव) से और Emotion का Sentiment (रस) से संबन्ध और भेद दिखाया जाता है, वहीं इस बात का भी अच्छी तरह बिचार होसकता या होता है। आदि-रस किस रस को मानें, बड़ी बिकट समस्या है। काश्मीर के शैव मतावलंबी आलंकारिक गण शान्त रस ही को आदि-रस मानते हैं। * शृंगार को आदि-रस मानने वाले ग्रन्थों में अग्निपुराण ही का मुख्य स्थान है। इस के अनन्तर भोजराज ने भी यही मत माना है। इस मत को अच्छा तरह दिखाने के लिये भोजराज ने 'शृंगार प्रकाश' नाम का एक विराट् ग्रंथ लिखा है। यह ग्रंथ लगभग तीस हजार श्लोकों का है। अभी तक छप नहीं सका। मदरास-सरकार के पुस्तकालय में इस की हस्त-लिखित प्रति मौजूद है। उसका हाल और विषय पण्डितवर कुप्प स्वामी की रिपोर्ट तथा अन्य ग्रन्थोंमें उद्धृत उसके वाक्योंसे मालूम होता है। जान पड़ता है, करुणा-रसको भी आदि-रस मानने वाले कुछ आचार्य थे। भवभूति का 'एको रसः करुण एव' भी इसी अनुमान को पुष्ट करता है। अग्नि पुराण में इसके आगे के अध्यायों में अंग प्रत्यंगों के साथ रीति, वृत्ति, नृत्य, अभिनय आदिका वर्णन किया गया है इनमें से बहुत सी बातें इस समय अच्छी तरह समझ में नहीं आतीं। कम से कम इस लेखक को पूर्ण-रूप से समझ नहीं पड़ीं।

अलंकार (Figures of Speech) तीन श्रेणियोंमें विभक्त किए गए हैं, शब्दालंकार, अर्थालंकार, और शब्दार्थालंकार। शब्दालंकार, के अध्याय में अनुप्रास, यमक, चित्र और बंध बड़े विस्तार के साथ दिखलाये गए हैं। प्राचीन अलं-

* श्री बा० भगवानदास जी की 'Seiance of Emotions' नामकी पुस्तक से भी करीब २ यही मत व्यक्त होता है। किन्तु अन्य आचार्यों को यह मत स्वीकृत नहीं। वे शृंगार को ही आदि रस मानते हैं।

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

कारिकों की यही विशेषता थी कि वे शब्दालंकार को स्थान देने में जरा भी कमी नहीं करते थे। दंडी के 'काव्यादर्श' में भी शब्दालंकारों का अच्छा विस्तार है। भोजराज का 'सरस्वती कंठाभरण' तो इनका खज़ाना ही है। नवीन आलंकारिक लोग इस पर इतना ध्यान नहीं देते बल्कि 'काव्यस्य गडुभूतम्' कहते हैं। अग्निपुराण में यद्यपि शब्दालंकारोंका अच्छी तरह वर्णन किया गया है, तथापि अर्थालंकार का महत्त्व नहीं भुलाया गया।

यहां पर साफ लिखा है:—

"तं बिना शब्दसौन्दर्य-मपि नास्ति मनोहरम्;
अर्थालंकाररहिता विधवैव सरस्वती।"

अर्थालंकार के आठ भेद कहे गये हैं—

"स्वरूपमथ सादृश्यमुत्प्रेक्षातिशयावपि;
विभावना विरोधश्च हेतुश्च सम मष्टधा।"

इन भेदों के बहुत से प्रभेद किये गए हैं। सादृश्य में उपमा कहने के समय जो भेद कहे गए हैं, वे दण्डी की उपमाओं का मूल मालुम पड़ते हैं। कारक और ज्ञापक हेतु कहकर जो यहां हेतु अलंकार दो तरह का माना गया है उसका खंडन भामह ने अपने काव्यालंकारमें किया है। भामह कहते हैं।

"हेतुश्च सूक्ष्मो लेशोऽथनालंकारतयामतः।"

इससे साफ मालुम देता है कि भामहके पहले और कोई इस तरह का ग्रन्थ नहीं मिलता। इस लिये कह सकते हैं कि वह अग्निपुराण ही के मत का खण्डन करते हैं। एक और बात यहां ध्यान देने योग्य है। भरतका नाट्य-शास्त्र ही इस विषय का प्रथम उपलब्ध ग्रन्थ है उसमें केवल चार ही अलंकार माने गये हैं। वे चार उपमा, रूपक, दीपक और यमक हैं। भामह और दंडी के ग्रन्थों में इनकी संख्या कहीं अधिक होगई है। किन्तु अग्नि पुराण में जैसा हम ऊपर कह चुके हैं, आठ अलंकारों के नाम दिये गये हैं। इससे यह अनुमान होसकता है कि यह वर्णन भरत और भामह के बीच का होगा।—

शब्दार्थालंकार और भी अधिक महत्त्वका है। इस अध्याय से त्रिविध शब्द-शक्ति का पुराना इतिहास मिलता है। शब्दार्थालङ्कार छः तरह के माने गये हैं:-

"प्रशस्ति कान्तिरौचित्यं संक्षेपोयावदर्थता,
अभिव्यक्तिरिति व्यक्तं षड् भेदास्तस्य जागृतिः।

इन छः भेदों में जो अभिव्यक्ति नाम का भेद है, उसके भी दो भेद माने गये हैं। श्रुति और आक्षेप। श्रुति भी दो तरह की है। मुख्या और औपचारिकी। मुख्या का दूसरा नाम अविद्या और औपचारिकी का लक्षण है। आक्षेप ही पीछे ध्वनि के नाम से प्रसिद्ध हुआ। नवीन आलंकारिकों के मत से ध्वनि ही काव्य की आत्मा है। किन्तु यहां पर अलंकारों में रक्खी गई है। इससे यह स्पष्ट है कि इस मत के अनुसार ध्वनि से रस का कुछ विशेष सम्बन्ध नहीं है।

यह इस बात का एक बड़ा भारी उदाहरण है, कि किसी विषय पर मनुष्यों का मत कितना बदल सकता है। काव्य में चमत्कार Chorm of Pcetry सभी मानते आये हैं, किन्तु वह चमत्कार कैसे होता है, इस पर मतों में बहुत कुछ हेर फेर होता आया है। पाश्चात्य देशों में भी Critic:sm पर कुछ साहित्य नहीं लिखा गया है। किन्तु अभी तक "काव्य—चमत्कार" की समस्या हल नहीं हुई। साधारण बुद्धि से कहा

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

जा सकता है कि आनन्दवर्द्धनाचार्य ने ध्वनिवाद का आविष्कार करके जैसा इस समस्या का उत्तर दिया है, वैसा और किसी ने, किसी देश में, आज तक नहीं दिया।

अग्निपुराण का गुण-विवेचन भी निराले ही ढङ्ग का है। पहिले गुणों के दो विभाग किये गए हैं सामान्य और विशेष। विशेष पर अधिक नहीं कहा जा सकता; क्योंकि वह अनन्त है। सामान्य के तीन भेद हैं-शब्दगत-अर्थगत और उभय गत। शब्दगत गुण सात हैं-

"श्लेषोलालित्यगाम्भीर्य-सौकुमार्यमुदारता।
सत्येवयौगिकीचेति गुणाः शब्दस्य सप्तधा॥"

अर्थगत गुण छः हैं-

"माधुर्यसाम्बिधानञ्च कोमलत्वमुदारता।
प्रौढिः सामायिकत्वं च तद्भेदाः षट् चकासति।"

उभयगत गुण छः हैं-

"तस्यप्रसादः सौभाग्यं यथासंख्यं प्रशस्तता;
पाको राग इति प्राज्ञैः षट्प्रपञ्चविपश्चिताः।"

आलंकारिक ग्रन्थों में बहुत करके गुण-विभाग करने के दो ढङ्ग हैं। पहले ढंग के अनुसार वे दस माने जाते हैं। इस ढंग के सबसे पहिले आचार्य भरतमुनि हैं। दूसरे ढंग के अनुसार वे तीन माने जाते हैं। माधुर्य, ओज, और प्रसाद इन्हीं तीनों के अन्तर्गत वे सब दसों गुण आ जाते हैं। पहिले ढंग को दण्डी ने कुछ हेर फेर करके, वामन ने तथा अन्य कितने ही आलंकारिकों ने माना है। दूसरे ढंग का सबसे पहिले भामह के काव्यालंकार में पता लगता है। आधुनिक आलंकारिक मम्मट, विश्वनाथ आदि यही मत मानते हैं।

अग्निपुराण का ढंग, जैसा ऊपर दिखाया जा चुका है, इन दोनों से निराला है। भोजराज ने अपने 'सरस्वती कण्ठाभरण' में इस ढंग का कुछ अनुकरण किया है। जहां तक पता चला है और किसी अलंकार ग्रंथ में इस तरह का विभाग नहीं मिलता। किन्तु यदि ठीक तरह से विचार किया जाय, तो यह विभाग जिस ढंग से कहा गया है, वह बहुत ही न्यायसंगत है। किसी भी मत में लेखक को अपने क्रम में सम्बद्ध होने का प्रयत्न करना चाहिये। वाद-विवाद की बातें तो निकलती ही रहती हैं। मेरी समझ में पाश्चात्य काव्यमर्मज्ञ लोग यदि इस विभागको जानें तो अवश्य Logical and Psychologicae कहने में न चूकें। काव्य-दोष-विवेचन में भी यही न्यायानुकूलता झलकती है। आधारानुसार दोषों के तीन भेद किये गये हैं:-वक्तृगत, वाचकगत और वाच्य गत,। वक्ता कवि चार तरह के होते हैं। संदिग्धज्ञान, अविनीत, अज्ञ और ज्ञाता। ये ही भेद यहां विलक्षण हैं। वाचकगत और वाच्यगत करीब-करीब आधुनिक भेदों से मिलते हैं।

दोष विभाग के दो ढंग बहुत करके देखने में आते हैं—प्राचीन और आधुनिक। प्राचीन लोग स्थूल रूप से दस दोष कह देते थे। भरत और दंडी इसी श्रेणी के हैं। आधुनिक लोग पदगत पदांशगत, वाक्यगत, अर्थगत और रसगत अनेक दोष मानते हैं। इस ढंग में मम्मट सबसे अधिक प्रसिद्ध हैं—भोजराज का मत इन सभी से विलक्षण है। जान पड़ता है, अग्निपुराण का विभाग ही आधुनिक लोगों के विभाग का पथ-प्रदर्शक हुआ।

अन्त के श्लोक तो बड़े ही महत्व के हैं।

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

कवि का क्या लक्ष्य होना चाहिये, उसको कौन 'दर्शन' मानना चाहियें, इत्यादि बातें बहुत अच्छी तरह थोड़े से शब्दों में कही गयी हैं।

कवि का समुदाचार, धर्म की तरह, दो तरह का होता है—सामान्य और विशेष। सामान्य उसको कहते हैं, जिसके अनुसार सिद्धान्ती लोग चलते हैं—

"सर्वे सिद्धान्तिकायेन सञ्चरन्ति निरत्ययम्,
कियन्त एववा येन सामान्यास्तेन सद्विधा।

और विशेष समुदाचार—

"अस्मिन् सारस्वतीलोके सञ्चरन्तः परस्परम्।
बध्नन्ति व्यतिपश्यन्तो यदि शिष्टः स उच्यते।"

यह विशेष भी दो तरह का है—

"परिग्रहादप्यसतां सतामेवापरिग्रहात्।
भिद्यमानस्य तस्यायं द्वैविध्यमुपगीयते॥"

यहाँ असत् का अर्थ है 'प्रत्यक्षादि प्रमाण से बाधित।' सामान्य समुदाचार कहने के प्रसंग में उस समय कितने ही सिद्धान्त प्रचलित थे। वे भी कहे गये हैं—

तर्कज्ञानं मुनेःकस्य कस्यचित् चण-भंगिका,
मूर्तचैतन्यता कस्य ज्ञानस्य सुप्रकाशता।
अज्ञातस्थूलता शब्दानेकान्तत्वं तथार्हतः,
शैववैष्णवशाक्तेय-सौरसिद्धान्तिनां यतिः,
जगतः कारणं ब्रह्म सांख्यानां सप्रधानकम्।"

यहां सांख्य मत में 'प्रधान' के साथ 'ब्रह्म' भी जगत् का कारण माना जाता है। यह मत बहुत प्राचीन है। नव्य सांख्य में ब्रह्म का कहीं स्थान नहीं है। इससे भी अग्निपुराण की प्राचीनता सिद्ध होती है।

कवि का वास्तविक मत यह होना चाहिये—

"कविभिस्तत् प्रतिग्राह्यं ज्ञानस्य द्योतमानता,
यदेवार्थक्रियाकारि तदेवपरमार्थ सत्।
अज्ञानाज् ज्ञानतस्त्वेकं ब्रह्मैव परमार्थ सत्,
विष्णुः स्वर्गादिहेतुः सः शब्दालंकार रूपवान्।
अपरा च परा विद्या तां ज्ञात्वा मुच्यते भवात्"।

अग्निपुराण का प्रारम्भ भी परा-अपरा विद्याओं के नाम ही से हुआ है विष्णु भगवान् के दो रूप हैं—परा और अपरा विद्या। इन दोनों को जानना विष्णु भगवान् को जानना है। इस ढंग से सब शास्त्रों की गति परमार्थ की ही ओर है, यह दिखाया गया है। संक्षेप में अग्नि पुराण का कुछ ही परिचय इस लेख में दिया गया है। वास्तविक परिचय और उससे उत्पन्न होने वाले अनुमानों का ज्ञान तभी हो सकता है जब सम्पूर्ण ग्रन्थ की पूरी आलोचना की जाय। क्या मैं आशा करूं कि इस साधारण लेखक की प्रार्थना से बड़े लोग भी पुराणों के अध्ययन की ओर झुकेंगे, और वास्तविक ज्ञानवृद्धि में सहायता करेंगे?

पुराण-माहात्म्य।

(सरस्वती)

लेखक—आचार्य श्रेष्ठ श्री पं० महावीर प्रसाद जी द्विवेदी

धार्मिक हिन्दुओं को पुराण बहुत प्यारे हैं। वेदों का तो वे केवल नाम ही जानते हैं या सुनते हैं पर पुराणों में जो कुछ है वह सब उन्हें सुनने को भी मिलता है। उसे वे बड़ी श्रद्धा

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

भक्ति से सुनते हैं, जो धर्मिष्ठ होनेका दावा नहीं करते अथवा जो धर्मिष्ठ नहीं, वे भी पुराणों को किस्सा कहानी नहीं समझते। इन पुराणों की बदौलत हजारों पुराणपाठी पण्डितों की जीविका का निर्वाह होता है। शहरों में ही नहीं देहात में भी, और देहात में शहरों से भी अधिक, पुराणोंका पारायण विशेष करके चातुर्मास में होता है, उस समय उन्हें सुनने के लिये सैकड़ों स्त्री-पुरुष इकट्ठे होते हैं। अन्तिम दिन पूजन के समय रुपये पैसे वस्त्राभूषण और मिष्टान्न की वर्षा सी होती है। पुराणपाठी जितना ही अच्छा वक्ता होता है। आमदनी भी उसे उतनी ही अधिक होती है।

जिन पुराणों की इतनी महिमा है उन्हें कुछ भ्रान्त जन, विशेष करके अंग्रेजी पढ़े और नये बिगड़े हुए धार्मिक हिन्दू अलिफलैला गुलबकावली और चहारदरवेश के ढंग के किस्से समझते हैं। वे उन्हें गपोड़े तक कहने की कृपा करते हैं। इन बिगड़े दिल और बिगड़े दिमाग वालों में अधिकांश ऐसे ही लोग हैं जिन्हें मूल संस्कृत भाषा में पुराण पढ़ने और समझने की तमीज नहीं। इनमें से कुछ तो पुराणों के हिन्दी अनुवाद भी अच्छी तरह नहीं पढ़ सकते, अथवा नहीं पढ़ना चाहते तिस पर भी अपने गुरुघण्टाल गुरुओं के मुख से सुनी हुई पुराण-निन्दा को ब्रह्मवाक्य समझ कर, बिना सोचे समझे उनके वाक्यों की पुनरुक्ति करते नहीं अघाते।

मान लीजिये कि पुराणों में कुछ भी सार नहीं, वे उनके कर्त्ता व्यासजी अथवा अन्य किसी की कपोलकल्पना मात्र हैं तो क्या उपन्यास और किस्से कहानियां कपोलकल्पना नहीं? फिर उन्हें ये पुराणनिन्दक क्यों पढ़ते हैं। जो लोग हिन्दुस्तान में पैदा होना और हिन्दूधर्म में रहना अपने लिये लज्जाजनक नहीं समझते उनके मुख से तो पुराणों की निन्दा कदापि शोभा नहीं देती जब तक अपने देश और अपने धर्मका परित्याग नहीं किया गया तब तक तो उनसे सम्बन्ध रखने वाली पुरानी निःसार बातें भी याद रखने की चीज हैं।

अच्छा तो पुराण क्या कोई घृणाकी चीजहै? क्या उनमें हमारे पुरातन ऋषियों, और मुनियों, और महाजनों, दानियों और वीरों की विद्वत्ता, वीरता, दानशीलता, निष्कपटता और परोपकार वृत्तिका वर्णन नहीं? क्या उनमें धर्म के गूढ़ातिगूढ़ रहस्यों का विवेचन नहीं? क्या उनमें हिन्दू धर्म के आधारभूत पूजा, अर्चन, व्रतोपवास यज्ञानुष्ठान की विधियों और तज्जनित फल आदि के उल्लेख नहीं? भिन्न २ प्रकार के सैकड़ों व्रतों से सम्बन्ध रखनेवाली जो कथायें प्रचलित हैं वे सब कहां से कूद पड़ी हैं? क्या वे सब पुराणों ही से नहीं उद्धृत की गयीं, जिन महा महिम महीपों और महापुरुषों को अनन्तकाल बीत गया, उनका चरित्रगान इन पुराणों के सिवा और कहीं से सुनने को मिल सकता है? राम, युधिष्ठिर कर्ण, नृग और विश्वामित्र एवं वशिष्ठ यदि उपन्यास नायक ही समझे जांय तो भी क्या उनके कार्यकलाप से हमें कुछ भी उपदेश नहीं मिलता? जैसा कि ऊपर कहा गया है भ्रान्त मनुष्यों के सिवा अन्य हिन्दू धर्मावलम्बी जनों के लिये पुराण फेंक देने या निन्दा

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

करने की चीज नहीं। वे आदर की चीज हैं, पढ़ने और सुनने की चीज हैं, शिक्षा ग्रहण करने और तद्द्वारा अपना चरित सुधारने की चीज हैं।

भला हो, हाईकोर्ट के जज परलोकवासी परगीटर साहब का; जिन्होंने इन अन्धों की आंखें कुछ २ खोल सी दी हैं। अन्धों से हमारा मतलब उन महामहिम भारतवासियों से है जो साक्षर होकर भी अपने देश की पुरानी चीजों को तब तक नहीं देख पाते जब तक योरुप का निवासी उन्हें नहीं दिखा देता। कविवर रवीन्द्रनाथ ठाकुर आज कोई ५० वर्ष से अपनी मातृभाषा के द्वारा अपने देश की सेवा कर रहे हैं, पर उनका महत्त्व हम लोगों ने तब तक नहीं समझा, जब तक यूरुप वालों ने उनकी कदर करके उन्हें नोबुल नाम का पुरस्कार नहीं दिलाया। कुछ २ यही दशा पुराणों की भी समझिये। उन्हें पढ़े लिखे नई रोशनी के भी, विद्वान् तुच्छ समझते थे और अब भी बहुतेरे वैसा ही समझते हैं।

हां, परगीटर साहब की कृपा से उनकी आंखों का पटल अब कुछ २ हटने के लक्षण दिखा रहा है। चिरकालतक पुराणों का अध्ययन और विशेष परिश्रम-सापेक्ष खोज, करने के अनन्तर उन्होंने अपनी भाषा अङ्गरेजी में एक पुस्तक लिखी है उसका नाम है 'ऐतिहासिक किंवदन्ती' (Historical Tradition.) इस पुस्तक को निकले १५ वर्ष हो चुके। इसमें उन्होंने सप्रमाण और साधार यह सिद्ध किया है कि ये पुराण कपोलकल्पना नहीं, इन्हें ऐतिहासिक महत्व से शून्य समझना बड़ी भारी भूल है, इनमें जो कुछ है उसका बहुत अंश परम्परा से सुनी गयी ऐतिहासिक घटनाओं का आधार रखता है। विष्णुपुराण आदि में राजाओं की जो नामावलियां हैं उनका मिलान आधुनिक खोज से जानी गई ऐतिहासिक नामावलियों से करके उन्होंने दिखाया है कि ये दोनों ही प्रायः मिलती जुलती हैं। इस दशा में उन्हें अविश्वसनीय समझने का कोई कारण नहीं। पुराणों से प्राप्त सामग्री के आधार पर उन्हों ने कलियुगके नरेशों की वंशावली तक प्रकाशित कर दी है इस वंशावली से सिद्ध होता है कि आधुनिक खोज से जिन पुरातन राजवंशों के अस्तित्व का ऐतिहासिक पता चला है उनका उल्लेख हजारों वर्ष के पुराने पुराणों में विद्यमान हैं। अतएव ये पुराण बहुत महत्व के हैं और अनेक ऐतिहासिक घटनाओं के द्योतक हैं। उनसे और भी कितनी ही ऐतिहासिक बातों का ज्ञान प्राप्त होता और हो सकता है। आवश्यकता है केवल उनके अध्ययन, विचार और गहरी खोज की। पुराणों के महत्व की ज्ञापक दो एक बातें आगे दी जाती हैं।

अफ्रीका के नीलनदी के उद्गम स्थान का पता अभी कुछ समय पूर्व तक किसी भी आधुनिक भूगोलवेत्ता या भ्रमणकर्ता को न था। परन्तु प्राचीन भारतवासियों को उसका ज्ञान हजारों वर्ष पहले ही हो चुका था। बात यह है कि इस देश के निवासी पुराने समय में जहां अन्यान्य देशों के साथ व्यापार करते थे, वहां अफरीका के साथ भी करते थे, तब रेलें थीं नहीं, अतएव इन्हें नावों और जहाजों पर ही माल लाद २ कर लेजाना पड़ता था। नील नदी बहुत बड़ी और बहुत लम्बी है; अतएव भारत-

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

वासियों को उसके तटवर्ती प्रान्तों और नगरों में माल पहुँचानेके लिये उससे बहुत सुभीता होता था। वे उसके प्रत्येक भागसे परिचित थे। यहां तक कि वे उसके उद्गम स्थान तक पहुँच जाते थे। इसके उल्लेख पुराणों में पाये जाते हैं। इस उद्गम को जानने की चेष्टा योरुप के कितने ही भ्रमणकारियों ने की, पर सभी हतसफल रहे। उसका ज्ञान अभी कुछ समय पूर्व ही इनको हुआ है। सो भी पुराणों ही को बदौलत; कर्नल विलफर्ड नाम के एक साहब को पुराण के पाठ का शौक हुआ। उससे उन्हें ज्ञात हुआ कि उन में बहुत सी ऐतिहासिक और भौगोलिक बातें हैं। इस पर उन्होंने "एशियाटिक रिसर्चेज" में कुछ लेख लिखे और जिन देशों प्रान्तों और नगरों आदि का उनमें उल्लेख है, उनमें से उनका नक़शा भी प्रकाशित किया। लेफ्टिनेन्ट कर्नल स्पीक को बहुत समय से नील नदी के उद्गम स्थान की ज्ञानप्राप्ति की धुन थी। उन्होंने उस नक़्शे को देखा, और उसके आधार पर वे उस की खोज में निकल पड़े। फल यह हुआ कि उन्हें उसका पता चल गया और वे ठेठ वहां तक पहुँच गये, जहां से कि यह नदी निकली है। इस सम्बन्ध में उन्होंने एक पुस्तक लिखी है उसमें उन्होंने यह बात साफ २ कबूल की है कि पुराणों के आधार पर कर्नल विलफर्ड का बनाया हुआ नक़शा बहुत सही है। इस नकशे में लिखा हुआ था कि कुश द्वीप अर्थात् अफरीका की नील कृष्ण नदी चन्द्रस्थान नामक एक बहुत बड़े जलभाग से निकली है। बस फिर क्या था लेफ्टिनेन्ट स्पीक उसे ढूंढते गये और उसका पता उन्हें चल गया। इस खोज में सब से अधिक सहायता उन्हें उसी नक़शे से मिली।

इससे सिद्ध है कि पुराणों में जिन देशों महादेशों प्रान्तों नगरों और नदियों के नाम हैं वे काल्पनिक नहीं। खोज करने से उनके अस्तित्व का पता लगाया जा सकता है। इसी तरह जिन नरेशों और अन्य प्रसिद्ध पुरुषों के वर्णन पुराणों में पाये जाते हैं वे भी तब तक काल्पनिक नहीं माने जा सकते जब तक कि कोई उन्हें सप्रमाण वैसा सिद्ध न कर दे। अतएव पुराण हंसी में उड़ा देने की चीज नहीं, वे उनके रचयिताओं के दिमाग़ की कल्पित उपज नहीं, उनमें धर्म और कर्म, शिक्षा और उपदेश जीवनचरित्र और लोक परलोक की बातों के सिवा अमूल्य ऐतिहासिक तथा भौगोलिक तथ्य भी हैं।

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

खास 'ब्रा० स०' के "पुराणाङ्क" के लिये

पुराण और ब्राह्मण-ग्रन्थ।

(ले० खपालवाज़ी के आचार्य श्री स्वामी नारायणानन्द जी सरस्वती, भू० पू० सम्पादक "कवीन्द्र" कानपुर)

इस समय पुराणों के सम्बन्ध में जो आन्दोलन चल रहा है, उसके कारण जन साधारण में बड़ी हलचल मच गई है। क्योंकि जो पुराण ग्रन्थ हिन्दुधर्म की शिक्षा का स्रोत समझे जाते हैं; जिन पुराणों को हिन्दु समाज आदर्श ग्रन्थ मानता है, जिनके आधार पर हिन्दु जाति संसार की सभ्य जातियों के समक्ष अपना सर ऊंचा कर सकती है, जिनके द्वारा हिन्दु लोग अपने पूर्व पुरुषों के इतिहास का सम्यक् ज्ञान प्राप्त कर सकते हैं, जिन पुराण ग्रन्थों से हिन्दु अर्थात् आर्यजाति का गौरव है और जिनके बल पर आर्यसभ्यता आदर्श सभ्यता कही जाती है; उन्हीं पुराणों को कुछ अंग्रेजी शिक्षा से शिक्षित लोग घृणित, अश्लील, झूंठे गपोड़े पोपलीला आदि सिद्ध करने की व्यर्थ चेष्टा कर रहे हैं।

यद्यपि इन विचारों का स्रोत पाश्चात्य विद्वानों की प्रतिकूल समालोचनात्मक अंग्रेज़ी पुस्तकें ही हैं, परन्तु भारत में इन विचारों का प्रवाह 'देश के सच्चे सुधारक(?)महर्षि(?)स्वामी दयानन्द जी सरस्वती' द्वारा हुआ है, यह कहने में हमको तनिक भी संकोच नहीं।

स्वामी जी ने सत्यार्थप्रकाश के ११ वें समुल्लास के २१३ पृष्ठ पर पुराण शब्द की व्याख्या करते हुये लिखा है कि—"ब्राह्मणानीतिहासान् पुराणानि कल्पान् गाथा नाराशंसीरिति" यह ब्राह्मण और सूत्रों का वचन है। ऐतरेय, शतपथ साम और गोपथ ब्राह्मण ग्रन्थों ही के इतिहास पुराण, कल्प, गाथा और नाराशंसी यह पांच नाम हैं।

(इतिहास) जैसे जनक और याज्ञवल्क्य का संवाद, (पुराण) जगदुत्पत्ति आदि का वर्णन, (कल्प) वेद शब्दों के सामर्थ्य का वर्णन अर्थ निरूपण करना, (गाथा) किसी का दृष्टान्त दार्ष्टान्तरूप कथा प्रसंग कहना, (नाराशंसी) मनुष्यों के प्रशंसनीय वा अप्रशंसनीय कर्मों का कथन करना। इन्हीं से वेदार्थ का बोध होता है"।

ये सत्यार्थप्रकाश की पंक्तियां लिखकर हमने यह दिखलाया है कि पुराणों के सम्बन्ध में आलोचनात्मक विचार भारत में प्रथम स्वामी जी ने ही फैलाये हैं। अब हम अपने इस छोटे से लेखमें यह बतलाना चाहते कि स्वामीजी ने जिन कथाओं के कारण श्री मद्भागवत और शिव पुराणादि ग्रन्थों को पुराण नहीं माना है, और उन्हें त्याज्य बतलाया है वे गाथायें स्वामी जी के माने हुये पुराणों (ब्राह्मणों) में भी पाई जाती हैं। अथवा शिवपुराणादि के रचयिताओं की कल्पना मात्र हैं। हम केवल युक्तियों के सहारे ही पुराणों की परीक्षा करना एवं पुराणों की श्रेष्ठता नहीं दिखाना चाहते, किन्तु हमारा तो यह दावा है कि पुराणों की सभी कथायें ब्राह्मण ग्रन्थों में मूल रूपसे विद्यमान हैं। जिन कथाओं को लेकर बाबू पार्टी के लोग पुराणों की निन्दा करते हैं, या पौराणिकों को भर पेट कोसते हैं,

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

वे सभी कथायें ब्राह्मणों के आधार पर लिखी गयी हैं। हां! यह ठीक है कि ब्राह्मण ग्रन्थों की कथाओं और पौराणिक कथाओं में कुछ भिन्नता है। यह भी ठीक है कि कुछ तत्सम कथायें पुराणों में बिलकुल मौलिक हैं, किन्तु यह सर्वथा भ्रान्त है कि पौराणिक गाथायें केवल कपोल कल्पित ही हैं। बल्कि हम तो यह भी बिना कहे नहीं रह सकते कि पुराणों की अधिकांश कथायें वेदों में भी सूत्र रूप से विद्यमान है। हम यहां अहल्या की कथा उदाहरणस्वरूप पेश करना चाहते हैं। यह कथा रामायण में विशेष रूप से मिलती है और इस कथा को हिन्दु लोग प्रायः जानते हैं, इस लिये संक्षेप में ही हम लिखते हैं:-

(१) गौतम नामक एक ऋषि थे, जिनकी धर्म पत्नी का नाम अहल्या था। देवराज इन्द्र उसके रूप पर मुग्ध हो, उससे जार कर्म करना चाहता था। इस अपनी कार्य-सिद्धि के लिये उसने चन्द्रमा से सहायता मांगी, और चन्द्रमा मुर्गा बनकर आधी रात के समय में ही गौतम के यहां जा बोला. जिससे गौतम ऋषिको प्रातः काल हुआ प्रतीत होने लगा, और वे नित्य नियमानुसार गंगा स्नान को चल दिये। इधर इन्द्र भी मौका पाकर ऋषि के आश्रम में जा घुसा और उनकी पत्नी के साथ जार कर्म में प्रवृत्त हो गया। गौतम ऋषि जब स्नान से लौट कर आये तो उन्होंने इन्द्र को अपने आश्रम में देखा, और उसके छल का सारा हाल जान लिया। गौतम ने दुःखित हो देवराज इन्द्र को शाप दिया कि तेरे सहस्र भग हो जायें। और अपनी पत्नी अहल्या को कहा कि तू पत्थर हो जा। इत्यादि

इस कथा का समाधानात्मक उल्लेख स्वामी जी ने अपनी बनाई 'ऋग्वेदादि भाष्यभूमिका' में इस प्रकार किया है:-"सूर्य का नाम इन्द्र है रात्रि का नाम अहल्या तथा चन्द्रमा का नाम गौतम है। यहां रात्रि और चन्द्रमा का स्त्री पुरुष के समान रूपकालंकार है। चन्द्र अपनी स्त्री रात्रि से सब प्राणियों को आनन्द देता है, और इस रात्रि का जार आदित्य है। अर्थात् जिसके उदय होने से रात्रि अन्तर्धान हो जाता है और जार अर्थात् सूर्य ही रात्रि के वर्तमान शृङ्गार को विगाड़ने वाला है। इसलिये यह स्त्री पुरुष का रूपकालंकार बांधा है। जैसे स्त्री पुरुष मिलकर रहते हैं, वैसे ही चन्द्रमा और रात्रि भी साथ साथ रहते हैं। चन्द्रमा का नाम गौतम इस लिये है कि वह अत्यन्त वेग से चलता है। और रात्रि को अहल्या इस लिये कहते हैं कि उसमें दिन लय हो जाता है। तथा सूर्य रात्रि को निवृत्त कर देता है, इसलिये वह उस का जार कहलाता है।"

स्वामी जी ने अपनी पुस्तक में इस विषय के कुछ ब्राह्मण वाक्य उद्धृत किये हैं और कुछ निरुक्तकार के वचन भी! जिससे साबित है कि यह कथा पुराणकर्त्ताओं की मनगढ़न्त नहीं है बल्कि इसका मूलाधार ब्राह्मण ग्रन्थ ही हैं। हां यह सत्य है कि ब्राह्मणों के इस आलंकारिक वर्णन को पौराणिकों ने ऐतिहासिक रूप दे दिया है।

(२) दूसरी कथा ब्रह्मा की है, जो अपनी पुत्री पर मोहित हो उसके पीछे भागा, परन्तु स्वामी जी ने इस कथा को भी ऋग्वेदादिभाष्य भूमिका में स्वीकार किया है, तथा रूपकालङ्कार

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

माना है । बल्कि इस कथा का आधार तो ऋग्वेद ही माना है। जिसके प्रमाणस्वरूप यहां हम उनकी ऋग्वेदादिभाष्य भूमिका के वे वाक्य उद्धृत करते हैं—

"प्रजापतिर्वै स्वां दुहितरमभ्यध्यायद्दिवमित्यन्य आहुरुषसमित्यन्ये तामृश्यो भूत्वा रोहितं भता मभ्यैत् । तस्य यद्रेतसः प्रथममुददीप्यत तदसावादित्यो भवत्। ऐ० पं० ३ कण्डिका ३३ । ३४ । ब्रा० ७ । कं ४। तत्र पिता दुहितुर्गर्भं दधाति पर्जन्यः पृथिव्याः ।

अर्थात् यहां प्रजापति कहते हैं सूर्य को जिस की दो कन्या एक प्रकाश दूसरी उषा है क्योंकि जो जिससे उत्पन्न होता है, वह उसकी ही संतान कहाता है। इस लिये उषा जो कि तीन चार घड़ी रात्रि शेष रह जाने पर पूर्व दिशामें लालिमा दीख पड़ती है वह सूर्य की किरणों से उत्पन्न होने के कारण उसकी कन्या कहाती है। उनमें से उषा के सन्मुख जो प्रथम किरण पड़ती है वह ही वीर्य स्थापन के समान है। उन दोनों के समागम से दिवस रूप पुत्र उत्पन्न होजाता है।

दूसरे प्रजापति नाम मेघ का है, जो अपनी पृथ्वी रूप कन्या में वृष्टि द्वारा वीर्य स्थापन कर उससे नाना ओषध्यादि रूप पुत्र उत्पन्न करता है। इत्यादि ।

बस पाठक ! इससे समझ जायंगे कि जिन कथाओं के कारण लोग पुराणों को घृणित और अश्लील कह कर त्याज्य बतलाते हैं, वे कथायें पुराणोंमें कहांसे आई ? उन कथाओं का आधार "वेद" और ब्राह्मण ग्रन्थ हैं या पौराणिकों का प्रलाप मात्र है ?

इसी प्रकार की अनेक आलङ्कारिक कथाओं को लेकर पुराण कर्ता ने उन्हें ऐतिहासिक बना दिया । जैसे इन्द्र वृत्रासुरकी कथा । देवासुर संग्राम की कथा आदि ।

कहना न होगा कि बहुत सी कथायें तो ऋग्वेद के आधार पर ही लिखी गई हैं। जिस कथा का ब्राह्मणोंने वर्णन किया हैं वे प्रायः सब ऋग्वेद में पाई जाती हैं। उन्हीं को पुराणों में विस्तार से लिखा है। जैसे च्यवन ऋषि की कथा को ले लीजिये जो कि ऋग्वेद में सूत्र रूपसे है। ब्राह्मणों ने अलङ्कार रूपसे लिखा है। पुराण ग्रन्थों में इतिहास रूप से लिखी गई है । हम यहां अनेक कथाएं लिख कर अपने लेख को बढ़ाना नहीं चाहते, तोभी जो कथाएं हमने यहां उद्धृत की हैं उनका तात्पर्य पाठक ! भलीभांति समझ गए होंगे और जान गए होंगे कि—इन कथाओं के होने से पुराण कैसे दूषित होसकते हैं उनकी प्राचीनता पर कैसे अविश्वास किया जा सकता है ?

हां ! पाश्चात्य विद्वानों ने अपनी द्वेष बुद्धि से अथवा यों कहिये कि प्रचण्ड ईर्षाके वशीभूत होकर उक्त कथाओं की अत्यन्त कटु और तीव्र आलोचना अवश्य की है। परन्तु वे इनके भाव को समझने में असमर्थ एवं संस्कृत विद्या से शून्य थे। इसी लिये पुराणों को इस प्रकार कलङ्कित करने का उन्हें साहस हुआ। यदि वे इस आलङ्कारिक रहस्य को जानते तो शायद पुराणों पर वे ऐसे २ आक्षेप कभी न करते, किन्तु वे पुराणों की प्रशंसा के पुल बांध देते। अब रही

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

* स्वामी दयानन्द की बात, सो उन्होंने तो एक प्रकार से पुराणों का बड़ा ही उपकार किया है। यदि वे हमें पौराणिक अलङ्कारों का परिज्ञान न कराते तो ईसाई और मुसलमानों के सामने हम कभी भी पुराणों की महत्ता गर्व के साथ नहीं दिखा सकते थे। हाँ कहीं २ उन्हों ने क्रोध के आवेश में आकर कटु शब्दों का प्रयोग अवश्य किया है, और पुराणोंको झूठे गपोड़े लिख मारा है। यह भी हम उनका सौजन्य ही समझते हैं। क्योंकि वे वैदिकधर्म के सच्चे उपासक थे, और किसी प्रकार भी उसकी निन्दा नहीं सहन कर सकते थे। जब उन्होंने पाश्चात्य विद्वानों की तीव्र समालोचनाओं का अनुशीलन किया तब उनका संस्कृत के विद्वानों पर रोष दिखाना स्वाभाविक ही था। और वह इसलिये कि जिन पुराणों को हम पूज्य ग्रंथ मानते हैं जिनके सुनने से हम स्वर्गप्राप्ति एवं मोक्ष होना मानते हैं, उन पुराणों का वास्तविक अर्थ करके जनता को क्यों नहीं समझाया गया? बस! इसी त्रुटि को लेकर वे पुराणकर्त्ता और पुराणों से बेतरह चिढ़ उठे। और उन्होंने पुराणों तथा पुराण रचयिता व्यास जी की भर पेट निन्दा की है। परन्तु साथ ही उन कथाओं का समर्थन भी किया है जिससे उनके पुराण प्रेम का पर्याप्त परिचय मिलता है।

इस के साथ ही हमें तर्स आता है उन बाबूपार्टी के अबोध लोगों की बुद्धि पर जो कि केवल अंग्रेज़ी पुस्तकों के आधार पर पुराण सम्बन्धी अनेक अनर्गल घृणित बातों के फैलाने में ही अपने पाण्डित्य को चरम सीमा तक पहुँचा हुआ समझते हैं।

जिन लोगों ने कभी पुराणों का पढ़ना तो दूर रहा उनके पन्ने तक नहीं लौटकर देखे, जिनको संस्कृत का किञ्चित् भी परिज्ञान नहीं, उनके मस्तिष्क में कभी पुराणों जैसी उच्चकोटि की गाथाएं समा ही नहीं सकती, वे लोग "अविद्यायामन्तरे वर्तमानाः स्वयं धीराः पण्डितं

---

* इस स्थल पर स्वामी जी की वकालत करते हुए सात्विक लेखक महोदय अपनी सरल हृदयता के कारण दुविधामें पड़ गये हैं। इसमें सन्देह नहीं कि स्वामी जी और उनके द्वारा प्रवर्तित आर्यसमाज ने हिन्दू-धर्म द्रोही मुसलमान, ईसाइयों को अच्छा जवाब दिया है, किंतु उन्होंने पुराणोंको अप्रामाणिक घोषित करके हिन्दू धर्म की जो क्षति है, वह भी उपेक्षणीय नहीं! ऐसी दशा में यह कहना कि 'यह उनका सौजन्य ही है, हम समझते हैं, लेखक का सौजन्य ही है तर्क या तथ्य नहीं!!

पूज्य लेखक का यह कहना कि—"संस्कृत के विद्वानों पर रोष दिखाना स्वाभाविक ही था" सत्य से एक दम दूर जा पड़ा है। कारण, स्वामी दयानन्द जी ने संस्कृत के विद्वानों" पर रोष नहीं दिखाया, प्रत्युत उन्होंने पुराण रचयिता पर ऐसे भद्दे आक्षेप किये हैं ऐसी पतित भाषा का प्रयोग किया है कि समालोचना शैली आज भी उनके नाम पर आंसू बहा रही है। हम समझते हैं, कि स्वामी जी के द्वारा पुराण-निन्दा का इसके सिवा कोई समाधान ही नहीं, कि वे ईसाई और मुसलमानों के समक्ष पुराणों का समाधान नहीं कर सके।

और फलतः उन्होंने आक्षेपों से बचने के लिये 'प्रक्षिप्त' और 'अप्रामाणिक' का आविष्कार किया उनकी यह नीति आगे चलकर स्मृति आदि के विषय में भी लागू हुई है। —सम्पादक।

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

मन्यमानाः" के अनुसार कलम कुल्हाड़ा उठाकर पुराणोंकी जड़ काटने पर उतारू होजाते हैं और बुरी तरह दुलत्तियां झाड़ने लगते हैं। हम उन्हें चैलेञ्ज देते हैं कि वे पुराणों की किसी भी कथा को अपनी तर्क बुद्धिसे अनर्गल या गपोड़ा सिद्ध कर दें।

हम दावे के साथ कहते हैं कि जो लोग पुराणों को आधुनिक मानते हैं, या जिनको पुराणों के व्यासकृत होने में सन्देह है, वे आर्ष और पुराण सम्बन्धी प्रत्येक विषय का समाधान प्राप्त करलें। यह सत्य है कि अठारह पुराणों में कहीं कहीं मतभेद है। यह भी सत्य है कि पुराणों में जिसका बिवाह उसीके नामके गीत गाये गये हैं, परन्तु उससे कोई भी पुराणों को झूठे गपोड़े साबित नहीं कर सकता है, और न साबित कर सकता है उनको अश्लील और घृणित ही। वास्तव में पुराणों के जो लक्षण शास्त्र में बतलाये गये हैं, वे सभी इन अष्टादश पुराणों में पूर्णरूप से घटित होते हैं।

सर्गश्च प्रतिसर्गश्च वंशो मन्वन्तराणिच।
वंशानुचरितं चैव पुराणं पञ्चलक्षणम्॥

यह श्लोक पुराणों की परिभाषा समझना चाहिये। प्रत्येक पुराण इन उपरोक्त लक्षणों से भूषित है। फिर किस तरह हम इनको पुराण मानने से इनकार कर सकते हैं?

अब रहा यह तर्क कि पुराणों की रचना आधुनिक काल की है। इस पर हम केवल इतना ही लिखना पर्याप्त समझते हैं कि जिन कथाओं का आधार "वेद" और "ब्राह्मण" हों वे भला आधुनिक कैसे माने जा सकते हैं? यही कारण है कि हम उक्त ग्रन्थों को अनादि या प्राचीन से भी प्राचीनतम मानते हैं। हां यह हो सकता है कि पुराणों में कुछ तत्सम कथाएं आधुनिक समय में सम्मिलित कर दीगई हों, या वे व्यास जी की लिखी न हों, परन्तु जब कि आधुनिक इतिहासज्ञ अब तक किसी भी ग्रन्थ के निर्माण काल का अनुसंधान नहीं करसके हैं तो हम यह उनके कथनमात्र से कैसे मान लें कि पुराण ग्रंथ आधुनिक हैं? जब कि हम उनकी प्राचीनता में पर्याप्त प्रमाण पाते हैं। अब हम इस लेख को केवल इन शब्दोंके साथ समाप्त करते हैं कि जो महानुभाव पुराण विषयक लेख लिखना चाहें वे कम से कम किसी भी एक पुराण को आद्योपान्त पढ़ने का कष्ट अवश्य उठावें केवल पाश्चात्य विद्वानों की झूठी पत्तलें ही बटोर कर अपने को कृतकृत्य न समझ बैठें। क्योंकि पुराणों का विषय अत्यन्त गहन और सूक्ष्म है, और उन्हीं के आधार पर हिन्दु धर्म की बुनियाद कायम है वे ऋषिप्रणीत हैं और पंचम वेद कहे जाते हैं। उनमें तर्क की गुञ्जाइश नहीं। उनका ज्ञान अटल श्रद्धा और विश्वास पर निर्भर है। उनके भावों को समझना हंसी खेल नहीं है। उसके लिए साधना की ज़रूरत है, और है जरूरत सदाचारिता की। वे सत्य विद्याओं के भण्डार हैं उनके स्वाध्याय से मनुष्य देवता बन जाता है।

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

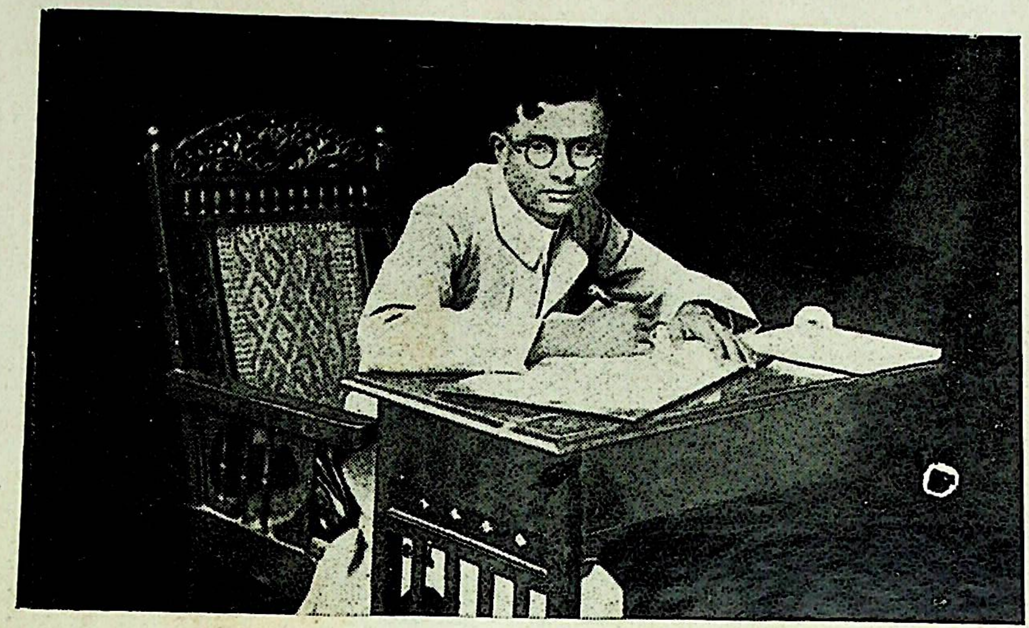

सुकवि श्री पद्मकान्त मालवीय प्रयाग।

B. P. ETAWAH.

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

दुलारे-दोहावली ।

(रचयिता-श्री पं० दुलारेलालजी भार्गव, सम्पादक 'सुधा' लखनऊ)

राधा-कृष्ण

श्री राधा बाधा हरनि-नेह अगाधा साथ,
निःक्रिय नयन-निकुञ्ज मैं नचौ निरन्तर नाथ ।

चीर-हरण

बस न हमारौ, करहु बस, बस अब राखहु लाज,
बसन देहु, ब्रज मैं हमैं बसन देहु ब्रजराज ।

श्रीकृष्ण

पट, मुरली, माला, मुकुट धरि तन, कर, उर, भाल,
मन्द-मन्द हँसि, बसि हियैं नन्द-दुलारे लाल ।

दधि-लीला

बरजोरी गोरी गही गोकुल-गैल गोपाल,
दधि ढरक्यौ, धरक्यौ हियौ, सरक्यौ घूँघट भाल ।

तुलसी-पूजन

हिय तुलसी-सी पतिव्रता, गुन-गन-रूप-निधान,
हिय-हुलसी तुलसी-तरूँहि पूजति, पिय धरि ध्यान ।

विश्वास ।

(रचयिता—सुकवि श्री पं० पद्मकान्तजी मालवीय, प्रयाग ।)

(राग बिहाग)

देखो मेरी आंखों से ।

तुम्हें न दिखलाई देता यदि,
तो क्या है वह यहां नहीं ।
नेत्र-विहीनों के रहने से,
अन्धकार होता न कहीं ॥
निकल रहा वह शाखों से ।
देखो मेरी आंखों से ॥

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

रूप न लख पाते तुम उसका,
क्योंकि रूप का यह आगार।
बाह्य-दृष्टि हो रही तुम्हारे,
लिये इस समय कारागार॥

पूजा जाता लाखों से।
देखो मेरी आंखों से॥

कृष्ण की याद में

(रचयिता-उर्दू के सुकवि श्री गुलाम अनवर साबरी, देवबन्द।)

१

छाई आकाश में
काली घटाएँ!
पवन चले है,
सांएं सांएं !!

२

गङ्गा तट पर,
सुन्दर नारी!
भोली-भाली,
प्यारी प्यारी !!

३

मुरली बजाती
गाती आई!
मीठे स्वर में
'लै' यह गाई !!

४

ऐसे समय यदि
'वह' आ जाते!
मेरा दुःख और
दर्द—मिटाते !!

५

व्याकुल हृदय
चैन से सोता!
पास जो होते
यह क्यों रोता !!

६

दर्श दिखादो
शीघ्र ही साजन!
विरह-वन्हि ने
फूंका तन मन !!

७

आओ आओ
प्रियतम प्यारे!
चूमूँ प्यारे,
चरण तुम्हारे !!

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

परम लोकोपकारी श्री भगवान् व्यासदेव।

रच० सुकवि श्री पं० भगवत्प्रसाद जी शुक्ल 'सनातन'

[१]

केवल मन्त्रों में सुनिहित था,
ईश-निश्वसित ज्ञान-प्रकाश।
उच्च कोटि के जन-समूह तक,
परिमित था, उसका आभास॥

[२]

जन साधारण से अलभ्य था,
ज्ञानार्णव का दुर्गम तीर।
वञ्चित थे वे ईश-ज्ञान से,
कैसे मेटें, भव की पीर?॥

[३]

इस प्रकार के विषम समय में,
अति दयार्द्र होकर भगवान।
प्रादुर्भूत हुए भारत में,
सत्यवती-सुत, गुण-गण-खान॥

[४]

परम पिता के पुत्र सभी हैं,
क्या ब्राह्मण क्या शूद्र चमार।
भव-बन्धन के मुक्ति-मार्ग का,
है सब को समान अधिकार॥

[५]

इस विचार से चिन्तित होकर,
करने को शुभ-ज्ञान-विकाश।
वेदों को निर्बाध प्राप्त कर,
कहलाए प्रभु वेद-व्यास॥

[६]

ईश-सृष्टि-रचना के ज्ञाता,
विश्व-प्रकृति के विज्ञ महान।
श्री भगवान बादरायण ने,
तब अष्टादश रचे पुराण॥

[७]

निःसंकोच आपने जग में,
फैलाई वह ज्योति अनन्त।
प्राणि मात्र को भासित करती,
कर अज्ञान निशा का अन्त॥

[८]

सत, रज, तम इन तीन गुणों में,
है आबद्ध सकल संसार।
किसी एक अनुकूल मार्ग से,
हो न सके इसका उद्धार॥

[९]

अतः पुराणों में ऋषिवर ने,
भिन्न २ गुण के अनुसार।
मुक्ति-हेतु साधन बतलाए,
कर साधक का पूर्ण विचार॥

[१०]

इसी हेतु से सकल विश्व में,
व्यापक है यह हिन्दू-धर्म।
समझा था पुराण-कर्ता ने,
प्रकृति देवि का अद्भुत-मर्म॥

[११]

धन्य धन्य श्री वेद-व्यास जी,
धन्य तुम्हारा यह उपकार।
वन्दनीय तव चरण-कमल में,
होवे मम प्रणाम स्वीकार॥

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

विजय की रात।

रचयिता—साहित्यभूषण श्री पं० केदारनाथ मिश्र 'प्रभात' B. A. पटना।

हे विराट ! वह तेरी वीणा
रोती पड़ी धूल में आज !
बिखर गये हैं तार, और है
अस्त व्यस्त मनोहर साज !!
आया हूँ मैं उसे उठाने
दूर छोड़ अपना संसार !
आज्ञा की है देर, दास
बलि हो जाने को है तैयार !

अरुणोदय से लेकर अब तक
चलता रहा हाय, अभिराम,
शान्ति न मिली कहीं अन्तरको
और न किया कहीं विश्राम !
गोधूली के शंखनाद के
साथ रुल गया तेरा द्वार—
देखा—पड़ी हुई है वीणा
आह, धूल में प्राणाधार !

* * * *

संध्या को पुष्पाञ्जलि लेकर
मैं आया था तेरे पास !
अभी न थमने पाया था वह
प्राणोंका व्याकुल उच्छ्वास !
अन्त हो गये जीवन के सब
कर्म, हृदय को था विश्वास
आज मिलेगी मुक्ति क्षेत्र से
सुखद शान्तिमय चिर अवकाश !

* * * *

इतने में सुन पाया तेरा
भीषण मर्मान्तक आदेश—
"ओ सैनिक ! तेरे जीवन का
है कर्तव्य एक यह शेष !"
हृदय काँप-सा उठा उसी क्षण
बढ़ने लगा व्यथा का भार
देखा—टूट रहा धीरे से !!
माया का वह लघु-संसार

* * * *

भर दो ऐसी शक्ति देव ! तव
वीणा दौड़ उठा लूं मैं !
भर दो ऐसा तेज, विश्व को
मोहित आज बना लूं मैं !!
वर दो ऐसा मेरे सम्मुख
जग का मस्तक झुक जावे !
वर दो ऐसा, मेरा स्वागत
करने स्वयं विजय आवे !!

* * * *

उस चिर-रजनीमें अपनी वह
वीणा नाथ ! बजा देना !
द्वार खोल सस्नेह मुझे तू
बढ़कर हृदय लगा लेना !!

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

पं० मातादीन शुक्ल साहित्य शास्त्री, काव्यभूषण।

BRAHMA PRESS ETAWAH.

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

सम्पादकीय।

पुराण।

भूमिका। इसमें सन्देह नहीं कि भारत-वासी हिन्दूजाति के आदर्श ग्रंथ मूल सम्पत्ति-वेद हैं। हम भारतीयों का यह दृढ़ विश्वास है कि वेद भगवान् के निश्वास से उद्भूत हैं अपौरुषेय हैं—एवं जो उन पर अविश्वास करता है—उनकी निन्दा करता है, वह नास्तिक है "नास्तिको वेदनिन्दकः"!

परन्तु ईश्वरीय सन्देश वेद का समझना, इसके अन्तर्रहस्य वास्तविक तथ्य तक पहुँचना जन साधारण का कार्य नहीं। यह सौभाग्य तो निरन्तर स्वाध्याय, श्रद्धाभाव एवं तपस्या की पावन त्रिवेणी में सतत अवगाहन करने वाले किसी विरले वीर को ही प्राप्त हो सकता है। साथ ही यह उपगूढता वेदों की अनुत्कृष्टता नहीं, उत्कृष्टता ही की परिचायिका है। विज्ञान का रहस्य-महत्त्व यही है न कि वह सर्वज्ञेय नहीं, हमारा तो यह विश्वास है कि विज्ञान का सर्व ज्ञेय होना कभी संसार के लिये हित-साधक हो ही नहीं सकता। कारण, संसार प्रकृति की रंग भूमि है और वह प्रकृति त्रिगुणात्मयी है। फलतः संसार में सात्विक, राजसिक तामसिक, तीनों प्रकार के प्राणियों का समूह किसी न किसी मात्रा में सदा ही बना रहा है और बना रहेगा भी! अब इन तीन श्रेणी के पुरुषों में सात्विक जन, जो स्वभावतः दम्भ, द्वेष एवं प्रतिहिंसा से दूर है विज्ञान का सदुपयोग जगत्कल्याण करेगा ही, परन्तु राजसिक; और विशेषतः तामसिक पुरुष से भी ऐसी ही आशा करना अपनी प्रकृति परिज्ञान शून्यता का परिचय देना है।

उदाहरण के लिये, आज यूरोप के राजसिक एवं तामसिक विद्वान् लोग विज्ञानका क्या उपयोग कर रहे हैं? मारक गैस, क्षणभर में अनंत जन संहार करने वाले गोले एवं इसी प्रकार की अन्य जन संहार कारिणी वस्तुओं का नित नूतन आविष्कार हो रहा है। विगत महायुद्ध में इन आविष्कारों का कुफल प्रकट हो चुका है और फलतः आज यूरोप की जनता विज्ञान के इस सात्विकता विहीन संहारक रूप से ऊब उठी है पुनः प्राच्य की ओर लौटने के लिये विवश हो रही है।

ज्ञान-विज्ञान मय वेदों के अध्ययनाधिकार नियन्त्रण का यही रहस्य है; भगवान् राम के द्वारा शम्बुक के वध का यही मर्म है एवं वर्ण व्यवस्था का सम्पूर्ण तत्व यही है !!!

इस संक्षिप्त विवेचना से यह स्पष्ट हो जाता है कि विज्ञानमय वेदों की सर्वज्ञेयता न सम्भव है और न जग हितकारक ही! परन्तु यह भी स्पष्ट है कि भावुक जन साधारण के सन्मुख आदर्श ग्रंथ न होने से जातीयता, जीवन एवं आत्माभिमान का बना रहना सम्भव नहीं! अतएव भारतीयता की सुरक्षा एवं सतत प्रवृद्धिके लिये यह आवश्यक था कि मूल ग्रन्थ वेदों के अनुकूल उनके भावों के प्रचारक, पर साथ ही ऐतिहासिकता, एवं मनोरञ्जकता-पूर्ण शैली से लिखित आदर्श ग्रंथ जन-साधारण के समक्ष उपस्थित रहें!

हम समझते हैं-सनातन धर्मी संसार मानता

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

है-कि पुराण-निर्माण उसी आवश्यकताकी सम-चीन एवं उज्वल पूर्ति है !!!

जन साधारण के आदर्श ग्रन्थ पुराण।

इस बातका इतिहास में कोई प्रमाण नहीं कि किसी समय में भी वेद जन-साधारण के व्यावहारिक आदर्श ग्रन्थ रहे। 'शंकर दिग्विजय महाकाव्य' के-

"स्वतः प्रमाणं परतः प्रमाणं कीरांगना यत्र गिरो गिरन्ति"

के आधार पर यह सिद्ध करना तो ऐसा ही हास्यास्पद है, जैसे काशी के किसी महामहोपाध्याय के घर में तोते के 'राम राम' पढ़ने का प्रमाण पाकर भविष्यमें यही सिद्ध करना कि सन् १६२८ में भारत की समस्त जनता हिन्दू मुसलमान ईसाई, राम भक्त थी और वहां के मनुष्य ही नहीं पक्षी तक नाम-कीर्त्तन' करते थे !! गत हरद्वार-कुम्भ के पुण्य पर्व पर हमने एक स्वामी जी के पास ऐसा बन्दर देखा, जो हिन्दी में अपना नाम लिखना जानता था और जिसे पैसा देकर बाज़ार से सामान खरीद लाने में अद्भुत दक्षता प्राप्त थी! परन्तु क्या भविष्य में इस प्रमाण से भारत की वर्तमान कालीन शिक्षा सम्बन्धी दशा का उत्कृष्टता सिद्ध की जा सकती है !!! इसके विपरीत इसके अनेकों ऐतिहासिक प्रमाण हैं कि भारतीय जन—साधारण में किसी विशिष्ट काल में ही नहीं सदैव पुराणों का पूर्ण प्रचार रहा-वे उनके धर्म-ग्रन्थ-आदर्श-ग्रन्थ-रहे।

सुदूर अतीत में जा ऐतिहासिक छान-बीन करने की आवश्यकता नहीं, आज से सिर्फ ५०, ६० वर्ष पहिले तक जनसाधारण में पुराणों का इतना प्रचार था कि वयोवृद्ध पूज्य पिता जी के शब्दों में "ग्राम के अनपढ़ लोगों तक को पुराणों की अनेक कथायें अविकल कण्ठस्थ थीं और वे कथावाचकके शीघ्रता या किसी अन्य कारण से कोई कथा छोड़ने पर पूछ बैठते थे कि 'महाराज इस कथा के बाद अमुक कथा तो आई ही नहीं यह क्या बात है ? हमारे कसबे में, जिसमें हिन्दुओं की संख्या प्रायः ८ हजार है, उस समय ३ पुराण कथायें स्थायी रूप से हुआ करती थीं"

और हम तो कहते हैं कि आज भी जन साधारण में किसी न किसी रूप में उनका काफ़ी प्रचार है। ऐसे घरों की संख्या लाखों नहीं करोड़ों है; जिनमें वर्ष में कम से कम २, ४ बार श्री सत्यनारायण एवं श्री दुर्गासप्तशती की कथा एवं पाठ अवश्य ही हो जाता है !!

पुराण विरोधी आन्दोलन।

परन्तु पूर्ण स्वाध्याय की कमी, साम्प्रदायिकता एवं भ्रांति के कारण कुछ लोगों को जन साधारण में पुराणों का यह प्रचार अभीष्ट न हुआ और उन्होंने इनके विरोध में भयंकर आन्दोलन किया। पुस्तकें लिखी गईं लेख प्रकाशित हुये, व्याख्यान दिये गये। और न मालूम क्या क्या उचित अनुचित हुआ। यदि पुराण विरोधी साहित्य को ही तोला जाय, तो सम्भवतः उसका वजन २-३ मन से कम न होगा! इस पुराण विरोधी आन्दोलन के पोषक-वर्धक तो अनेक महानुभाव हैं,जन्मदाता हैं आर्यसमाज के प्रवर्तक श्री स्वामी दयानन्द जी सरस्वती "सत्यार्थ-प्रकाश" के रूप में उन्होंने इसका श्री गणेश किया। कुछ उदाहरण यहां दिये जाते हैं:—

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

'परित्याग के योग्य' ग्रन्थों में 'सब पुराण, सब उप पुराण' की गणना करने के बाद वे लिखते हैं—

(प्रश्न) क्या इन ग्रन्थों में कुछ भी सत्य नहीं ?

(उत्तर) थोड़ा सत्य तो है, परन्तु इसके साथ बहुत सा असत्य है इससे 'विष सम्पृक्तान्नवत् त्याज्याः' जैसे अत्युत्तम अन्न विष से युक्त होने से छोड़ने योग्य होता है, वैसे ये ग्रन्थ हैं"।

पुराणों का कुछ कथाओं के उदाहरण देकर वे लिखते हैं—"धिक्कार है पोप और पोप रचित इस महा असम्भव लीला को जिसने संसार को अभी तक भ्रमा रक्खा है। भला इन महा झूंठ बातों को वे अन्धे पोप और बाहर भीतर की फूटी आँखों वाले उनके चेले सुनते और मानते हैं। बड़े ही आश्चर्य की बात है कि ये मनुष्य हैं या अन्य कोई !!! इन भागवतादि पुराणों के बनाने वाले क्यों नहीं गर्भ ही में नष्ट हो गये ? वा जन्मते समय मर क्यों न गये ? क्यों कि इन पोपों से बचते, तो आर्यावर्त्त देश दुःखों से बच जाता"। "इतिहास और पुराण शिवपुराणादि का नाम नहीं"। "पौराणिक लोग भूगोल विद्या के शत्रु हैं"।

क्या २ लिखा जाय, इसी प्रकार की बातों से पृष्ठ के पृष्ठ रंगे गये हैं। "संस्कृत साहित्य के अपूर्व विद्वान्" श्री स्वामी जी ने 'ऐसा क्यों लिखा ?' इस प्रश्न का समाधान श्री नरदेव शास्त्री ने, अन्यत्र प्रकाशित अपने लेख में किया है पर हम जानना चाहते हैं कि क्या "सत्य का ग्रहण और असत्य का त्याग करने में सदा उद्यत" रहने वाला आर्यसमाज उस समाधान को भी स्वीकार करने को प्रस्तुत है ???

हम ऊपर कह चुके हैं कि पुराण विरोधी साहित्य का परिमाण बहुत अधिक है और यदि उस सब पर संक्षिप्त आलोचना भी की जाय, तो एक भारी पुस्तक लिखी जा सकती है, अतएव एक ही और पुस्तक की चर्चा करके हम इस प्रसंग को समाप्त करेंगे।

इस दूसरी पुस्तकका नाम है—'धूर्त्ताख्यान' यह पुस्तक उपन्यास के रूप में लिखी गई है और 'एक श्वेताम्बर भिक्षुकक्कृत संस्कृत ग्रंथ का हिन्दी अनुवाद' है। इसका क्रम यों बांधा गया है—'एकबार उज्जयिनी के पास वन में २॥ हजार धूर्त्त आकर ठहरे। ये धूर्त्त महामायावी, महानिर्दयी और महाविश्वासघाती थे। वन में आते ही घोर वर्षा के कारण ये दुःखी हुये और भूखों मरने लगे। तब इनके ५ मुख्याधिकारियों ने निर्णय किया कि आज हमें अपनी २ देखी सुनी एक एक दो-दो कथा कहनी चहिये। हममें से जो कोई उस कथित कथा में सन्देह करेगा उसे दण्डस्वरूप आज के सब के भोजन का व्यय देना पड़ेगा। परन्तु यदि कोई उस कथा को भारत, रामायण, भागवत, पुराणादि से प्रमाण देकर सच्ची सिद्ध कर देगा—वह बुद्धिमान् गिना जायगा और उसे भोजन का व्यय भी न देना पड़ेगा।" इसके बाद क्रमशः सभी ने एक एक 'चण्डूखाने की गप्प' हांकी है और दूसरे ने 'उसके जोड़ की' कोई पौराणिक कथा कह कर उसे सत्य सिद्ध किया है। इस प्रकार इन 'भिक्षुक' महाशय ने पुराणों को गप्प सिद्ध करने में 'कलम तोड़दी' है।

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

उसका फल

विस्तार भय से हम यहां उपर्युक्त पुस्तकके विषयमें अधिक लिखने में अक्षम हैं। परन्तु हमारा विश्वास है कि 'सत्यार्थप्रकाश' और 'भूताख्यान' जैसी भद्दी पुस्तकें पढ़ने के बाद कोई भी साधारण जन पुराणों का स्वाध्याय नहीं करना चाहेगा। अस्तु इस प्रकार पुराणों को नष्ट करने के लिये न जाने कितना विष वमन किया गया भयंकर आन्दोलन हुआ। और भारतके दुर्भाग्य एवं सनातनी विद्वानों की अकर्मण्यता के कारण उसे सफलता भी मिली। फलतः आज पुराणों के विरुद्ध ऐसा ऐसा दूषित वातावरण बन गया है कि लोग पुराणों का एक अक्षर न पढ़ने पर भी उन्हें कोसने के लिये सदा सन्नद्ध रहते हैं और यह मनोवृत्ति अशिक्षित लोगों में ही हो सो बात नहीं। बड़े २ शास्त्रियों और ग्रेजुएटोंका यही हाल है।

'पुराणांक' का सम्पादन स्वीकार करने के बाद हमें लखनऊ, कानपुर आदि की यात्रा का अवसर प्राप्त हुआ था। इस यात्रा में पुराणों के सम्बन्ध में अनेक लेखकों, कवियों, एवं विद्वान् सम्पादकों से हमारी बात हुई। प्रायः सभी 'लिंगवृद्धि' आदि की एक दो सुनी सुनाई कथाओं के बल पर पुराणों को 'कूड़ा कर्कट' सिद्ध करने के लिये सन्नद्ध थे। पर जब हम उनकी शंकाओं को समाधान कर देते थे तो वे साश्चर्य पुराणोंके अध्ययनकी प्रतिज्ञा करते नजर आते थे।

सारांश यह कि विपक्ष—प्रहारों की सतत चोट से जनता की पुराण-श्रद्धा जर्जरित होगई और व्यवस्थित प्रचारके द्वारा उसे पुनः सिञ्चित करने की अत्यन्त आवश्यकता है!

पुराण और ऐतिहासिक खोज।

कहा जाता है कि पुराण गपोड़े हैं कपोल कल्पित हैं, उन्हें पढ़ना अपनी मनोवृत्तियों को भ्रष्ट करना है। परन्तु हमारा विश्वास है कि पुराणोंमें भारतका उज्ज्वल अतीत; जिसमें भारत का वर्तमान गुम्फित है और जो भारत के भव्य भविष्य की मूल-भित्ति है, चामत्कारिक वर्णन शैली की सुकुमार शय्या पर बिखरा पड़ा है यदि अपनी उपेक्षा वृत्ति से भारत उसे न बटोरे नष्ट होजाने दे तो इसमें सन्देह नहीं कि उसका वर्तमान विश्रृंखलित एवं भविष्य भस्मसात् होजाय।

पूर्णावस्था से पतित देश, उज्ज्वल अतीतकी शक्ति प्रोत्साहन एवं उपालम्भ परही तो पुनः उठा करते हैं न!! यही कारण है कि विजयी देशों ने सदैव विजित देशों के इतिहास को विश्रृंखलित करने में अपनी शक्तियों का व्यय किया है। सच बात यह है कि गुलाम देश के निवासियों की मनोवृत्तियां भी गुलाम होजाती हैं और वे शासक जाति के बचन को ईश्वरीय वाक्य की भांति मानने लगते हैं संसारका इतिहास साक्षी है कि शासक जाति ने सदा शासित जाति की इस मनोवृत्ति का लाभ उठाया है और उसके चरित्र आदि की निन्दा करके उसके आत्माभिमान को नष्ट करने का प्रयत्न किया है। भारत भी इसका अपवाद नहीं। पाश्चात्य विद्वानों ने भारतीय अर्वाचीन इतिहास में जो जघन्य गोलमाल किया सो तो किया ही, पर पुराण साहित्य की निन्दा कर भारतके प्राचीन गौरवपूर्ण इतिहासको विनष्ट करने में जो उद्योग किया वह आंखें खोल कर देखने सोचने विचारने की बात है और इस

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

स्थल पर उसके विषय में स्वयं कुछ न कहना ही ठीक है।

भारतीयों की दुर्दशा की आलोचना करते हुए आयर्लैण्ड के प्रसिद्ध राजनैतिक मि० वेब ने एक स्थल पर ठीक ही कहा है:—

"मेरी यह धारणा दिनों दिन दृढ़ होती जा रही है कि भारतीयों के 'चरित्र' की हमेशा निन्दा का फल शीघ्र हो या देर से, होगा भयंकर! इस प्रकार की कुत्सा से हम लोगों का (आयरिश लोगों का) क्या अनिष्ट हुआ है सो मैं जानता हूँ। इससे हमारे अनेक अच्छे गुण नष्ट हो गये हैं। यही निन्दा हमारे जातीय इतिहास की कई बीभत्स घटनाओं का कारण है। राजजाति द्वारा की हुई निन्दा या स्तुति से पराधीन जाति के चरित्र में शीघ्र ही हेर फेर हुआ करता है"।

फलतः कूटनीति, भ्रान्ति एवं अज्ञान के कारण पाश्चात्य विद्वानों द्वारा की हुई पुराणों की निन्दा का भारतीयों पर यह प्रभाव पड़ा कि वे इस ऐतिहासिक रत्नसमुच्चय की ओर से विमुख हो गये। परन्तु प्रसन्नता की बात है कि कुछ अन्वेषण-शील एवं निष्पक्ष पाश्चात्य विद्वानों ने यह सिद्ध करदिया है कि पुराणों में ऐतिहासिक सामग्री भरी पड़ी है। मि० परजीटर साहब ने पुराणों के विषय में अच्छी खोज की है और यह स्पष्ट रूप से स्वीकार किया है कि उनमें ऐतिहासिक सामग्री का बाहुल्य है।

मि०डाक्टर स्मिथने अपने'Early Hiotory of India." में युक्तियुक्त ढंगसे यह स्वीकार किया है कि 'मत्स्य-पुराण' से आन्ध्रवंश एवं 'विष्णु-पुराण'से मौर्यवंशके इतिहासका पता चलताहै।

आपने अपने ग्रंथ 'दी ओक्सफोर्ड हिस्ट्री आफ इण्डिया' के पृष्ठ ३४ पर लिखा है—

अर्थात्—"६०० बी०; सी० से पुराणों का वर्णन प्रसिद्ध है और इतिहास की खोज में उन से (पुराणोक्त राज वंशों से) बहुत बड़ी सहायता मिलती है"

इनके अतिरिक्त अन्य अनेक पाश्चात्य एवं भारतीय विद्वानों ने यह सिद्ध कर दिया है कि पुराण ऐतिहासिक विवरणों से पूर्ण हैं और उनकी उपेक्षा करना भारतीय इतिहास को पंगु बनाना है !!!

पुराण और पुरातत्व।

यही नहीं कि पुराणों से अनेक वंशों आदि के इतिहास का पता चलता है और वे ऐतिहासिक सामग्री के भण्डार हैं। किन्तु भारतीय पुरातत्वान्वेषण की वे कुञ्जी भी हैं। जिस दिन उनके आधार पर पुरातत्व की खोज का कार्य भारतके अध्यवसायी विद्वान् प्रारम्भ करेंगे, सचमुच भारतके इतिहास का वह स्वर्ण दिवस होगा। उसी दिन संसार दम्भ, द्वेष एवं पक्षपात के काले आवरण से ऊपर उठकर देखेगा- पुराण रत्नों के अक्षय भण्डार हैं, भारत की निधि हैं, वेदार्थ की कुञ्जी हैं, उनका विरोध करना भारत के पुरातत्वान्वेषण से विमुख होना है !!!

हमारा तो यह विश्वास है कि पुराणों के आधार पर प्राचीन भारत के अनेक ऐतिहासिक नगरों के खण्डहरों तक का पता चलाया जा सकता है एवं प्राचीन भारत की अनेक 'विद्याओं' का इतिहास लिखा जा सकता है। प्रयाग विश्व-विद्यालय के संस्कृत प्रोफेसर, पण्डितवर श्री प्रसन्नकुमाराचार्य MA.PH. D, D. Litt

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

ने 'भारतीय वास्तु विद्या' पर एक अंग्रेजी ग्रन्थ लिखा है। इस ग्रन्थ में विद्वान् लेखक ने वास्तु विद्या के अंगोपांगों का सविस्तार वर्णन करने के साथ ही उक्त विद्या का प्रामाणिक इतिहास भी लिखने की कृपा की है और यह स्पष्ट स्वीकार किया है कि वायु, स्कन्द, मत्स्य, विष्णु, भागवत, पद्म, गरुड़ अग्नि, ब्रह्म, शिव, नारद, मार्कण्डेय, वराह, लिङ्ग, कूर्म, ब्रह्माण्ड, ब्रह्म वैवर्त और भविष्य पुराण से इस विद्या के प्रामाणिक इतिहास पर पूर्ण प्रकाश पड़ता है।

संस्कृत के प्रौढ़ विद्वान् यदि इधर ध्यान दें तो बड़ा उपकार हो सकता है!

पुराण और भूगोल।

वर्तमान युग के साधन-सम्पन्न अन्वेषकों के अभीष्ट विषयों में भूगोल भी एक प्रधान विषय है और इसके सम्बन्धमें नित नूतन खोज हो रही है। परन्तु पौराणिकों के विषय में कहा जाता है कि "वे भूगोल-विद्याके शत्रु हैं"। क्या वास्तव में बात ऐसी ही है! नहीं,कदापि नहीं!! वास्तविक बात तो यह है कि ऐसा कहने वाले पुराण-विद्या के शत्रु हैं। पुराण, भारतीय भूगोल के ही नहीं, विश्व भूगोल के प्रदर्शक हैं। हम अन्यत्र "पुराण-माहात्म्य" एवं 'स्क० पु० का पुरुषोत्तम क्षेत्र' शीर्षक लेख प्रकाशित कर रहे हैं। पाठक उन्हें ध्यान से पढ़ें और विचारें कि 'पौराणिक भूगोल विद्या के शत्रु हैं' या कुछ महानुभावों को पुराण-निन्दा का 'वात-गुल्म' ही हो गया है!!

पुराण और विज्ञान।

आज विज्ञान का युग है और प्रत्येक बात विज्ञान की कसौटी पर कसी जा रही है। यहांतक कि 'ब्रह्म' की भी आज परीक्षा हो रही है। वास्तविक बात यह है कि वर्तमान युग के व्यक्ति ब्रह्म की भी 'अवैज्ञानिक' बात को मानने के लिये प्रस्तुत नहीं!

इसमें सन्देह नहीं कि आज तक पाश्चात्य विज्ञान ने पूर्णता प्राप्त नहीं की और प्रतिवर्ष नवीन खोजों के कारण उसके अनेक पुरातन सिद्धान्तों के रूप बदल रहे हैं, परन्तु इससे भी इन्कार नहीं किया जा सकता कि आज वह संसार का चक्रवर्ती 'प्रभु' है और 'राई को पहाड़ एवं पहाड़ को राई' बनाने में अपनी पूर्ण प्रभुता का परिचय दे रहा है! जिस दिन संसार के सब धर्म-सिद्धान्तों की वैज्ञानिक गवेषणा होगी, उस दिन पौराणिक सिद्धान्तों की सारवत्ता, ध्रुवता, एवं मौलिकता देखकर विश्व की आंखें चकाचौंध हो जायेंगी और विरोधियों की-पुराणों को 'गपोड़ा' बताने वालों की-शर्म से नीची!!

अमेरिका के पादरियों के एक प्रसिद्ध विशप ने अपने एक व्याख्यान में कहा था-"जिस दिन विज्ञान की कसौटी पर ईसाई धर्मकी परख होगी उसी दिन इस धर्म का यह प्रसाद शीर्ण होजायगा। क्योंकि इस धर्म की नींव भावुकता पर स्थित है। मेरा विश्वास है कि इस कठिन परीक्षा में भारतीय हिन्दू धर्म ही पूर्ण रूप से उत्तीर्ण हो सकेगा" !!! पुराण वैज्ञानिक सिद्धान्तों के आगार हैं। हमारा दुर्भाग्य है कि इन कुतर्कों के माया जाल में फंसकर उनके उपहास में ही हम अपनी कृतकार्यता समझते हैं। भारत-भूषण, विज्ञानाचार्य, सर, जगदीशचन्द्र बसु ने पुराणों के 'वृक्षों में जीववाद' के सिद्धान्तों को अपने आश्चर्य जनक आविष्कारों से देदीप्यमान एवं अमर कर दिया है।

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

पुराणोंके 'स्वरवाद' के विषयमें विज्ञानाचार्य वेंकट रमण F. R. S.ने वाङ्मनीय खोज की है। इसके अतिरिक्त और भी अनेक पुराण सिद्धान्त विज्ञान की कसौटी पर खरे उतर चुके हैं। हां, भू-भ्रमण के विषय में पुराण विज्ञान का पाश्चात्य विज्ञान से मतभेद है, क्योंकि इनमें पहिला, पृथ्वी को 'अचला' और दूसरा गतिशील कहता है। परन्तु प्रसन्नता की बात है कि इधर कुछ ऐसे वैज्ञानिक भी हो गये हैं, जो पुराण विज्ञानसे ही सहमत हैं। अभी कुछ दिन हुये 'स्टेट्स मैन' में एक वैज्ञानिक ने स्वीकार किया था कि वास्तव में पृथिवी नहीं घूमती है। हमारा तो विश्वास है कि वह दिन भी अधिक दूर नहीं, कि जब पुराणों के सिद्धान्त विज्ञान के अरुण प्रभातमें प्रभाकर की भांति प्रोद्भासित हो उठेंगे।

प्रचार की आवश्यकता।

इस संक्षिप्त विवेचना से यह भली भांति स्पष्ट है, कि पुराण 'गप्प' कहकर उपेक्षणीय नहीं हैं, उनका प्रचार अभी भारतीयता की समृद्धि एवं सुरक्षा के लिये अभीष्ट है और उनके रचयिता 'गर्भ में या जन्मते ही मर जाने' की कामना के अधिकारी नहीं और न उन 'पोपों' ने 'आर्यावर्त को दुःखित' ही किया है; प्रत्युत पुराण रचना के द्वारा उन्होंने संसार का अमित कल्याण ही किया है !!!

अतएव आवश्यकता है कि तन, मन, धन, से जुटकर पुराणों का प्रचार किया जाय। सनातनधर्मियों का पुराणों से अभिन्न सम्बन्ध है, ऐसी दशा में सनातनधर्मियों का इस विषय में कर्तव्य स्पष्ट है।

क्या वे इस कर्तव्य का यथोचित पालन कर कृतघ्नता के पापसे बचनेका प्रयत्न न करेंगे ???

प्रचार के उपाय।

पुराणों के प्रचार के अनेक उपाय हो सकते हैं। उनमें कुछ का उल्लेख बन्धुवर श्री जहूर बख्श जी ने अन्यत्र प्रकाशित अपने लेखमें किया है। और कुछ के विषय में हम यहां संक्षेप में चर्चा करेंगे। सर्वप्रथम आवश्यक है कि सनातनी विद्वान् एक 'पुराण-प्रचारक-समिति' की स्थापना करें। यह समिति पुराणों के सम्बन्ध में उचित व्यवस्था करे।

स्थान २ पर पौराणिक व्याख्यानों का प्रवन्ध हो, उनके सम्बन्धमें आवश्यक साहित्य भी प्रकाशित किया जाय, पर यह आवश्यक है कि इस समिति का कार्य विद्वानों के ही हाथ में रहे। किसी राजा रईस को सभापति बनाने का अर्थ है समिति को नष्ट करना ! यदि हमारे विद्वान् यही कार्य कर सकें, तो बहुत कुछ कार्य बनजाय।

संस्कृत-विद्यालयों में पुराण पाठन की व्यवस्था के लिये ज़ोरदार आन्दोलन किया जाय, और उक्त समिति के द्वारा संयोजित पुराण परीक्षाओं में प्रविष्ट होने के लिये पुरस्कार की आयोजना करके छात्रों को प्रोत्साहित किया जाय।

पुराणों की कथायें

पुराणों के उपयोगी बिषयों को स्कूली पाठ्य-पुस्तकों में देना भी हितकारक है, परन्तु पुराणोंके प्रचार का सबसे अच्छा और परीक्षित उपाय यह है कि पुराणों की कथाओं को पुनः प्रोत्साहन दिया जाय। इन कथाओं के विषय में स्वयं कुछ न कह कर हम श्री रामदास जी गौड़ के 'जनता में साहित्यिक रुचि कैसे बढ़े' लेख से कथा सम्बन्धी अवतरण उद्धृत करते हैं। आशा

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

है यह लम्बा अवतरण पाठकों की ज्ञान वृद्धि में सहायक होगाः—

"कथा पुराण की रीति बहुत प्राचीन है। आज उपदेशक लोग जो लेक्चर दिया करते हैं, वह पुरानी कथा कहने की रीति का नया संस्करण है। पुराणों की कथाओं में इतिहास, भूगोल नीति, धर्मशास्त्र, उत्सव, एवं इसलोक और परलोक सबकी उपयोगी बातें बताई गई हैं। सच्ची शिक्षा साक्षरता की मुहताज नहीं है। वे पढ़े लिखे भी हिसाब, इतिहास, भूगोल, नीति और धर्म यहां तक कि भाषा भी सिखाये जासकते हैं यह बात तो शिक्षा के तत्त्वज्ञ निर्विवाद रूप से आज भी मानते हैं। परन्तु हमारे इस प्राचीन देश में तो यह जनता की शिक्षा की एक अत्यंत सरल, सुलभ विधि थी, जिसमें शिक्षा पाने वाला बिना खड़िया, पटिया, कलम, दवात, पोथी आदि सामग्री के 'बहुश्रुत' होजाता था। बहुश्रुत शब्द ही इस बात का गवाह है। पुस्तकालय और वाचनालय आजकल के 'कल–जुग' अर्थात् यन्त्र युग के ढकोसले हैं। और इनमें प्रकाशकों का स्वार्थ भी है। बड़ौदे में गांव गांव पुस्तकालयों और वाचनालयों का प्रबन्ध रियासत की तरफ से होरहा है। इस व्यसन के लिये इतने पैसे मिल सकें तो हम साहित्य को देख कर बुरा न मानेंगे। परन्तु सात लाख गांवों के लिये यह व्यवहार साध्य नहीं है। जिसकी औसत आमदनी सात पैसे रोज से भी कम है, वह पढ़ने के शौक के लिये एक दमड़ी भी खर्च नहीं कर सकता। इसलिये हम पुस्तकालयों और वाचनालयों के लिये सिफारिश नहीं करते। पुस्तकालयों और वाचनालयों के बदले प्राचीन कथा पुराण की रीति सबसे अच्छी है और उसका प्रचार होना चाहिये। आजकल की परिस्थिति पर ध्यान रखते हुये कथा पुराण कहने वाले व्यासों की यथेष्ट शिक्षा होने की जरूरत है। वह पुरानी शराब को नई बोतलों में रखकर अच्छी शिक्षा सुधा का पान करा सकें। मेरी समझ में इस आदर्श की पूर्ति करने वाली एक भी संस्था नहीं है। और कथा पुराण कहने सुनने की बड़ी लाभकारी रीति उठती चली जारही है। जनता की शिक्षा (Mass Education) का प्रश्न हमारे देश के लिये एक जटिल समस्या है। विदेशी सरकार चाहे भारत को अपने कब्जे में रखने के लिये भारत के गोधन को और किसानों की गाढ़ी कमाई को गोरी सेना पर निछावर कर दे, परन्तु शिक्षा के लिये उसके पास पैसोंका सदा टोटा बना रहताहै। प्राचीन भारत में इस प्रश्न पर कोई जटिलता न थी। कथा पुराण कहने सुनने की रीति उसी तरह भारत व्यापिनी थी, जिस तरह चरखे पर की कताई। जनता की शिक्षा पर किसी सरकार को एक पैसा भी व्यय करने की आवश्यकता न थी। जनता स्वयं प्रबन्ध कर लेती थी। कथा कहने वाला अन्त में इतनी भेंट पूजा पा जाता था कि उसका परिश्रम सफल होजाता था। जो जितना ही योग्य होता था, उतनी ही अधिक उसे भेंट पूजा मिलती थी। यह जनता का अपना बन्दोबस्त था राजा से कोई मतलब न था, परन्तु आज तो जैसे चरखों को फिर से चलवाने के लिये संगठन, धन-व्यय, परिश्रम, शिक्षा की आवश्यकता है, उसी तरह कथा पुराण की रीति फिर से जारी करने के लिये इन्हीं सब की आवश्यकता है। ऐसे राष्ट्रीय विद्यालय यदि जगह जगह अलग २ न बनसकें तो कम से कम राष्ट्रीय विद्यापीठों का यह कर्तव्य होना चाहिये कि वे

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

ग्राम संगठन की शिक्षा के प्रसंग में कथा कहने की शिक्षा भी दिया करें। और अपने यहां के स्नातकों को इस काम के लिये विशेष रूप से तैयार करें। हमारे पाठक पुराण के नाम से झिझकें नहीं। 'सत्यार्थप्रकाश' ने पुराणों को जरूरत से ज़्यादह बदनाम कर रक्खा है परन्तु पार्जिटर स्मिथ आदि इतिहास के खोजियोंने इन्हीं पुराणों में से खोये हुये रत्न निकाल कर प्रकाशित किए हैं। मेरा यह कहना नहीं है कि सभी पुराणों के सभी विषयों की कथा होनी चाहिये। यह बात व्यवहार साध्य भी नहीं हो सकती, क्योंकि पौराणिक साहित्य बहुत भारी है। हम तो उपर्युक्त विषयों को चुन लेने के पक्ष में हैं। जो देश काल और पात्र के अनुकूल हों। उदाहरण के लिये अग्निपुराण ही को ले लीजिये। इस अद्भुत ग्रन्थमें हिन्दुओं के आस्तिक साहित्यगत कोई विषय नहीं छूटा है। वेद उपवेद, षडंग, उपांग सभी विषय सार रूप से इसमें आगए हैं परन्तु श्रोता गण इसको केवल सुनकर लाभ उठा नहीं सकते इसमें हर एक विषय मनन करने योग्य है और यदि कोई अग्निपुराण का अच्छा मनन करले तो भारतीय हिन्दू संस्कृति की किसी बात से वह अनभिज्ञ नहीं रह सकता, परन्तु कथा को देश, काल, पात्र के अनुकूल बनाना हर एक का काम नहीं है। यदि वक्ता चतुर हो तो एक २ पुराण विश्व-विद्यालय का लाभ पहुँचा सकता है। हम तो यहां तक कह सकते हैं कि चतुर वक्ता के मुख में अकेला एक ग्रन्थ रामचरितमानस ही हिन्दी का अनुपम विद्यापीठ है।

हरि कथा कहने की रीति दक्षिण की ओर अब तक है। यह कथा हरिदास लोग अत्यन्त रोचक रीति से कहते हैं। परन्तु इनका विषय प्रायः भगवद्भक्ति के सिवाय और कुछ नहीं होता इस लिए हरि-दासों से अभी वह काम नहीं लिया जाता जो हमको इष्ट है। हरिदास लोग एक प्रकार का व्याख्यान देते हैं, जिसमें गाना बजाना भी शामिल होता है यह एक प्रकार की उत्तम कला है। और कथा पुराण की उपेक्षा अधिक खर्चीली है। हम इसके विरोधी नहीं हैं, परन्तु जनता की शिक्षा के लिए इसकी अपेक्षा कथा पुराणको अधिक व्यवहार साध्य मानते हैं।

कथाओं का चमत्कार।

पुराण की कथाओं में वेदों के गूढ़-सिद्धांतों एवं वैदिक कथाओं के विस्तार को देखकर आश्चर्य होता है। अतएव वेदों के साथ इनका समन्वय करने के लिये पुराण की कथा-कहानियों के वैदिक रहस्य पर तो प्रकाश डालने की आवश्यकता है ही साथ ही उनमें जो वैज्ञानिक चमत्कार सन्निविष्ट किये गये हैं उन्हें प्रकाश में लाने की भी परमावश्यकता है। क्योंकि पुराण की कहानियों की यह निरुपम विशेषता है कि एक ओर जहां उनका बाह्य रूप शिक्षाप्रद है वहां उन का अन्तस्तत्व विज्ञानमय है विज्ञान का कोई न कोई गूढ रहस्य उनमें गर्भित है।

ऐसी दशामें, जहां पहिले प्रयत्न से वेदमयता के कारण भावुक एवं आस्तिक जन-समुदाय के हृदय में पुराणों के प्रति श्रद्धाभाव उत्पन्न होगा, वहां दूसरे प्रयत्न से विज्ञानमयता के कारण नव शिक्षित समाज एवं विदेशी विद्वानों के निकट उनकी मान्यता भी बढ़ेगी। और इस प्रकार पुराणों के जगद्व्यापी प्रचार में जो सहायता प्राप्त होगी, वह अन्य सैकड़ों उपायों से भी सम्भव नहीं !!

पौराणिक कथाओं के वैज्ञानिक रहस्योद्घाटन की दिशामें 'हिन्दू धर्म दर्पण' के रचयिताने कुछ

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

प्रयत्न किया है और उसमें उन्हें सफलता भी प्राप्त हुई है, परन्तु इसमें संदेह नहीं कि इस दशा में अभी वाञ्छनीय उद्योग नहीं ही हुआ है।

पुराणों की विषय सूची

पुराणोंके व्यापक एवं वास्तविक प्रचार के लिये यह भी आवश्यक है कि पुराणों की विषय-सूची * प्रकाशित की जाय। पुराणों की विषय-सूची का क्रमवार प्रकाशित होना एक ऐसा कार्य है, जो पुराणों को अमर कर सकता है। परन्तु यह कार्य अत्यन्त अर्थव्यय एवं समय साध्य है इकले दुकले विद्वान् की यह सामर्थ्य नहीं कि वह इस महान् कार्य को अपने हाथ में ले और पूर्णता तक पहुँचा सके। परन्तु साथ ही यह कार्य इतना महत्त्व-पूर्ण भी है कि यदि सनातनधर्मी समस्त वर्तमान संस्थाएं और विद्वान् मिलकर भी इस कार्यका सुचारु रूप से सम्पादन करसकें, तो उनका सनातनधर्माभिमान एवं जीवन सचमुच चरितार्थ होजाय।

क्या हम आशा करें कि भारत धर्म महामण्डल जैसी साधन-सम्पन्न संस्था के अध्यक्ष श्री स्वामी दयानन्द जी सरस्वती तथा अन्य विद्वान् इस ओर समय रहतेही ध्यान देने की कृपा करेंगे।

उपसंहार

इस प्रकार और भी अनेक उपाय हैं, जिनका अध्यवसाय पूर्वक अवलम्बन करने से पुराणों का भारत में ही नहीं जगद्व्यापी प्रचार होसकता है। परन्तु आवश्यकता है, प्राचीन साहित्य प्रेमी निष्पक्ष विद्वानों के जागरण की! सचमुच अब वह समय आ-गया है कि पुराणों का वास्तविक स्वरूप जनता के सामने लाया जाय, और उनके आश्रय से भारतीय भावुक जन समाज में जातीय जीवन, जागृति, धर्म प्रेम, देशभक्ति, शौर्य एवं सात्विकता आदि मानवोचित गुणोंका सञ्चार किया जाय।

पुराण—विरोधी भाइयों से भी निवेदन है कि "सभी नरक में जाय गिरेंगे, जितने हैं पौराणिक भाई" अलापने के दिन अब गये, पुराणों का खण्डन काफी किया जा चुका, अब उनके मण्डन का-पुराण-सागर के अगाध तल में गोता लगाकर रत्न खोजने का-अवसर है। हम मानते हैं इस सागर में जहां अमूल्य रत्न हैं, वहां सीपी और पाषाण ही नहीं गरल भी है। यदि आप इनका उपयोग नहीं जानते, तो न सही। आप रत्न-हार से अपना कण्ठ सुशोभित कीजिये, जो उनका उपयोग जानता है, उसके लिये छोड़ दीजिये। एक पथिक की दृष्टिमें कांटे व्यर्थ हो सकते हैं-उनका कुछ भी उपयोग नहीं है परन्तु एक अनुभवी किसान उनका उपयोग -उनका मूल्य-जानता है और उनसेही क्षेत्र-रक्षा का काम भी लेता है। ऐसी दशा में कांटों की काट-छांट-पुराण-संशोधन-के पचड़े में न पड़ कर जो आपको पसन्द है, उसे अपनाइये, उसका प्रचार कीजिये वैदिकता; "उन्नति" और 'समाज-सुधार' के पवित्र नाम पर अपनी निर्वलताओं का नङ्गा नाच, नाच कर भारतीयता के नाश का बीज वपन न कीजिये।

अन्त में पुराण पुरुष से आपाद-पद्म-प्रणत भाव से यही प्रार्थना है कि वे हमें सुबुद्धि दें, जिससे हम अपने इस प्राचीन साहित्य सागर की ओर आकर्षित हों। विश्व के कोने २ में भारतीयता का विमल सन्देश पहुँचाने में सक्षम होसकें। एवमस्तु

* पुराणों के साथ वेदोंकी भी सुसम्पादित विषय सूची की परमावश्यकता है। सम्पादक

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS
LIBRARY

साहित्य-चर्चा।

शास्त्रार्थ पञ्चक।

इसमें श्री पं० माधवाचार्यशास्त्री हिन्दी प्रभाकर महोपदेशक श्री सनातन धर्म प्रतिनिधि सभा पंजाब और महाशय वालकृष्ण शर्मा, बम्बई निवासी सभापति आर्यविद्वत्सम्मेलन (दयानन्द जन्म शताब्दी मथुरा) के मध्य में होने वाले पांच शास्त्रार्थों का संग्रह है। ये शास्त्रार्थ नैरोबी (केनिया) आफ्रीका में हुये थे। इनमें पहिले चार शास्त्रार्थ तो पत्र-व्यवहार के रूप में हैं और शेष अंतिम शास्त्रार्थ मौखिक, जिस समय ये शास्त्रार्थ अफ्रीका में हुए थे उनकी रिपोर्ट यहां के साप्ताहिक पत्रों में भी छपी थी। यद्यपि इन शास्त्रार्थों में कई जगह सभ्यता की सीमा का उल्लङ्घन है, और अश्लील बातें भी आ गयी हैं पर इतना सन्तोष का विषय है कि इस प्रकार की कार्यवाही आर्यसमाजियों की तरफ से प्रारम्भ हुई है जिसका उत्तर सनातनधर्मी वक्ता ने भी उसी ढंग से दिया है। इन शास्त्रार्थों को पढ़कर सनातनधर्मकी विजयका स्पष्ट प्रतिभान होता है। पं० माधवाचार्य जी ने पद २ पर प्रतिवादी को परास्त किया है। मू० १।।) है। मिलने का पता पं० माधवाचार्य शास्त्री ऋषि भवन मु० पो० कौल (करनाल)।

दयानन्दियों की आंख का शहतीर।

इस पुस्तक में किसी गुप्त समाजी के लिखे हुए २० प्रश्नों का (जो कि सनातनधर्मियों से किये गये हैं) का उत्तर अत्यन्त विद्वत्तापूर्ण और युक्तियुक्त दिया गया है। पृष्ठ संख्या ४५ है। छपाई कागज़ साधारण, मूल्य इस पर कुछ लिखा नहीं। मिलने का पता पं० माधवाचार्य शास्त्री, ऋषि भवन, कौल, करनाल।

विवाहादर्श।

लेखिका और प्रकाशिका श्रीमती तुलसीदेवी धर्मपत्नी श्री पं० गोपालदत्त पन्त साहित्याचार्य संस्कृत टीचर मुहल्ला वल्लभ मुरादावाद मू० १) पृष्ठ संख्या २१४

यह विवाह पुस्तक मालाका प्रथम पुष्प है इसमें इस पुस्तक की सुयोग्य विदुषी लेखिकाने विवाह सम्बन्धी अनेक बातों पर शास्त्र और युक्तियों द्वारा अच्छा विवेचन किया है। विवाह की उपयोगिता, विवाह का आदर्श, विवाहका अधिकार विवाहवय सवर्ण विवाह, विवाह के भेद आदि अनेक बातों पर विस्तृत ऊहापोह करके सम्पूर्ण विवाह पद्धति का भी इसमें समावेश किया है, जिससे यजमान ही नहीं पौरोहित्य वृत्ति करने वाले भी इसके द्वारा लाभ उठा सकते हैं। इस तरह पुस्तक की उपयोगिता को अनेक अंशों में स्वीकार करने पर भी हम यह लिखनेमें विवश हैं कि कई स्थलों पर लेखिका ने अर्थ का अनर्थ किया है। विवाह वय प्रकरण में मनुस्मृति के निर्णय को सर्वोपरि बतलाते हुए भी आपने उसके अर्थों में मनमानी कल्पना की है। त्रीणि वर्षाण्युदीक्षेत० को आपने मुख्य विवाह काल माना है। और त्रिंशद्वर्षोद्वहेत्कन्यां हृद्यां०वाले श्लोकके द्वादशवर्षा और अष्टवर्षा को आपने गौण माना है। 'धर्मे सीदति सत्वरः' का भी आपने विचित्र अर्थ किया है इस का अभिप्राय तो यह है कि धर्म नष्ट होने की सं-

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

LIBRARY
Jangamwadi Math, Varanasi
ACC No. 8398
Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

म्भावना होने पर त्वरावाला होता हुआ पुरुष आठ वर्ष की कन्या से विवाह करले, पर आपने धर्ममें नष्ट होजाते हैं यह अर्थ किया है जो वास्तविकता के विपरीत है इस प्रकार की आर्यसमाजियों की सी कुछ कल्पनायें इस पुस्तक में जरूर हैं शेष अंशोंमें पुस्तक उपयोगी है। मिलने का पता उपर्युक्त।

हिन्दुनाम।

ले० श्रीहरिप्रसाद जी वैदिक मुनि, मिलने का पता मैनेजर हिन्दु ग्रन्थमाला अमृतसर (पंजाब) पृष्ठ सं० ७१।

प्रस्तुत पुस्तक में हिन्दु शब्द के ऊपर विद्वत्ता पूर्ण विवेचन किया गया है इसमें सिद्ध किया गया है कि वैदिककालसे हमारा नाम सिंधु है। पुस्तक लेखक ने इस तर्क का भी उत्तर इस में दिया है कि जैसे सिन्धु नाम वाले मंत्र उद्धृत किये हैं वैसे हिन्दु नाम वाले मन्त्र क्यों नहीं उद्धृत किये इसका उत्तर यह दिया गया है कि वेद की सब शाखा संहितायें इस समय नहीं मिलतीं यदि ऋग्वेद की २१ शाखा संहिताओं में दस पांच संहितायें भी मिल जावें तो वे हिंदु नाम वाले मन्त्र उपस्थित करने की प्रतिज्ञा करते हैं। जो हो पुस्तक की विवेचना शैली अच्छी है और पढ़ने योग्य है। पुस्तकका नाम जरा खुलासा नहीं है। यदि और भी अपने विषय विवेचना का स्पष्ट करने वाला नाम होता तो अच्छा था।

कल्याण।

(रामायणाङ्क) गोरखपुर से निकलने वाले सहयोगी 'कल्याण' का चतुर्थ वर्ष का प्रथमांक (श्रावण का अंक) रामायणाङ्क के रूपमें निकला है इसकी पृष्ठसंख्या ५१२ है। २०६ लेख, कविता संग्रहीत लेखादि १६ बहुरंगे चित्र और लग भग १५० सादे चित्र हैं। कल्याण ने विशेषाङ्क की स्थूलता और पीवरता में सभी सहयोगियों से बाजी मार ली है। लेख भी प्रसिद्ध २ लेखकों और कवियों के हैं। साधारणतः यह कहा जा सकता है कि अन्तरङ्ग और बहिरङ्ग दोनों ही दृष्टियों से यह अच्छा हुआ है। श्री वाल्मीकीय रामायण और तुलसीकृत रामायण दोनों ही के आधार पर इसमें लेखादि लिखे गये हैं। भक्ति विषयक इस सर्वाङ्गसुन्दर मासिक पत्र के (रामायणाङ्क के) कतिपय लेखकों ने अपने विचारानुसार कुछ ऐसे भी लेख लिखे हैं जो सनातनधर्म की विचारपरम्परा से बाहर हैं। इस प्रकार कुछ आक्षेपाई अंशों को छोड़ कर हम इसका स्वागत करते हैं। हमें आशा है कि भविष्य में वादग्रस्त विषयों को सम्पादक कल्याण विना नोट के न प्रकाशित करेंगे।

शान्ति के पथ पर—

ले० ब्रह्मचारी इन्द्र, प्रकाशक साहित्य सदन मु० पढ़ीना पो० भोगांव जिला मैनपुरी। मू० ॥)

इस पुस्तक में सुन्दर और शान्तिदायी विचार परम्पराओं का सुन्दर संग्रह किया गया है बङ्गाल के दो भावुक और तपस्वी श्री रामकृष्ण परमहंस और श्री योगिराज अरविन्द घोष ने समय २ पर जो शान्तिदायी जनकल्याण-कारक विचार प्रकट किये हैं उनका इसमें सुन्दर संग्रह है। प्रारम्भ में ब्रह्मचारी जी ने अपने विचार भी प्रकट किये हैं। साधन पथ में अग्रसर होने वालों को इस पुस्तक से बड़ा लाभ हो सकता है। पृष्ठ संख्या १०८ है।

Printed by P. Brahma Deva Misra at the Brahma Press Etawah.

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

क्षमा-याचना।

जगन्नियन्ता जगदीश्वर की असीम कृपा और सुयोग्य लेखकों और कवियों के साहाय्यसे हम आज पुराणांक को अत्यन्त विलम्ब और प्रतीक्षा के बाद अपने प्रेमी पाठकों के सम्मुख रखते हैं। पुराणांक के निकालने का विचार जनवरी में ही किया गया था पर उस समय वार्षिक विशेषांक के निकालने के कारण हमने इसे अप्रैल में निकालने का विचार किया था। पर 'हमरे मन कछु और है कर्ता के मन कछु और' के नियमानुसार अप्रैल तक लेखों का ही संग्रह न होसका। वास्तविक बात यह भी है कि अठारह पुराण और अठारह उपपुराण एक महा साहित्य सागर है उसके लिये ऐसे कितने ही विशेषाङ्क निकलें तब कहीं उसका तत्त्व लोगों के सामने रक्खा जासकता है। इस दशा में यद्यपि इस सामान्य अङ्क को पुराणांक कहने में हमें सङ्कोच होता है फिर भी 'अकरणान्मन्दकरणं श्रेयः' के अनुसार हम इस पुराणांक को डरते २ पाठकों के सम्मुख रख रहे हैं।

हम अपने कृपालु लेखकों और कवियों के प्रति अपनी हार्दिक कृतज्ञता प्रकट करते हैं साथ ही त्रुटियों के लिये उनसे क्षमायाचना करते हैं। कई लेखों में कहीं २ अक्षरों वा शब्दों और वाक्यों की कांट छांट की गयी है और कई लेखों में नोट आदि भी देने पड़े हैं। हम सच्चे हृदय से कहते हैं कि पुराणों के ऊपर पूर्ण श्रद्धा होने के कारण ही हमें ऐसा करने के लिये विवश होना पड़ा है। लेखकोंके लिये हमारे हृदयमें पूरा आदरभाव है।

खेद है कि कई स्वीकृत लेख भी देर से आने के कारण और कुछ स्थानाभाव से इच्छा रहने पर भी बिलकुल नहीं छप सके हैं हमारा विचार ब्राह्मणसर्वस्व की शोचनीय आर्थिक परिस्थिति को देख कर इसे १२५ पृष्ठ में निकालने का था पर लेख अधिक आगये इससे लाचार होकर कुछ पृष्ठ संख्या बढ़ानी पड़ी पर फिर भी जब सब लेखों का समावेश इसमें होते न दिखाई पड़ा तब लाचार होकर कई लेख छोड़ देने पड़े। स्वीकृत लेख ब्राह्मणसर्वस्वकी आगे की संख्याओं में क्रमशः छापे जायंगे। लेखक महोदय इसके लिये क्षमा करें।

पुराणाङ्कके सम्पादन का भार यद्यपि हमने और पं० कन्हैयालाल मिश्र 'प्रभाकर' देववन्द दोनों ने लिया था, पर इसमें सन्देह नहीं कि इसके सम्पादन का मुख्य श्रेय प्रभाकर जी को ही है। यदि वे अपनी स्वभावसिद्ध स्फूर्ति और लगन के साथ काम न करते तो इसका इस रूप में भी निकल सकना सम्भव नहीं था। प्रभाकर जी इस समय वर्तमान सत्याग्रह-संग्राम में प्रमुख भाग लेने के कारण सरकार के मेहमान हैं अन्य भी इस 'पुराणाङ्क' के कतिपय माननीय लेखक और कवि भी सत्याग्रह संग्राम में चले गये हैं। हम उन सब को बधाई देकर इस विपरीत अवस्था में भी ऐसा विशेषाङ्क निकल सकने का कारण उसी पुराण पुरुष को समझते हैं जिनके लीला विन्याससे समस्त सृष्टि का कार्य चलता है।

चित्रों के सम्बन्ध में।

खेद है कि अर्थाभाव से हम जो २ चित्र इस संख्या में देना चाहते थे न दे सके। कुछ के ब्लाकही समय पर न बनसके इस संख्या में जिन सुयोग्य लेखकों और कवियों के चित्र दिये गये हैं उनके पृथक् परिचय की आवश्यकता प्रतीत नहीं होती। उन उनके नाम और उनके लेखादि ही उनके परिचय के लिये पर्याप्त हैं।

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

ब्रह्मप्रेस इटावा की नवीन पुस्तकें।

साढ़े तीन रुपये में मुसलमानी धर्म की सैर।

पूर्ण हिन्दी कुरान तीसों खंड

मुसलमानों ने भी तर्जुमा ठीक होने की सनद दी है धड़ाधड़ बिक रहा है।

कुरान का पढ़ना सिर्फ मुसलमानों के लिये ही जरूरी नहीं है किन्तु प्रत्येक इतिहास व धर्म प्रेमी प्रत्येक मजिस्ट्रेट आनरेरी मजिस्ट्रेट जज मुन्सिफ, तहसीलदार, पुलिस और प्रत्येक हिन्दू जैन, सिक्ख, ईसाई, आदि आदि को भी जरूरी है। हिन्दू मुस्लिम प्रश्न आजकल सभी जगह उठ रहा है इससे जानकारी होने पर तहक़ीक़ात (अनुसंधान) व फैसला करने और अपने मत की पुष्टि करने में पूर्ण सहायता मिलती है। इस हेतु हर किसी को बिना विलम्ब हिन्दी कुरान अवश्य पढ़ना चाहिये। अंगरेज लोग संसार में इसी से शिरमौर हो रहे हैं कि वे संसार के साहित्य का खूब अध्ययन करते हैं तभी दूसरों पर शासन करने की योग्यता रखते हैं यदि अपने को मजबूत बनाना चाहते हो तो अपना और दूसरों का भी साहित्य अवश्य अध्ययन करो।

कुरान के तीसों (खण्डों) का यह अनुवाद (तर्जुमा) निहायत सरल हिन्दी में है। जिसे ग्रामीण हिन्दू मुसलमान भी सहज में समझ सकते हैं। पुस्तक सचित्र निहायत सुन्दर कपड़े की जिल्द और ७०० पृष्ठ होने पर भी मू० सिर्फ ३॥) इस अनुवाद की प्रशंसा मुसलमानों ने भी की है एवं आर्यसमाजियों ने भी हृदय से की है उक्त दोनों समुदायों का मिलकर प्रशंसा करना संसार में बड़ी विचित्रता पैदा करता है। पाठक गण इस अनुवाद की उत्तमता का ज्ञान इसी से कर लेवें। मू० ३॥) डा० अलग।

षोडशसंस्कारविधि।

तृतीय संस्करण।

जिस पुस्तक के निकट जाने से मंगाने वालों के तगादे पर तगादे आ रहे थे जिसके शीघ्र छपा देने के लिये ग्राहक सज्जन पत्र पर पत्र भेज रहे थे वही षोडश संस्कारविधि छप कर तैयार है संस्कारों के विषय में सर्वाङ्गपूर्ण ऐसी पुस्तक अन्यत्र कहीं नहीं छपी। स्वर्गीय वेदव्याख्याता श्री पं० भीमसेन जी शर्मा की कर्मकाण्ड विषयिणी विज्ञता का यह पुस्तक समुज्वल प्रमाण है प्रशंसित पण्डित जी ने इसको ऐसी अत्युत्तम रीति से बनाया है कि साधारण पढ़े लिखे ब्राह्मण भी इसके द्वारा संस्कार करा सकते हैं इस में गर्भाधान से लेकर श्रौताधान पर्यन्त सोलह संस्कारों का विधान ऊपर संस्कृत में और नीचे सरल हिन्दी में लिख दिया गया है संस्कार द्विजातियों की प्यारी वस्तु है। बिना संस्कार के ब्राह्मण ब्राह्मण नहीं, क्षत्रिय क्षत्रिय नहीं, और वैश्य वैश्य नहीं। द्विजातियों को तो यह पुस्तक अवश्य ही लेनी चाहिये। सनातनधर्मी सज्जनों को यह पुस्तक कल्पतरु का काम देगी, क्योंकि धर्म अर्थ काम और मोक्षरूप अपवर्ग चतुष्टय के साधनभूत संस्कार ही हैं। कागज की तेजी के कारण पुस्तकें अल्पसंख्या ही में छपाई गई हैं अतः बिक जाने पर ग्राहकों को चतुर्थ संस्करण के मुद्रित होने तक ठहरना पड़ेगा अतः सनातन धर्मी सज्जनों को पुस्तक अतिशीघ्र मंगा लेनी चाहिये, छपाई सफाई आदि पहले से उत्तम है मूल्य २॥) डाकखर्च अलग।

मिलने का पता मैनेजर—ब्रह्मप्रेस इटावा।

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

ब्राह्मणसर्वस्व के नियम ।

(१) ब्रा० स० प्रतिमास प्रकाशित होता है ।

(२) डाकव्यय सहित इसका वार्षिक मूल्य ३) है और नगर के ग्राहकों से २॥) रु० लिया जाता है ।

(३) नमूने की प्रति कार्ड आने पर मुफ्त भेजी जाती है ।

(४) आगामी अङ्क पहुँच जाने तक जो पिछला अङ्क न पहुँचने की सूचना देंगे उन्हें पिछला अङ्क बिना मूल्य मिलेगा, देर होने पर ≡) प्रति के हिसाब से मूल्य लिया जावेगा ।

(५) राजा रईस लोगों से उनके गौरवार्थ वार्षिक ५) रु० लिया जाता है ।

(६) पता अधिक काल के लिये बदलवाना चाहिये थोड़े दिनों के लिये अपना प्रबंध डाकखाने से कराना चाहिये ।

ब्राह्मणसर्वस्व में विज्ञापन ।

ब्राह्मणसर्वस्व का प्रचार सब देशों में तेजी से बढ़ रहा है । वर्मा, दक्षिण अफ्रीका, जावा सुमात्रा और कनाडा तक में इस के ग्राहक हैं विज्ञापन छपाने के नवीन नियम ये हैं ।

कवर का दूसरा पृष्ठ		(एक बार)	६)
”	एक कालम	”	४)
”	तीसरा पृष्ठ	”	६)
”	एक कालम	”	४)
”	चौथा पृष्ठ	”	८
”	एक कालम	”	५)

अन्य साधारण स्थानों के नियम ये हैं ।

एक पृष्ठ या दो कालम की छपाई प्रतिमास			४)
½ पृष्ठ या एक कालम की	”	”	३)
¼ पृष्ठ या आधे कालम की	”	”	२)
⅛ पृष्ठ या ¼ कालम की	”	”	१

अधिक दिनों के लिये पत्र द्वारा तै करलें ।

धातु पुष्टि की अद्वितीय दवा ।

"जाड़े में मजेदार जलपान,
खाय बूढ़ा तो होय जवान"

दिल दिमाग बल वीर्य वर्धक !!!

वीर्यराज मोदक ।

क्या ! मेवा मिश्रित स्वादिष्ठ पुष्टई है । इस के थोड़े ही दिनों के सेवन से देह में नयी कांति झलकने लगती है । वीर्य को शुद्ध कर गाढ़ा तथा लसीला बनाता है । धातुक्षीणता, स्वप्नदोष, शीघ्रपतन और नामर्दी को दूर कर शरीर को हृष्ट पुष्ट बलिष्ठ बनाता है १) में १६ लड्डू ।

पता—आयुर्वेदाचार्य आ० महोपाध्याय
पं० श्री धर्मनाथ मिश्र काव्यतीर्थ
भास्कर महौषधालय, दानापुर कैन्ट ।

लूटिये ! लूटिये !! लूटिये !!!

आधा दाम कर दिया ।

प्रिय पाठक गण पुराणांक की खुशी में केवल ब्राह्मणसर्वस्व के ग्राहकों के लिये हमने अपनी रचित पुस्तकों का आधा दाम कर दिया है अब आप शीघ्र ही मन मोहक पुस्तकें मंगा लीजिये । क्योंकि बहुत थोड़ी प्रतियाँ रही हैं ।

पुस्तक नाम	प्रथम दाम	अब
पूर्ण भक्त नाटक (३ भाग)	।॥)	।≈)
आदर्श पशमावंती नाटक	॥)	।)
भक्त प्रह्लाद नाटक	।)	=)
भक्त सूरदास नाटक	॥)	।)
सती शीलवंती	–)	–)
भजन माला	≡)	–)॥

पुस्तक मिलने का पता—

कविरत्न स्वामी बुद्धिचन्द्रपुरी "हिमकर"
श्री रामेश्वर पुस्तकालय ऊबावड़ा पो० गर्दै
तहसील शुजाबाद जिला मुलतान

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

'५०००) की चीज़ ५) में'

मेस्मिरेज़म विद्या सीख कर धन व यश कमाइए।

मेस्मिरेज़म के साधनों द्वारा आप पृथ्वी में गड़े धन या चोरी गई चीज़ का क्षण मात्र में पता लगा सकते हैं इसी विद्या के द्वारा मुकद्दमों का परिणाम जान लेना, मृत पुरुषों की आत्माओं को बुलाकर वार्तालाप करना, बिछुड़े हुये स्नेही का पता लगा लेना, पीड़ा से रोते हुए रोगी को तत्काल भला चँगा कर देना, केवल दृष्टि-मात्र से ही स्त्री पुरुष आदि सब जीवों को मोहित एवँ वशीकरण करके मन माना काम कर लेना आदि आश्चर्य-प्रद शक्तियाँ आ जाती हैं। हमने स्वयँ इस विद्याके ज़रिये लाखों रुपये प्राप्त किये और इसके अज़ीब २ करिश्मे दिखा कर बड़ी २ सभाओं को चकितकर दिया। हमारी "मेस्मिरेज़म विद्या" नामक पुस्तक मँगाकर आप भी घर बैठे इस अद्भुत विद्याको सीखकर धन व यश कमाइये। मय डा० म० मू० सिर्फ ५) रु०।

हज़ारों प्रशंसा पत्रों में से एक।

बाबू सीतारामजी बी० ए०, बड़ा बाजार कलकत्ता से लिखते हैं—मैंने आपकी "मेस्मिरेज़म विद्या" पुस्तक के ज़रिये मेस्मिरेज़मका खासा अभ्यास कर लिया है। मुझे मेरे घर में धन गड़े होने का मेरी माता द्वारा दिलाया हुआ बहुत दिनों का सन्देह था। आज मैंने पवित्रता के साथ बैठकर अपने पितामह की आत्माका आवाहन किया और गड़े धन का प्रश्न किया। उत्तर मिला "ईंधन वाली कोठरी में दो गज गहरा गड़ा है।" आत्मा का विसर्जन करके मैं स्वयं खुदाई में जुट गया। ठीक दो गज की गहराई पर दो कलसे निकले, दोनों पर एक २ सर्प बैठा हुआ था। एक कलसे में सोने चांदी के जेवर तथा दूसरे में गिन्नियां व रुपये थे। आपकी पुस्तक 'यथा नाम तथा गुण' सिद्ध हुई।

मंगाने का पता—मैनेजर, मेस्मिरेज़म हाउस नं० १० अलीगढ़।

अवश्य पढ़िये.

ब्रह्मप्रेस इटावा में—

शुद्ध सुन्दर और सस्ती छपाई हर तरह के बिल, चिक, लेबिल रसीद, निमन्त्रण कार्ड लिफाफे, वगैरह पुस्तकें, मासिकपत्र आदि। इकरङ्गा, दुरङ्गा, तिरङ्गा, काम हिन्दी उर्दू अंगरेज़ी में वादे पर छापकर देते हैं। नमूना भेजकर छपाई दर्याफ्त कर लें। कागज कार्ड लिफाफे आदि स्टेशनरी का सामान व सब तरह की स्याहियां मौजूद रहती हैं एक बार परीक्षा प्रार्थनीय है।

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi